शोधशौर्यम्

ISSN - 2581-6306

Peer Reviewed and Refereed
International
Scientific Research Journal

website : www.shisrrj.com

SHODHSHAURYAM
INTERNATIONAL SCIENTIFIC REFEREED
RESEARCH JOURNAL

Volume 5, Issue 2, March-April-2022

Email: editor@shisrrj.com, shisrrj@gmail.com

शोधशौर्यम्

Shodhshauryam

International Scientific Refereed Research Journal

[Frequency: Bimonthly]

ISSN : 2581-6306

Volume 5, Issue 2, March-April-2022

International Peer Reviewed, Open Access Journal
Bimonthly Publication

Published By
Technoscience Academy

Website URL : www.technoscienceacademy.com

Advisory / Editorial Board

Advisory Board

- **Prof. Radhavallabh Tripathi**
  Ex-Vice Chancellor, Central Sanskrit University, New Delhi, India
- **Prof. B. K. Dalai**
  Director and Head. (Ex) Centre of Advanced Study in Sanskrit. S P Pune University, Pune, Maharashtra, India
- **Prof. Divakar Mohanty**
  Professor in Sanskrit, Centre of Advanced Study in Sanskrit (C. A. S. S.), Savitribai Phule Pune University, Ganeshkhind, Pune, Maharashtra, India
- **Prof. Ramakant Pandey**
  Director, Central Sanskrit University,Bhopal Campus.Madhya Pradesh, India
- **Prof. Parag B Joshi**
  Professor & OsD to VC, Department of Sanskrit Language & Literature, HoD, Modern Language Department, Coordinator, IQAC, Director, School of Shastric Learning, Coordinator, research Course, KKSU, Ramtek, Nagpur, India
- **Prof. Sukanta Kumar Senapati**
  Director, C.S.U., Eklavya Campus, Agartala, Central Sanskrit University,Janakpuri, New Delhi, India
- **Prof. Sadashiv Kumar Dwivedi**
  Professor, Department of Sanskrit, Faculty of Arts, Coordinator, Bharat adhyayan kendra, Banaras Hindu University, Varanasi Uttar Pradesh, India
- **Prof. Dinesh P Rasal**
  Professor, Department of Sanskrit and Prakrit, Savitribai Phule Pune University, Pune, Maharashtra, India
- **Prof. Kaushalendra Pandey**
  Head of Department, Department of Sahitya, Faculty of Sanskrit Vidya Dharma Vigyan, Banaras Hindu University, Varanasi, Uttar Pradesh, India
- **Prof. Manoj Mishra**
  Professor, Head of the Department, Department of Vedas, Central Sanskrit University, Ganganath Jha Campus, Azad Park, Prayagraj, Uttar Pradesh, India

- **Prof. Ramnarayan Dwivedi**
  Head, Department of Vyakarana Faculty of Sanskrit Vidya Dharma Vigyan, BHU, Varanasi, Uttar Pradesh, India
- **Prof. Ram Kishore Tripathi**
  Head, Department of Vedanta, Sampurnanand Sanskrit University, Varanasi, Uttar Pradesh, India
- **Dr. Pankaj Kumar Vyas**
  Associate Professor, Department- Vyakarana, National Sanskrit University (A central University), Tirupati, India

---

Editor-In-Chief

- **Dr. Raj Kumar**
  SST, Palamu, Jharkhand, India
  Email : editor@shisrrj.com

Associate Editor

- **Prof. Dr. H. M. Srivastava**
  Department of Mathematics and Statistics, University of Victoria, Victoria, British Columbia, Canada
- **Prof. Daya Shankar Tiwary**
  Department of Sanskrit, Delhi University, Delhi, India
- **Prof. Satyapal Singh**
  Department of Sanskrit, Delhi University, Delhi, India
- **Dr. Ashok Kumar Mishra**
  Assistant Professor (Vyakaran), S. D. Aadarsh Sanskrit College Ambala Cantt Haryana, India
- **Dr. Somanath Dash**
  Assistant Professor, Department of Research and Publications, National Sanskrit University, Tirupati, Andhra Pradesh, India

- **Dr. Raj Kumar Mishra**
  Assistant Professor, Department of Sahitya, Central Sanskrit University Vedavyas Campus Balahar Kangara Himachal Pradesh, India

---

Executive Editor

- **Dr. Sheshang D. Degadwala**
  Associate Professor & Head of Department, Department of Computer Engineering, Sigma University, Vadodara, Gujarat

---

Editors

- **Dr. Ekkurti Venkateswarlu**
  Assistant Professor in Education, Sri Lal bahadur Sashtri National Sanskrit University, (Central University), New Delhi, India
- **Rajesh Mondal**
  Department of Vyakarana, National Sanskrit University, Tirupati, Andhra Pradesh, India

---

Assistant Editors

- **Dr. Virendra Kumar Maurya**
  Assistant Professor- Sanskrit, Government P.G. College Alapur, Ambedkarnagar, Uttar Pradesh, India

---

International Editorial Board

- **Dr. Agus Purwanto, ST, MT**
  Assistant Professor, Pelita Harapan University Indonesia, Pelita Harapan University, Indonesia

- **Dr. Morve Roshan K**
  Lecturer, Teacher, Tutor, Volunteer, Haiku Poetess, Editor, Writer, and Translator
  Honorary Research Associate, Bangor University, United Kingdom

- **Vaibhav Sundriyal**
  Research Scientist, Old Dominion University Research Foundation, USA

- **Dr. Elsadig Gamaleldeen**
  Assistant Professor, Omdurman Ahlia University, Sudan

- **Frank Angelo Pacala**
  Samar State University, Samahang Pisika ng Pilipinas

- **Thabani Nyoni**
  Department of Economics Employers Confederation of Zimbabwe (EMCOZ) ,
  University of Zimbabwe, Zimbabwe

- **Md. Amir Hossain**
  IBAIS University/Uttara University, Dhaka, Bangladesh

- **Mahasin Gad Alla Mohamed**
  Assistant Professor, Kingdom Saudi Arabia, Jazan University, Faculty of Education - Female Section, Sabya

CONTENT

SR. NO	ARTICLE/PAPER	PAGE NO
1	**प्राचीन भारत में स्त्रियों की स्थिति का विश्लेष्ण :- ऋग्वैदिक काल से गुप्त काल तक** राहुल कुमार	01-04
2	**Antimicrobial Activity and Phytochemical Analysis of Cassia Glauca** Pramod Kumar Singh, Pushkar Pratap Tiwari	05-08
3	**Emancipation of Subaltern : A Discourse from Kabir** Ramesh Kumar	09-15
4	**मानस के संदर्भित भाव -डॉ जयशंकर शुक्ल** डॉ. जय शंकर शुक्ल	16-22
5	**A Study of Self Concept and Gender as Predictors of Career Maturity of Students Studying in High Schools** Snigdha Pandey	23-28
6	**प्राचीन संस्कृत नाटकों में वर्णित सामाजिक मूल्यों की समसामायिक परिप्रेक्ष्य में प्रांसगिकता** डॉ. रमेश चन्द्र टांक	29-46
7	**शिक्षा में कलाओं की अवधारणा** प्रो. अजय कुमार जैतली, हिना यादव	47-51
8	**जन आंदोलनकारी कविता** डॉ अर्चना त्रिपाठी	52-59
9	**स्वराज आन्दोलन में संस्कृत भाषा का अवदान** डा0 शालिनी साहनी	60-68
10	**मानव सभ्यता में धर्म का महत्त्व** नज़मी गौहर, डा॰0 देवनारायण पाठक	69-73
11	**Progress of Learning During The Reign of Akbar The Great(1556-1605) : A Review** Dr. Nazneen Farooqi	74-79
12	**आर्षग्रन्थों में शाप और वरदान की अवधारणा** डॉ. भोला नाथ	80-83

13	**भारतीयज्ञानपरम्परायां मानवविकासे संस्काराणां महत्त्वम्** डॉ. इक्कुर्ति. वेङ्कटेश्वर्लु	83-90
14	**मूल्य आधारित शिक्षा** डॉ० गिरीश कुमार वत्स	91-96
15	**मध्यप्रदेश में मेक इन इंडिया से विपणन चुनौतियों को कम करते हुये आत्मनिर्भर व्यापार की बढ़ती संभावनाएँ** शिवालिका सोहगौरा, डाॅ. एम. यू. सिद्दीकी	97-100
16	**मध्यप्रदेश में मेक इन इंडिया से विपणन चुनौतियों को कम करते हुये आत्मनिर्भर व्यापार की बढ़ती संभावनाएँ** पूजा शुक्ला, डाॅ. सतीश कुमार गर्ग	101-108
17	**सम्प्रत्यय अधिगम के तार्किक नियमों की जटिलता पर धनात्मक-ऋणात्मक संवर्ग अवधान के प्रभाव का प्रायोगिक अध्ययन** डॉ. अशोक कुमार	109-119
18	**समावेशात्मकशिक्षासमस्यायै संवैधानिकं प्रावधानम्** जयपालः	120-122
19	**कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में विभिन्न जाति वर्ग की बालिकाओं की शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन** प्रो0 रीता सिंह, राजकुमार सिंह	123-130

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

प्राचीन भारत में स्त्रियों की स्थिति का विश्लेषण :- ऋग्वैदिक काल से गुप्त काल तक

राहुल कुमार
विभाग इतिहास
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय ,अमृतसर

Article Info
Volume 5, Issue 2

Page Number : 01-04

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Received : 01 March 2022
Published : 05 March 2022

जब से इस सृष्टि पर मानव सभ्यता का आरम्भ हुआ तब से ही स्त्रियों ने समाज के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी भुमिका है | सिन्धु सभ्यता के अवशेषों से हमें नृत्य करती स्त्री की मूर्ति प्राप्त हुई | इस मूर्ति को देख कर यह प्रतीत होता है कि उस समय से ही स्त्रियों को समाज ने नाच गान की अनुमति दे रखी थी | प्राचीन भारतीय समाज में स्त्रियों को पुरूषों के बराबर सम्मान दिया गया | प्राचीन भारतीय इतिहास में स्त्रियों को पुरूषों के समान समाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक क्षेत्र में बराबर का अधिकार मिला | वैदिक काल के समाज में स्त्री तथा पुरुष को एक समान माना क्योंकि दोनों ही एक दुसरे की पारिवारिक और सामाजिक जरूरतों को पुरा करते थे | ऋग्वैदिक काल में पुत्री को दुहित्ति नाम से सम्बोधित किया जाता था क्योंकि पुत्री गाय का दुध निकलने का कार्य करती थी , इस साक्ष्य से पता चलता है कि वैदिक समाज में पुत्री को विशेष स्थान दिया गया |1 जैसे जैसे समय का पहिया घुमता गया हमें उतरवैदिक समाज में ऐसी स्त्रियों को वर्णन मिला जो जीवन भर अविवाहित रहीं तथा उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में युद्धो, शास्त्रार्थो में भाग लिया | ऐसी ही एक स्त्री थी जिसका नाम गार्गी था जिसने विदेह के राजा जनक के विशाल यज्ञ में याज्ञवल्क्य को अपने शास्तार्थ से परेशान कर दिया | 2 जैन तथा बौद्ध काल में स्त्रियों की स्थिति काफी हद तक अच्छी रही, स्त्रियों को संघों में शामिल किया गया | प्राचीन भारतीय इतिहास में स्त्रियों ने एक लडकी के रूप में एक बहु के रूप में एक माँ के रूप में नारी शक्ति के रूप का परिचय दिया है |

मुख्य शब्द :- स्त्री , दुहित्ति , मनुस्मृति , नियोग प्रथा ,द्रौपदी , आम्रपाली , कौटिल्य , सती प्रथा |

प्रस्तावना

प्राचीन भारत में स्त्रियों को दैवीय स्वरुप माना गया है | स्त्री को जनानी तथा अर्धांगिनी नाम से सम्बोधित किया जाता रहा है | मनुस्मृति में स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि जहां स्त्री की पुजा होती है वही परमात्मा वसते है और जहां स्त्री की पुजा नहीं होती वहा सभी कार्य विफल होते है |3 ऋग्वैदिक काल में संयुक्त परिवार व्यवस्था का प्रचलन था | परिवार में पुरुष का स्थान सबसे उच्च था , उसके बाद पुरुष की पत्नी का स्थान था | स्त्री परिवार को संजोय रखने तथा घर के अंदर और खेती का कार्य भी करती थी | उतर वैदिक समय में स्त्रियाँ युद्ध , सभाओं , रथों की दौड़ में भाग लेती थी जहा से यह प्रतीत होता है कि स्त्रियों को पुरूषों के बराबर अधिकार दिए जाते थे | उतर वैदिक काल में एक और स्त्री को सम्मान मिला तो दूसरी और समाज में मासिक धर्म के रक्त को गंदा समझा गया | समाज ने एक अपवित्र धारणा बना ली कि मासिक धर्म की स्थिति में स्त्रिया किसी भी यज्ञ में शामिल नहीं हो सकती |बौद्ध तथा जैन धर्म स्त्रियों को समान नजरों से देखता है वही दूसरी और बौद्ध तथा जैन संघो में स्त्री तथा पुरुष को एक दुसरे से शारीरिक दुरी बनाए रखने की चेतावनी देता है | ऋग्वैदिक काल से लेकर गुप्त काल की स्त्रियों ने अपने जीवन को घर की चारदीवारी तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि उन्होंने वर्तमान काल की स्त्रियों की तरह शिक्षा को भी अपने जीवन का अभिन्न अंग माना | प्राचीन भारत में ऋग्वैदिक काल से स्त्रियों की स्थिति अच्छी थी वही आगे चलकर स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आना शुरू हो गए जैसे कि शतपथ ब्राह्मण के अनुसार " एक निर्मल तथा पवित्र स्त्री वह है जो अपने पति को सभी सुख सुविधाए उपलब्ध करवाती है और लडकों को जन्म देती है और कभी किसी का अनादर नहीं करती है |

उदेश्य :-

1. प्राचीन भारत में स्त्रियों की शिक्षा का क्या स्रोत था क्या वह अध्ययन करती थी अध्ययन करती थी तो क्या गुरु कुल में जा कर शिक्षा ग्रहण करती थी |
2. प्राचीन काल में स्त्रियों की समाजिक राजनीतिक तथा आर्थिक क्षेत्र की भागीदारी के विषय में अध्ययन करना |

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

3 . प्राचीन भारत में स्त्रियों के मासिक धर्म के विषय में समाज की क्या सोच थी |

4 . प्राचीन भारत में सती प्रथा , शिशु हत्या , पर्दा प्रथा के विषय में अध्ययन करना |

साहित्य समीक्षा : -

1 . प्रो प्रोसुन धार **" चैलेंजेज ऑफ़ वीमेन एम्पावरमेंट इन इंडिया फ्रॉम एन्शियन्ट मॉडर्न टाइम "** यह शोध पत्र 2017 में प्रकाशित हुआ है जिसमे इन्होने प्राचीन , मध्यकालीन तथा आधुनिक काल की स्त्रियों की दशा के बारे में लिखा है | प्राचीन काल में सती के बारे में विस्तार से वर्णन किया है |

2 . प्रदीप एम . डी **" लाइफ ऑफ़ वीमेन इन इंडिया एन्शियन्ट टू मॉडर्न टाइम "** यह शोध पत्र 2018 में प्रकाशित हुआ जिसमे एम . डी महोदय लिखते है कि स्त्री परमात्मा द्वारा इस सृष्टि में भेजी गए सबसे बहुमूल्य देन है | प्राचीन काल में स्त्रियों के साथ भेद भाव नहीं किया जाता था परन्तु 19 शताव्दी आते आते स्त्रियों कि स्थिति दयनीय हो गई |

3 . सप्तर्षि सेनगुप्ता **" रेविन्डिंग द एन्शियन्ट पास्ट: सोशल कंडीशन डयुरिंग मौर्यन एम्पायर "** लिखते हैं कि मौर्य काल में स्त्रियों की स्थिति ऋग्वेदिक तथा उतर वैदिक काल से अलग थी | मौर्य काल में स्त्रियों ने शासकों की अंग रक्षिकाओ के रूप में कार्य किया तथा समाजिक और आर्थिक क्षेत्र में बढ़ चढ़कर भाग लिया |

4 . श्रीराम शर्मा **" गुप्त एवं हर्षकाल में महिलओं की दशा : चीनी यात्रा वृतांतों के विशेष विवरण के आधार पर एक विश्लेषण "**शोध पत्र में वर्णन करते है की गुप्त काल में स्त्रियों कि स्थिति में गिरावट आई तथा स्त्रियों को भोग विलास की वस्तु के रूप में देखा जाने लगा |

ऋग्वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति :-

इतिहासकारों द्वारा 1500-1000 ई०पू० तक के काल को ऋग्वैदिक काल माना गया है क्योंकि इस समय बहुत से ऋषियों द्वारा ऋग्वेद ग्रन्थ की रचना की गए | ऋग्वेद में 10 मण्डल हैं जिसमें उस समय के समाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त होती है | ऋवैदिक काल के अध्ययन से पता चला है कि उस समय स्त्रियों की स्थिति बहुत अच्छी थी | इस काल में स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने की खुली छुट थी उन्हें किसी भी प्रकार के समाजिक बंधन से मुक्त रखा गया | ऋग्वेद के बहुत से मंत्रो की रचना विशववारा , लोपामुद्रा, सिक्ता , घोषा आदि पंडिता स्त्रियों द्वारा की गई है |4 स्त्रियों को जहा ऋवैदिक काल में उच्च सम्मान मिला वही दुसरी तरफ उन्हें बहुत से अधिकारों से वंचित भी रखा गया | ऋग्वैदिक समाज में स्त्री को सम्पति का अधिकार नहीं मिला | पिता की मृत्यु के बाद घर के जेष्ठ पुत्र को सम्पति का मालिक माना गया | ऋग्वैदिक काल में स्त्रियों को विवाह करने का अधिकार दिया गया था उन्हें विवाह करने के लिए अपना वर स्वयं चुनने का अधिकार दिया गया था | ऋग्वेद ग्रंथ में स्त्रियों के प्रेम विवाह का प्रसंग भी देखने को मिलता है | ऋग्वैदिक समाज में स्त्री और पुरुष की विवाह की आयु क्रमशः16 – 17 वर्ष उल्लेखित की गई है |5 स्त्री तथा पुरुष दोनों यज्ञों में भाग लेते थे | यज्ञों में भाग लेने वाले पुरुष तथा स्त्री को एक खेत में दो जुड़े हुए बैलों के समान बताया गया है |6 ऋवैदिक काल में सती प्रथा का साक्ष्य हमें नहीं मिलता है | उस समय समाज में नियोग प्रथा और विधवा विवाह का वर्णन मिलता है |

उत्तरवैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति : -

उतरवैदिक काल उस समय को कहते है जिस समय सामवेद , यजुर्वेद , अथर्ववेद , उपनिषदों , ब्राह्मणों तथा आरणयकों की रचना हुई | इस काल में स्त्रियों की दशा में बदलाव देखा गया जिस प्रकार उन्हें ऋग्वैदिक काल में पुरूषों के समान बराबर का मिला परन्तु उतरवैदिक काल में उन्हें बहुत से अधिकारों से वंचित रखा गया | स्त्रियों को वेदों के अध्ययन और यज्ञों के अनुष्ठानों से वंचित रखा | उतरवैदिक काल में आर्यों का विस्तार बहुत बढ़े स्तर पर आरम्भ हुआ तथा 16 प्रमुख जनपदो का उदय हुआ | इस काल में स्त्रियों ने पशुओं को चराना, गाय का दुध निकलना , आटा पिसना , कपडों की रंगाई आदि करने का कार्य करना आरम्भ किया | स्त्रियाँ नाच गान , संगीत , चित्रकला आदि मनोरंजन युक्त कलाओं की शिक्षा भी ग्रहण करती थी | रामायण तथा महाभारत जैसे महाकाव्य में एक तरह माता सीता जी को अग्नि जैसा पवित्र दर्शाया गया वहीं उसकी दुसरी और महाभारत महाकाव्य में कौरवों द्वारा पांडवों की पत्नी द्रौपदी का चीर हरण किया गया | इन दोनों महाकाव्यों में स्त्रियों के स्वयंवर का उल्लेख मिलता है जैसे सीता स्वयंवर और द्रौपदी स्वयंवर | उतर वैदिक काल में स्त्रियों के मासिक धर्म को अपवित्र माना जाता था जो की आज के वर्तमान समाज में भी देखा जा सकता है | वैदिक साहित्य में मासिक धर्म का उल्लेख मिलता है तथा माना जाता है इंद्र ने एक बार विश्वरूप की हत्या कर दी तथा उसके मरने पर जो खून निकला उसका एक भाग स्त्री को दे दिया जो मासिक धर्म के रूप में स्त्री को झेलना पड़ा |7 उतर वैदिक काल में एकल विवाह तथा बहुपति विवह का वर्णन मिलता है जब द्रौपदी ने पांच पांडवों के साथ विवाह किया यह घटना बहुपति की और इशारा करती है | इस काल में वैश्यावृति समाज में उपस्थित थी , समाज वैश्याओं को सम्मान की नजरों से देखता था | उतरवैदिक काल के किसी भी साहित्य से पर्दा प्रथा का साक्ष्य नहीं मिलता | अथर्ववेद में सती प्रथा के

विषय में एक वाक्य मिलता है जिसमे लिखा है कि पति की मृत्यु के बाद स्त्री श्मशान घाट पर जाकर पति के साथ चिता पर लेट जाती है और सती होने का मन बना लेती है परन्तु उसके सगे सबंधी स्त्री को चिता से नीचे उतार लेते है |

जैन काल में स्त्रियों की स्थिति : -

जैन धर्म ऋग्वैदिक काल से ही भारतीय उपमहाद्वीप में अस्तित्व में रहा है | महावीर जैन के समय यह धर्म विख्यात हुआ | जैन काल के समय स्त्रियों ने घरों से निकलकर समाजिक आर्थिक तथा राजनितिक क्षेत्र में अपनी भागीदारी समाज के समक्ष रखी | जैन धर्म के प्रभाव के कारण बहुत सी स्त्रियों ने जैन धर्म को अपना लिया | चम्पा के शासक दधिवाहन महावीर स्वामी के भक्त थे , उनकी पुत्री चन्दना को महावीर ने जैन धर्म में दीक्षित किया तथा यह प्रथम स्त्री जो महावीर जैन की पहली भिक्षुणी बनी |8 जैन धर्म ग्रंथो द्वारा स्त्री को ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए स्त्री को खतरे के रूप में देखा गया | पहले पहल जैन धर्म स्त्रियों को अपने जैन संघों में शामिल नहीं करना चाहता था परन्तु महावीर जैन ने स्त्रियों को जैन संघ में शामिल किया | जैन काल में पुरुष और स्त्री दोनों जो जैन संघ में शामिल थे उन्हें ब्रह्मचर्य का पालन करना था जिसकी वजह से ही जैन संघों द्वारा स्त्रियों पर कठोर प्रतिबंध लगाए थे | जैन काल में स्त्रियाँ दिगम्बर सम्प्रदाए को अपनाने में संकोच करती रही क्योंकि इस सम्प्रदाए के लोग वस्त्र धारण नहीं करते थे जिस कारण से स्त्रियों ने कामवासना और लाज लज्जया से बचने के लिए इस धर्म से अपनी दुरी बनाए रखी | जैन धर्म ने स्त्रियों को सम्मान दिया तथा उन्नीसवीं तीर्थंकर मल्लीनाथ भी एक स्त्री थी जिसने जैन धर्म में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित किया |

बौद्ध काल में स्त्रियों की स्थिति : -

बौद्ध धर्म की स्थापना महात्मा बुद्ध द्वारा की गए | यह धर्म अहिंसा को मानता था तथा वैदिक साहित्य का विरोध करता था | बौद्ध काल में स्त्रियों की स्थिति काफी अच्छी थी उन्हें वे सभी कार्य करने की छुट थी जो पुरुष कर सकते थे | इस समय समाज में वैश्यावृति का बहुत काफी प्रचलन था और समाज वैश्याओं को अच्छी दृष्टी से देखता था | महात्मा बुद्ध ने आनंद के कहने पर स्त्रियों को बौद्ध संघ में शामिल किया परन्तु बुद्ध ने यह भी कहा कि स्त्रियों के बौद्ध संघ में शामिल करने से यह संघ जल्दी ही अपने पतन की और अग्रसर होगा | उन्होंने स्त्रियों को संघ में शामिल तो कर लिया परन्तु स्त्रियों पर संघों में अपने कठोर नियम भी लगाय जिस कारण स्त्रियाँ बौद्ध संघों में भी स्वतंत्र नहीं रह सकी | बौद्ध काल में एक ऐसी वैश्या जिसका नाम आम्रपाली था , उसने बौद्ध संघ को बहुत से दान दिए तथा बौद्ध धर्म में शामिल हुए | बौद्ध काल में राजकीय स्त्रियों ने भी अपने आप को स्वतंत्र घोषित किया तथा बौद्ध संघों में सम्मलित हुए ऐसी ही कुछ राजकीय स्त्रियाँ ये थी :-महाप्रजापति गौतमी , यशोधरा , नंदा तथा खेमा आदि |

मौर्य काल में स्त्रियों की स्थिति : -

मौर्य साम्राज्य प्राचीन भारत का सर्वप्रथम महानतम साम्राज्य था जिसकी सीमाए पुरे भारतीय उपमहाद्वीप तक फ़ैली हुए थी | मौर्य काल में जहां राजनितिक स्थिति अच्छी थी उसी प्रकार यहा स्त्रियों की स्थिति भी अच्छी थी | मौर्य काल में स्त्रियाँ शासकों के अंगरक्षकों के रूप में अपनी सेवाएँ प्रदान करती थी उन्हें इस कार्य के बदले राज्य से वेतन मिलता था | कौटिल्य अपने ग्रंथ अर्थशास्त्र में लिखते हैं कि इस समय स्त्रियाँ गुप्तचरों का कार्य करती था | मौर्य काल में स्त्री को अपने पास सम्पति और रुपए पैसे रखने का अधिकार था , अर्थशास्त्र स्त्री को 2000 पण रखने की अनुमति देता है |9 स्त्रियों को स्वतंत्र रूप से विवाह करने की अनुमति थी | अगर किसी पति पत्नी को विवाह के बाद तलाक लेना होता था तो वह तलाक ले सकते थे | समाज में विधवापुनर्विवाह प्रचलित था , विधवा स्त्री के सम्मान को ठेस नहीं पहुंचाई जाती थी | कौटिल्य लिखते है कि समाज दास प्रथा प्रचलित थी , स्त्रियों को भीं दास बनाया जाता था | दास स्त्री के गर्भवती होने पर मालिक को स्त्री के साथ सही व्यवहार करना होता था ,शिकायत मिलने पर मालिक को दंडित किया जाता | वैश्यावृति मौर्य काल में प्रचलित थी | राज्य की और से वैश्याओं की सुरक्षा की जाता थी जिसके बदले राज्य इनसे कर भी लेता था | वैश्याओं को रुपजीवा कहा जाता था , वैश्याओं को समाज में विवाह करने की आज्ञा भी थी और बहुत सी वैश्याओं ने वैश्यावृति को छोड़ कर विवाह सम्बन्ध स्थापित किए | मौर्य साम्राज्य के अभिलेखीय और साहित्य साक्ष्यों का अध्ययन करने पर कहीं भी सती प्रथा का जिक्र नहीं मिलता परन्तु यूनानी लेखक उतरपश्चिम प्रान्तों सती प्रथा का उल्लेख करते हैं |10 पर्दा प्रथा का उल्ल्लेख मौर्य काल में नहीं मिलता है |

गुप्त काल में स्त्रियों की स्थिति : -

गुप्त काल को प्राचीन भारतीय इतिहास में स्वर्ण युग के नाम से संबोधित किया जाता है | गुप्त काल के बहुत से अभिलेखीय और साहित्यक साक्ष्य हैं जो शासक वर्ग की जीवन गाथा के विषय से हटकर ग्रामीण लोगों की जीवन गाथा के बारे में वर्णन करते हैं | गुप्त काल में स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आई तथा उन्हें उपभोग की वस्तु के समान समझा जाने लगा | गुप्त काल में स्त्रियों को शुद्रों की तरह रामायण , महाभारत , पुराण सुनने और पढ़ने का अधिकार नहीं था | दुसरी ओर उच्च वर्गीय तथा शासक्रिय स्त्रियों ने राजनीति में अपना योगदान दिया | चंद्रगुप्त -2 की पुत्री प्रभावती ने वाकाटक शासक के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किया तथा राजनीति में अपनी स्थिति मजबुत की |11 दास प्रथा गुप्तकालीन समाज में पूरी तरह से हावी थी | स्त्रियों को भी दास बनाया गया , कुछ ऐसी भी स्त्रियाँ थी जो भुख से लाचार होकर दासियाँ बन गई | यह काम उन्हें मजबूरी में करना पड़ा |12 वैश्याओं की बात करे तो

यहाँ के समाज में वैश्याओं की स्थिति अच्छी थी | गुप्त काल में सर्वप्रथम सती प्रथा का अभिलेखीय साक्ष्य 510 ई० में भानुगुप्त के एरणअभिलेख से मिलता है | इस युग में बाल विवाह पर अधिक जोर दिया गया | देवदासी प्रथा जो मौर्य काल से प्रचलन में थी, इस युग में भी लोगों में यह प्रचलन में रही | गुप्त काल के प्रसिद्ध कवि कालिदास के मेघदूत से पता चलता है कि महाकाल मन्दिर में देवदासियों को रखा जाता था, लोग मन्दिरों को दान देने में विश्वास रखते थे जिस कारण से ये लोग अपनी पुत्रियों को भी मन्दिर को दान कर देते थे |13 नारद स्मृति के अनुसार गुप्त काल में स्त्रियों को सम्पति के अधिकार से वंचित रखा गया | गुप्त काल में समाजिक स्तर बहुत नीचे गिर चुका था जो स्त्रियाँ केवल पुत्रियों को जन्म देती थी समाज में उनको हींन दृष्टी से देखा गया, समाज तथा घर परिवार के लोग उन्हें कई तरह के ताने मार कर लज्जित करते थे |14 फाह्यान, हुंसाग जैसे चीनी यात्री गुप्त काल में भारत आए तथा इन्होंने पुर्ण रूप से गुप्त कालीन समाज में पर्दा प्रथा को नकार दिया |

निष्कर्ष : -

ऋग्वैदिक काल से लेकर गुप्त काल तक के उल्लेखित विवरण से यह पता चलता है कि प्राचीन भारत में स्त्रियों की स्थिति बहुत से उतार चढ़ाव देखे गए | ऋग्वैदिक काल में जहा एक तरफ स्त्रियाँ वैदिक साहित्य को लिखती पढ़ती वही गुप्त काल में उनको वैदिक साहित्य को पढ़ने की ही नहीं बल्कि सुनने तक की अनुमति नहीं थी | प्राचीन भारत स्त्री की देवीय स्वरुप में पुजा की गए परन्तु असल जिन्दगी तथा समाज ने स्त्री को शापित ही समझा गया | कई जगहों पर स्त्री को अपने चरित्र का परिचय देना पड़ा | इस समय स्त्री की तुलना एक जहरीले सर्प से की जाने लगी और विधवा होने पर स्त्री पर यह आरोप लगाया गया की इसने अपने पति को खा लिया | उच्च वर्गीय स्त्रियों का जीवन प्राचीन भारतीय समाज में अच्छा रहा , वे अपने पति के समान कंधे से कंधा मिला कर चलती रही परन्तु जैसे जैसे कालचक्र में परिवर्तन हुआ प्राचीन भारत में स्त्रियों की स्थिति काफी दयनीय हो गई |

सन्दर्भ ग्रन्थ :-

1. डी. एन. झा , प्राचीन भारत एक रूपरेखा , मनोहर पब्लिशर्स एंड डिसिट्रब्यूटसर्स, ISBN 81-7304-216-0, प्रकाशन -2016, पृष्ठ न०
2. उपिन्दर सिंह , प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहास , ISBN 978-81-317-7474-8 प्रथम मुद्रण 2017, पृष्ठ न०191.
3. मनुस्मृति 3.56
4. के.सी. श्रीवास्तव , प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति , प्रथम मुद्रण 1991, पृष्ठ न०88
5. रामशरण शर्मा , प्रारंभिक भारत का परिचय , ISBN 978-250-2651-8, प्रथम मुद्रण 2004, पृष्ठ न० 115
6. डॉ० जयशंकर मिश्र , प्राचीन भारत का समाजिक इतिहास , ISBN 978-93-83021-29-1 , पृष्ठ न०363
7. तैतिरीय संहिता 2.5.1
8. डॉ० जयशंकर मिश्र , प्राचीन भारत का समाजिक इतिहास , पृष्ठ न० 703.
9. ए. एल. बाशम , अद्भुत भारत ISBN 978-81-930093-4-5 , पृष्ठ न०126.
10. आर्य कॉम्पिटिशन टाइम्स भारतीय इतिहास , संकलन एवं सम्पादन -डॉ० प्रेम प्रकाश ओला , निर्मल कुमार आर्य तथा बी.एल. बजिया , पृष्ठ न०119.
11. डॉ०अल्तेकर , पोजीशन ऑफ़ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइज़ेशन , पृष्ठ न० 187.
12. डॉ० अन्विता , गुप्त काल में नारियों की स्थिति , पृष्ठ न० 46.
13. आर्य कॉम्पिटिशन टाइम्स भारतीय इतिहास , संकलन एवं सम्पादन -डॉ० प्रेम प्रकाश ओला, निर्मल कुमार आर्य तथा बी.एल . बजिया , पृष्ठ न०161.
14. याज्ञवल्क्य स्मृति 1/73.

Cite this Article

राहुल कुमार, "प्राचीन भारत में स्त्रियों की स्थिति का विश्लेष्ण :- ऋग्वैदिक काल से गुप्त काल तक ", Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal (SHISRRJ), ISSN : 2581-6306, Volume 5 Issue 2, pp. 01-04, March-April 2022. URL : http://shisrrj.com/SHISRRJ22124

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

Antimicrobial Activity and Phytochemical Analysis of Cassia Glauca

Pramod Kumar Singh, Pushkar Pratap Tiwari
Associate Professor Department of Chemistry Kamla Nehru Institute of Physical & Social Sciences Sultanpur, U.P., India

Article Info
Volume 5, Issue 2

Page Number : 05-08

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Accepted : 15 March 2022
Published : 30 March 2022

ABSTRACT - This study was performed to evaluate the antimicrobial activity of aerial parts of chloroform extract of Cassia glauca L. The chloroform exrtract of C. glauca were shown to possess an antimicrobial activity against two gram positive and two gram negative human pathogenic bacteria, viz. bacillus and Escherichia coli. The extract showed antimicrobial activity at all concentrations selected, but only the extract with the concentration of 300 µg/ml showed maximum antmicrobial activity against all the organisms. The comparable with standard control, ketokonazole used. The phytochemical analysis showed the presence of alkaloids, carbohydrates, fixed oils, fats, tannins, gum & mucilage, flavonoids, saponins, terpenoids, lignin and sterols. It is concluded that the antimicrobial activity showed by the plant was due to the presence of these phytochemicals. Further studies are highly needed for future drµg development.

Keywords: Mucilage, Cassia Glauca, Sterols and Chloroform Extract.

INTRODUCTION

Antibiotics are one of the most important weapons in fighting bacterial infections and have greatly benefited the health-related quality of human life since their introduction. The wide use of antibiotics in the treatment of bacterial infections has led to the emergence and spread of resistant strains (Dogruozet et al., 2008). Increasing development of drµg resistance in human pathogens as well as the appearance of side effect of synthetic drµgs need to developed new antimicrobial drµgs from natural sources. This situation has forced to search new antimicrobial substances in various sources like medicinal plants (Doshi et al., 2011; Tomoko et al., 2000). The medicinal plants are considerably useful and economically essential and it contain rich in a wide variety of secondary metabolites such as tannns, alkaloids and flavonoids, which have been found in vitro to have antimicrobial properties (Khan et al., 2009). The use of plant extract and phytochemical both with known antimicrobial properties are of great significance. In the past few years, a number of investigations have been conducted worldwide to prove antimicrobial activities from medicinal plants. A number of phytotherapy manuals have mentioned various medicinal plants for treating infectious diseases due to their availability, fewer side effects and reducded toxicity.

MATERIALS AND METHODS

Collection and drying of plant materials - Healthy aerial parts of the C. glauca (seeds, leaves) were collected from local area adjacent to sultanpur district. collected seed and leave authenticated by national

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

plant survey of botanical science at Allahabad. The seed and leaves was washed thoroμghly three times with purified water and once with distilled water. The plant materials were air shade dried and then powdered using electric blender to get a coarse powder. The powdered samples were kept in sealed containers for extraction purposes.

Antimicrobial Screening- The antimicrobial activity of the C. glauca extracts was determined by using disc diffusion method. Two gram positive bacteria and two gram negative bacteria were used for this study. The organisms were sub-cultured on Mueller Hinton Agar medium, incubatd at 37 ^{0}C for 24 h and stored at 4^{0}c in the refrigerator to maintain stock culture. Petri plates were prepared with 20 ml of sterile Mueller Hinton Agar (MHA) (HIMEDIA, Mumbai, India). The test cultures were swabbed on the top of the solidified media and allowed to dry for 10 min. the tests were conducted at three different concentrations at 80,100 and 1500 μg/ml respectively of the crude extract. The loaded discs were placed on the surface of the medium and left for 30 min at room temperature for compound diffusion. Negative control was prepared using respective solvent.

Table 1: Phytochemical investigation of Aerial parts of the C. glauca

Sl.	Constituents	Pet. Ether	Chloro-form	Ethyl acetate	Methanol
1	Alkaloids	-	+	-	+
2	Carbohydrate	-	-	-	+
3	Fixed oil & fats	+	-	-	-
4	a. Tannins	-	+	+	-
	b. Phenols	-	+	+	-
5	Gum & Mucilage	+	-	-	-
6	Flavonoids	-	+	+	+
7	Saponins	-	-	+	+
8	Terpenoids	-	-	-	-
9	Lignin	-	-	-	-
10	Sterols	+	-	-	-

RESULT AND DISCUSSION

Active compounds obtained from medicinal plants have been used to treat various ailments casued by microorganisms. Chemical process are alkaloids, phenolic compounds, flavanoids and tannins that may be evolved in plants. The Extractive values of aerial parts of C. glauca using different solvent showed petroleum ether 0.50, chloroform 1.00, ethyl acetate 2.10, methanol 2.50. It was found that chloroform extract aerial parts of the C. glauca contained Alkaloids, carbohydrartes, fixed oils, fats, tannins, gum & mucilage, flavonoids, saponins, terpenoids, lignin and sterols when compared with other three extract viz,.

petroleum ether, ethyl acetate and methanol. The results (table 1) showed that chloroform was the best solvent for extracting the effective antimicrobial substances from the medicinal plant C. glauca than the other three solvents. Therefore, the chloroform extract has been selected for investigating antimicrobial activity of C. glauca suggests that the extract contains the effective active phytochemical responsible for the elimination of microorganisms.

CONCLUSION

It is concluded based on the findings of the present study that the aerial parts of C. glauca shows higher. Phytochemical analysis showed that the antimicrobial activity. C. glauca was due to the presence of Phytochemical compounds like alkaloids, carbohydrates, fixed oils & fats, tannins, gum & mucilage, flavonoids, saponins, saponins, terpenoids, lignin and sterols when compared with other three extracts viz., petroleum ether, ethyl acetate and methanol. The extract of C. gluaca showed maximum zone of inhibition at the concentration of 300 µg/ml for microbial activity against microbial pathogens.

Acknowledgement: None

REFERENCES

1. Ali Rehamn, Latif and Adam (2002). Antimicrobial activity of leaf extract of Acalypha indica. Journal of India Medicinal plant, Volume 1, pages 503-508.
2. Bhalodia, N.R. and shukla, V.J. (2011) Antibacterial and antifungal activities from leaf extracts of Cassia fistula: an ethnomedicinal plant: J Adv Pharm Technol Res. Volume 2, Issue 2, Pages 104-109. Phid: 22171301 PMCid:3217694
3. Gaurav M. Doshi, Supriya S. Shidaye, Gayatri V. Aggarwal, Preeja P. Pillai Abhijeet B. Bhalerao, Sandhya K. Desai (2011). Antibacterial potential of Cassia auriculate flowers, J. Microbiol. Biotech. Res, Volume 1, Issue 3, Pages 15-19.
4. Harborne, J.B. (1998). Phytochemical Methods: A Guide to Modern Techniques of Plant Analysis, 2nd Edition, Pages 1-32, J.B. Harborne Publishers, London, Chappman & Hall.
5. Kainsa, S., Kumar, P. and Poonamrani (2012) Pharmacological potentials of Cassia auriculata and Cassia fistula plants: A revies, Pakistan Journal of Biological Sciences, Volume 9, Issue 15, Pages 408-417.
6. Khan, R., Islam, B., Akram, M., Shakil, S., Ahmad A., Ali, S.M., Siddiqui, M. and Khan, A.U. (2009). Antimicrobial activity of five herbal extracts against multi drug resistant (MDR) strains of bacteria and fungus of clinical origin, Molecules, Volume 14, Issue 2, Pages 586-597 PMid : 19214149.
7. Lachumy, S.J.T., Zuraini, Z. and Sasidharan, S. (2010) Antimicrobial activity and toxicity of methanol extract of Cassia fistula seeds, Research Journal of Pharmaceutical, Biological and Chemical Sciences, Volume 1, Issue 4, Pages 391.
8. Nihal Dogroz, Zuhal Zeybek, Ali Karagoz (2008). Antibacteral activity of some plant extract; Istanbul University Faculty of Science Journal of Biology, Volume 67, Issue 1, Pages 17-22.

9. Saranraj, P., Stella, D. and Samuel, S. (2010). Antibacterial potentiality of ethanol and ethyl acetate extract of Acalypha indica against human pathogenic bacteria. Journal of Ecobiotechnology, Volume 2, issue 7, Pages 23-27.
10. Senthi kumar, P.K, Reetha, D. (2011). Isolation and identification of antibacterial compound from the leaves of Cassia auriculata: European Review for Medical and Pharmacological Sciences, Volume 15, Issue 9, Pages 1034-1038. PMid 22013726
11. Shankara, B.E.R., Ramachandra, Y.L., Rajan, S,S., Preetham, J., Ganapathy, P.S.S. (2012). In vitro antibacterial activity of Terminalia chebula leaf gall extracts against some human pathogenic strains; International Current pharmaceutical Journal, Volume 1, Issue 8: Pages 217-220.
12. Sharmeen, R, Hossain, M.N., Rahman, M.M. Foysal, M.J. Miah, M.F. (2012). In-vitro antibacterial activity of herbal aqueous extract against multi-drug resistant Klebsiella sp. Isolated from human clinical samples; internation Current Pharmaceutical Journal, Volume 1, Issue 6, Pages 133-137.

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

Emancipation of Subaltern : A Discourse from Kabir

Ramesh Kumar
PhD Research Scholar, BBAU, Lucknow, U.P., India

Article Info
Volume 5, Issue 2
Page Number : 09-15

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Accepted : 15 March 2022
Published : 30 March 2022

Abstract- Bhakti movement emerged in medieval India against the exploitative social order. It challenged the prevailing hegemony of Brahmins and Mullah and similarly denounced the other social evils like religious dogmas, exploitative caste and immoral practices of the priests and the ruling classes. The Saint of Bhakti movement critiqued the dominant social order founded on oppression, humiliation, and exploitation. Scholars of the Bhakti movement criticised and offered an alternative to the prevalent social system envisioned of an egalitarian, democratic, and humanist society. This paper highlights the ideas of Kabir on which they condemned the prevalent social order and which were the major cause of oppression of subalterns, especially the marginal section of the society. This paper describes the ideas of Kabir, which are the inspiration for subaltern emancipation.

Keywords - Bhakti, Emancipation, Sufism, salvation, Subaltern.

Introduction:-During the Middle Age, various social, political, cultural and religious movements arose in India to bring people together peacefully. Bhakti movement played a significant role in this regard. When the world was in a state of disarray, chaos abounded and turmoil in every aspect of life, including politics, socio-economics, culture and religion. Then Bhakti movement attempted to restore the chaotic society of the time by promoting the hovel philosophy. Kabir was among them who played a leading role in the Bhakti movement. Kabir gave the idea of various social problems which were the cause of the poor condition of the general masses. His ideas varied from caste systems to economic systems. He emphasised the moral and spiritual highness of an individual. He harshly criticised all those practices impeding the growth and development of individuals and society at large. His ideas are more focused on society's social aspects, highlighting the discrimination and hypocritical practices of Hinduism.

Structure of Hinduism - The core of Hinduism is Chatuvarna system which is the essential character of Hindu society. From this structure, the notion of the Varna system merged (Sharma, 1987:33). Varna is different from caste groups. Varna provides an ideological framework, whereas caste is on-ground practice. It can be said that Varnas refer to broad divisions of Hindu society, whereas castes signify the occupational endogamous groups.

The Hindu hierarchical system contains the categories of Brahman, Kshatriya, Vaishya and Shudra. The Knowledge systems and social values are designed to uphold and sustain the superior status of

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

the higher Varnas. This ideology is generally known as Brahmanism, which created the notion of Dharma in India. This frame of ideology is designed to cater to higher Varnas' needs, and similarly, it damaged the existence of lower Varnas. The dichotomy has brought Bhakti tradition that questioned the hegemony of Brahmanism in India. The Bhakti movement revolted against the hierarchical social order, and it provided the spiritual right to subaltern strata of society to access religious scripture and participate in the Bhakti of God. In this way, lower sections got an opportunity to elevate their religious, spiritual and cultural status.

Genesis of Bhakti- Many Hindu sacred texts like The Bhagawat Gita, Bhagawat Purana, Bhakti Sutra of Narada, Shandilya and Ramayana etc., have thrown light on Bhakti, but the picture is obscure. None of them defined the concept of Bhakti in a proper manner (Tyagisananda, 2014:23). The term Bhakti was first mentioned and viewed in Svetasvatra Upanishad. The word Bhakti or "Bhaj" means faith, worship, attachment and adoration to God. The term Bhakti signifies the allegiance between the worshipper and the worshipped. Bhakti is love divined by the beam of knowledge (Carpenter,1921:244). Ramdhari Singh Dinkar mentions the initial example of Bhakti in the *Bhagawat Gita*, where Lord Krishna talks about bhakti in terms of *Shaswat*, *Bhagawat* and *Panchratra dharma.* (Dinkar 1956: 294).

Vaudeville argued with many motifs like Bhakti as personal devotion to one god popularised by the *Alwar Bhakti* saints of South India between the 5th and 9th century AD. In North, India, Bhakti was popularised by the disciples of Ramananda, such as Kabir, who used the local language for preaching. (Partin, Vaudeville, 1964: 191-201): Grierson (1910) defined *Bhakti* as having the primary meaning of *"adoration"*, while the related term *Bhagavata* (which the author always capitalises) means *"the Adorable One"* (in the sense of "One who is adored"). In this form of interpretation, Bhakti denoted a personal belief and attachment to a God.

Scholars like H.H. Wilson (1976), while discussing the Bhakti movement in India, emphasise “Krishna Bhakti”; thus “, Bhakti” was interpreted as an Indian version of Protestant Christianity by nineteenth-century missionaries. However, this form of Western interpretation of Bhakti is challenged by Indian scholars like Krishna Sharma, who has discussed that there are also many traditions of the Bhakti movement in India. She points out the correlation between ‘Krishna Bhakti” and the generic ‘Bhakti’ movement is a misnomer and argues that the Bhakti movement emerged against caste discrimination. This attracted massive participation of the masses in the emergent sects.

Indian society had many sects that worshipped their form of god. There are votaries’ from a particular divinity worshipping him as the supreme god. Devotion to a particular god and total surrender to him is termed Bhakti.

Vaudeville and Partin (1999) discussed a strong correlation between the influxes of Islamic groups into India with the rise of the Bhakti movement. They portrayed Bhakti as a liberal creed that provided a spiritual forum for people drawn from different castes. He cites the regional aspect evident in the variation of language and dialect of the teachings of the gospels. Along with the regional variations, the Bhakti movement was explicitly divided into two folds; namely, I) *Nirguna* and ii) *Saguna Tradition.* The former took a radical stand leading to the formation of various new and unorthodox sects.

Bhakti Movement and its Philosophy- Krishna Sharma (2000) argued that Kabir Das was the first person who has separated Nirguna Bhakti from Saguna Bhakti. Nirguna school of Kabir presents similar kind of phenomena *astika* and *Nastika*. First, make the distinction between the *Nirguna* and *Saguna Tradition-'The Saguna bhaktas had strengthened the existent sects and had supported the established socio-religious norms. As against this, the Nirguna bhaktas had taken a radical position and their teachings had led to the formation of new and unorthodox sects. The Bhakti movement, therefore, embodied the conservative and the liberal as well as the revivalist and reformist trends. It contained both conformism and dissent* (Prentiss. 1999:27). On the other hand, Max Weber (1967) stated that Saguni Bhakti liberated only the upper caste and excluded other sections of society, including women and Shudra. In contrast to Saguni, Nirguni Bhakti opens the door to all sections of society, including women, Shudra and the other non-privileged group of society. Max Weber further argued that Nirgun Bhakti is more liberal and rational; most saints come from the lower strata of the society, whereas Saguni is more conservative; most of the saints come from the upper strata of society**.** Kabirdas advocated Nirguna Bhakti which is also known as Gyanmargi path of Bhakti.

Kabir argued for a universal religion in which people from any class, irrespective of caste, creed or colour, could worship the Supreme Lord and find mental peace. Each religion's central message is to join with the Supreme. By serving one's fellowmen, one can find one's soul.

Only a real, selfless, tolerant, and compassionate person can think of others' well-being and aid those in need. These are the fundamental characteristics of humanism. A real Bhakta recognises his God in every atom in the universe. He senses the Adored God's presence all around him. Over time, the Bhakta's Bhakti power allows him to perceive the world in a completely new perspective.

Life of Kabir - Kabir occupied a unique position in Bhakti tradition in India. There was controversy about his birth and death. According to a legendry account, he was probably born in 1398 A.D. (Hedayetullah, 1977:1). According to one other scholar, he was born to a *Brahman'*s widow, and in society, it is considered unethical to bear a child with the widow. Therefore due to societal norms and values widow left her child on a lotus flower near a pond of Lahar Tara near Banaras (Singh, 2004:33). Niru and Nima, a Muslim weaver couple, found the child in a pond, and they took the child to their home and nurtured him and gave him the name of Kabir, "great", an epithet of Allah. (Keay, 1995:122-23).

Kabir did not affiliate himself with any major religions of their time, whether Hinduism or Islam. Instead, Kabir referred to himself as a Banarasi wearer. Since his foster parents were members of the Jogi caste, Saree wearers had recently converted to Islam (Dwivedi, 1976:29). He maintained a distance from organised religions by referring to himself as a son of both Allah and Ram. He stressed the flaws and strengths of both religions. Despite not having obtained formal education, he was a well-informed person.

Kabir belonged to lower strata and adopted his father's occupation of weaving. He lived a very simple life. He was married to Loui and had two children; his son named Kamal and a daughter named Kamali. He was the disciple of Ramananda. As there was controversy regarding his birth, there is also controversy about his death. However, according to a legend, he has died in Maghar in 1518 A.D. (Musin, 1943:187). It is believed that there was again a dispute among Hindus and Muslims about his cremation after death. Hindus wanted to cremate his body, and Muslims wanted to

bury his body. However, when the shroud was removed from his body, there was nothing to be found except a bunch of flowers. To pacify both religions' followers flower was equally divided into two parts among the Hindu and Muslim. Kabir's goal was to preach a religion of love that united all caste and creeds. Further, he rejected Hinduism and Islam, which was against the spirit of humanism and focused on the welfare of the individual. (Tarachand. (1946:121). His preaching is collected in the book known as *Bijak;* most of his preaching was also found in *Adi Granth* of the Sikh religion.

Contribution of Kabir- Kabir das is one of medieval India's most prominent and influential saints. In the beginning, Kabir focused on mysticism, which conceived that humans live their lives under the universe with one god, one humanity, and one faith. He claimed, Hinduism and Islam were the same and accurate. As a result, he refused to accept that religious differences exist among humans, such as Hindus and Muslims.

So, he never claimed to be a follower of a particular religion, sect or country, nor did he subscribe to any political or ideological school of thought. He felt himself to be Hindu as well as Muslim. He did not distinguish between any religious communities. Through Bhakti, he solely attempted to bring individuals from different religions together. He claims that ultimate truth reigns in supreme living beings because they all come from the same source of life and light.

"*Ram Rahim Ek Hai, Naam Dharai Dui*
Kahe Kabir Do Naam Suni Bhrami Pare Mat Koi
Krishna Karim Ek Hai, Naam Dharai Dui
Kahe Kabir Do Naam Suni Bhrami Pare Mat Koi'

(Singh: 2001:15)

(Ram and Rahim is the same person though they have different names. According to Kabirdas, it is a common misconception that Ram and Rahim are two unique beings. Both Krishna and Karim is the same person; the only difference is that they have different names. As a result, after knowing this, one should not make a mistake).

Kabir's view on religion automatically manifest in his gospel by the way he denounces meaningless ritual, show off, superstition, ostentatious activities, so his writing is evident that religion is not of pretence. However, he believed in the devotion of the mould. If Kabir denounced the evils of Hindu and Muslim religions, his purpose was not to despise religion, but here he criticised only the malpractices that were the cause of religion's exploitation.

His criticism of the Mullah Islamic religion is also astounding, like his criticism of Brahminical Hinduism. His criticisms are the same time, directed against the two collectively.

The one reads the Veda; the other does the qutba,
This one is a Maulana that one is a Panda:
They bear different names, but they are pots from the same clay!
Says Kabir, both have gone astray
And neither has found God.... The one kills a goat, the other slays a cow:
In quibbles they have wasted their life!

(Vaudeville, C., & Partin, 1964:193)

Kabir believed that religion is cognizant and not dependent on any ritual, but it should be open and accessible to all. The purpose of religion is to perform one's devotion with mind, word and deed,

which paves the way to the presidency and salvation of God. Those who take the shelter of religion and do not persecute other human beings and those who renounce all demerits find God. Kabir says further how one can get God in his gospel.

Kam Krodh, Trishna Tazai , Tahi Milai Bhgwan.

(One will get god only by leaving his lust, angriness and jealousy)

Hinduism or Islam was not Kabir's religion. Kabir's religion means to love and compassion. Nevertheless, practices like fasting, pilgrims, Namaz, ritual, prayer, these hypocrites have turned us away from religion. So, Kabir has criticised both religious practices as Kabir's idea depicted in translation by Tagore.

There is nothing but water at the holy bathing
Places; and I know that they are useless,
For I have bathed in them.
The are all lifeless, they cannot speak;
I know, for I have cried aloud to them.
The Purana and the Koran are mere words;
Lifting up the curtain, I have seen.
Kabir gives utterance to the words of experience;
And he knows very well that all other
Things are untrue.
(Tagore, 2005:50-51)

Hence, Kabir says that his religion is based on inner realisation and do not require any rituals and practices like holy bathing pilgrims and idol worship.

In the medieval age, saints were usually laymen and householders. Often, they were from Shudra or Untouchable castes. They were often uneducated and illiterate and always taught in the vernaculars. Ramananda is considered as the founder of the North Indian Sant tradition, but Kabir is undoubtedly its most famous spokesman. Kabir was one the famous personality among them. He believed in egalitarian society. He revolted against the mal practice of caste and Verna. Before the Kabir, the voice was raised against caste and Verna discrimination by Vaishnava and Alwar in the south and north India by Boudh-Sidh, Shaiv- Shakt. These voices were as loud as Kabir had. Kabir not only rejected the Verna and caste but also refused six Hindu schools of philosophy as Hess and Mcleod observed.

Kabir refused to acknowledge caste division or to recognise the authority of the six Hindu school of philosophy, nor did he set any store by the four division of life prescribed for Brahmans. He held that religion (dharma) without devotion (bhakti) was religion at all (adharma), and that asceticism, fasting and almsgiving had no value if not accompanied by adoration (bhajanas).

(Hess in Schomer and Mcleod 1987: 139n)

The caste system is the primary root cause of exploitation in the Indian social system. Lower caste and untouchable were denied ritual access to the sacred text and were also denied into the public sphere. Kabir harshly criticised the practice of caste-based hierarchy and discrimination and announced that they consider the talent or intelligence of saints and not their caste.

Bhakti movement as Emancipation means for subaltern- Gail Omvedt (2008) traces modernity in the Indian context from the Bhakti period. She argues that much before the arrival of colonial modernity, the Bhakti movement had emerged as a protest against the unjust society. The Bhakti saints all over India spoke vehemently against the hierarchical social order, exclusion and mindless rituals. There were also throwing light on the existing socio-economic condition of the society.

Likewise, V. Ragavan stated that *bhakti* is the "democratic doctrine which consolidates all people without distinction of caste, community, nationally, or sex" (Ragavan 1966:32). Similarly, Gail Omvedt discusses the "radical bhakti movement that had swept over northern and western India, bringing together women and men of low caste to proclaim equality and reject Brahmanical ritualism and caste hierarchy" (Omvedt 2003: 277). Rohini Mokashi- Punekar described bhakti As a "deeply spiritual and democratising movement" which is characteristically "revolutionary in spirit", and the focal point was "questing of the orthodox and repressive Brahminical understanding of Hinduism, that makes possible for the lower castes and women to give their religious aspirations, emphasising devotion and love, not knowledge as a means of salvation" (Punekar 2005:123-24). So, in this context, it can be said that Kabir liberated people by his philosophy.

In the context of Kabir-Panth, David N Lorenzen (2004) stated that there has been a vital component of social dissent in Kabir's teachings which was followed generally by the marginal section such as Shudras, Untouchables, and Tribal to express their refusal of certain aspects of hierarchical caste ideology. At the same time, their membership in the Kabir-Panth has fostered their real assimilation within that same society. It provided an opportunity to help them enhance their social status and positive self-image and self-confidence. He cites Jayant Lele's words, "the liberating moments of Bhakti tradition" (Lorenzen 2004: 268). It challenges the orthodox exploitative tradition and raises hope for the disadvantaged masses. However, the protest of the oppressed and resistance should not be underestimated. Therefore, in this context, the Emancipator vision was taken by Kabir.

Conclusion - So it can be said that Kabir was very much critical of malpractices of Hinduism and Islam, such as rituals, idol worship etc. At the same time, he harshly attacked bad social practices such as discrimination based on caste, class and gender and told to reform the social and religious life of the people. Therefore, Kabir's emphasis was on internalisation in oneself, and according to him, one should turn his attention away from the outside world that is harmful to their ethical, moral and spiritual cause. Kabir preached to his followers not to get into the trap of rituals and superstitious things, but they should follow a humanist approach in daily life. Kabir told his followers to keep one is away from illicit behaviour and bad habits like smoking, drinking, flesh-eating, etc. As a result, Kabir believes that man's religion is to understand the non-dual nature of existence. So he advocated oneness for all irrespective of religion and social status.

References

1. Aloysius, G. (2009). Demystifying Modernity: Notes Not so Tentative. Social Scientist, 37(9/10), 49-54.
2. Chand, T. (1946). Influence of Islam on Indian. Culture, Indian Press, Allahabad.
3. Dinkar, R. S. (1962). Sanskriti ke char adhyay. Lokbharati.

4. Ezekiel, I. A. (1966). Kabir: the great mystic. Radha Soami Satsang Beas.
5. Grierson, G. A. (1910); "Bhakti Marga", in Encyclopaedia of Religion and Ethics. Vol.2,
6. Hedayetullah, M. (1977). Kabir: the apostle of Hindu-Muslim unity. Motilal Banarsidass.
7. Hess, L., & Singh, S. (2015). The Bijak of Kabir. Motilal Banarsidass
8. K P Prentiss & K Pechilis. (1999). The embodiment of Bhakti. Oxford University Press .
9. Keay, F. E. (1995). Kabir and his Followers. Mittal Publications.
10. Mokashi- Punekar, Rohini. 2005. “On the Threshold: The Songs of Chokhamela.” In Eleanor Zelliot and Rohini Mokashi- Punekar, eds., Untouchable Saints: An Indian phenomenon,123-42. New Delhi: Manohar.
11. Musin,Fani,(1943) , Dabistan-i-Mazahib or School of Manners, tr. Sheba and Troyer,
12. Navayana Publishing, New Delhi.
13. Omvedt, G. (2008). Seeking Begumpura: The social vision of anticaste intellectuals.
14. Paris,.p. 187
15. Raghavan, V. 1966. The Great Integrators: The Saint- Singers og India . DELHI: Pulication Division, Govement of India.
16. Schomer, K., & McLeod, W. H. (Eds.). (1987). The Sants: studies in a devotional tradition of India. Motilal Banarsidass Publ.
17. Shah Gyansham.(1985). Ant- Untouchability Movement as, Caste. Caste Conflict on Reservation. Delhi.
18. Sharma, K. (1987). Bhakti and the Bhakti movement: a new perspective; a study in the history of ideas. Munshiram Manoharlal Publ.
19. Singh, G. (2004). The Sikh Religion. Cultural and Religious Heritage of India: Sikhism,
20. Singh, R. (2001). Review of “Selected couplets from The Sakhi in transversion” by Kabir. Babel, 47(4), 377-382.
21. Tagore, R. (2005) One Hundred Pomes of Kabir. Delhi.
22. Tyagisananda, S. (2014). Svetasvatara upanishad. Lulu Press.
23. Vaudeville, C., & Partin, H. B. (1964). Kabīr and Interior Religion. History of Religions, 3(2), 191-201. Published by: The University of Chicago Press.
24. Weber, M., & Gerth, H. (1967). The religion of India: The sociology of Hinduism and Buddhism. New Delhi: Munshiram Manoharlal.
25. Wilson, H. H. (1861). Essays and Lectures on the Religions of the Hindus: Selected Works, coll. and ed. Dr. Reinhold Rost 2 vols, 62, 253.

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

मानस के संदर्भित भाव -डॉ जयशंकर शुक्ल

डॉ. जय शंकर शुक्ल

विषय विशेषज्ञ, कोर एकेडमिक यूनिट, परीक्षा शाखा, शिक्षा विभाग, शिक्षा निदेशालय, पुराना सचिवालय राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली।

Article Info
Volume 5, Issue 2
Page Number : 16-22

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Accepted : 15 March 2022
Published : 30 March 2022

शोध सारांशिका - श्री रामचरित मानस गोस्वामी तुलसीदास द्वारा लिखित सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इस ग्रंथ में जीवन के बहुत सारे रहस्य और प्रक्रिया गत सत्य को आकार देने का काम किया गया है। यहां पर जीवन जीने के तरीके को स्पष्ट करने के लिए रचनाकार ने विविध संदर्भों को ग्रहण करके अपनी बात को करने का प्रयत्न किया है । साथ ही साथ गोस्वामी तुलसीदास जी का आग्रह है, कि हम जीवन जीने के लिए जब कभी भी सत्य के प्रति आग्रही होकर आगे की ओर बढ़ने का यत्न कर रहे हो तो ऐसे समय में हमें चाहिए कि हम तमाम अंतरविरोधों को एक तरफ रख कर के सच्चे मन से पवित्र आचरण का आश्रय लेकर आत्म साक्षात्कार की ओर आगे बढ़े। इस क्रम में हमें संसार में जीते हुए ही कमल के पत्ते की तरह जल से लिप्त न होने के सदृश जीवन यापन करना होगा। वास्तव में मानस जन सामान्य के साथ-साथ संतों का भी ग्रंथ है। संत से हमारा तात्पर्य जिसके शंकाओं का अंत हो गया। हम सभी संत बनने की प्रक्रिया में बढ़ते हुए निरंतर उस परम सत्य की खोज में लगे रहते हैं। हमारा अनुसंधान जैसे ही पूरा होता है, हम मौन हो जाते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी का श्रीरामचरितमानस इस अनुसंधान में हमारा सबसे बड़ा मार्गदर्शक है, ऐसा मेरा प्रबलमत है। प्रस्तुत शोध आलेख में इसी बात को बड़े ही भावपूर्ण तरीके से श्री रामचरितमानस की चौपाइयां और लोगों को लेकर स्पष्ट करने का प्रयास है।

बीज शब्द - व्याख्या, आशय, विवेचन, प्रासंगिक, प्रकरण, दृष्टिकोण, वक्तव्य, प्रशिक्षण, वातावरण, मानदंड, सकारात्मक, तात्पर्य, चौपाई, दोहा, सोरठा, छंद, वर्णन एवं विश्लेषण।

हम आज श्रीरामचरितमानस के एक प्रकरण के आधार को स्पष्ट करने का प्रयत्न करते हैं ,जहां पर गोस्वामी तुलसीदास द्वारा कुछ बातें स्पष्ट करने का यत्न किया गया है । वह यत्न कवि के द्वारा अपने मानदंडों पर किया गया है लेकिन पाठक के द्वारा पाठक के अपने दृष्टिकोण को लेते हुए उसके मानदंड बदल जाते हैं । इस तरह हम देखते हैं कि आपसी विमर्श में हमारे सामने जो बात निकल कर आती है उसमें उस आधार को जानना और समझना बेहद जरूरी है जिसके आधार पर यह बातें कही गई है और जिसके आधार पर इनका अर्थ किया जाना चाहिए। सामान्यत: किसी भी वक्तव्य का

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

अर्थ करने के संदर्भ में हमें यह ध्यान रखना होता है कि उसका अपना जुड़ाव, उसका अपना आधार तथा उसका अपना संदर्भ कहां से उसे जोड़ता है।

यहां पर भाषा ,भाव और विचार तीनों महत्वपूर्ण है । अर्थ के लिए प्रत्यक्ष, अनुमान और प्रमाण भी अत्यंत आवश्यक होते हैं। जब हम उक्त तीनों की ओर ध्यान देते हैं और उनके अंतर्संबंधों पर अपने विचार व्यक्त करने का प्रयत्न करते हैं , तो कवि के द्वारा मनोभाव को जानना और उस पर अपने आप को अभिव्यक्त करना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। यहां गोस्वामी तुलसीदास द्वारा सुंदरकांड में कही गई एक चौपाई के अंश पर अपनी बात रखने का प्रयत्न करता हूं। वस्तुत: चौपाई ,दोहा ,सोरठा, छंद के साथ-साथ श्लोकों का भी प्रयोग गोस्वामी तुलसीदास जी ने श्रीरामचरितमानस के लेखन में किया है। तत्कालीन समाज की अवधारणा को भी बहुत ही तरीके से व्यक्त करने का एक सकारात्मक कदम यहां पर दिखाई पड़ता है। श्री रामचरितमानस के सुंदरकांड मैं मानस कार द्वारा एक चौपाई कही गई है, जो इस तरह है-

ढोल गवार शुद्र पशु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।।*[1] श्रीरामचरितमानस,सुंदरकांड, लेखक -गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक- गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष- 2015

श्रीरामचरितमानस में मानस कार गोस्वामी तुलसीदास स्पष्ट रुप से कहते हैं कि ढोल गंवार शूद्र पशु और नारी यह सभी सिखाए जाने अथवा समझ प्रांतीय जाने अथवा प्रशिक्षण दिए जाने के अधिकारी है अर्थात इनका यह खाकी इन्हें किसी भी परिस्थिति घटना देश काल वातावरण के बारे में अच्छी तरह से व्यवहार बर्ताव एम उचित तिथि शिक्षा दी जाए उसके बारे में बताया जाए जिससे कि इनका व्यवहार इनका बताओ इनका प्रस्तुतीकरण उसके अनुरुप हो। वस्तुत: इस चौपाई में जो आधार प्रस्तुत किए गए हैं, वह है ढोल, गवार, शूद्र, पशु और नारी। यह 5 अवयव इसके होते हैं।दिए गए इन पांचों अवयवों के आधार ही शब्द के अर्थ, औचित्य, व्याख्या,आशय तथा विवेचन किए जाना ज्यादा प्रासंगिक होते हैं।

दरअसल..... ताड़ना एक अवधी भाषा का शब्द है..... जिसका अर्थ .... पहचानना .. परखना ,सीखना ,सिखाना या रेकी करना होता है.....!

इन पांचों के लिए जो एक शब्द का प्रयोग किया गया है , वह शब्द है ताड़ना। हम इस शब्द पर ही पहले आते हैं कि ताड़ना का अर्थ क्या होता है। जब ताड़ना शब्द का अर्थ निकालने की ओर हम आगे बढ़ते हैं तो सबसे पहले हमें यह ध्यान देना होता है कि ताड़ना किस भाषा का शब्द है। श्री रामचरितमानस किस भाषा में लिखी गई है। इसलिए जब हम किसी भी शब्द का अर्थ करने की और आगे बढ़े तो निश्चित तौर पर हमें यह ध्यान रखना होगा कि हम इसके मूल में जाए अर्थात जिस भाषा में लिखी गई है उस भाषा के आधार पर इसका अर्थ करने का प्रयत्न किया जाए।

जब हम भाषा के आधार पर इसका अर्थ करते हैं तो निश्चित तौर पर हमें वहां पर प्रचलित आंचलिक मान्यताओं की ओर देखना होता है। अवधी भाषा के मूल में इस शब्द का अर्थ करते हुए हम यह देखते हैं वहां पर यह कहा गया है कि ताड़ना अर्थात ताड़ लेना, जान लेना, सीख लेना, समझ लेना, बता देना, जता देना तथा सिखा देना। आगे निश्चित तौर पर अवधी में हम यह कह सकते हैं कि हमने इस बात को ताड़ लिया,जान लिया समझ लिया सीख लिया या सिखा दिया।

इसके विपरीत कुछ लोग इस चौपाई का और इसके शब्दों का अपनी बुद्धि और अतिज्ञान के अनुसार ..... विपरीत अर्थ निकालकर महाकवि गोस्वामी तुलसी दास जी और उनके महाकाव्य रामचरित मानस पर आक्षेप लगाते हुए अक्सर नकारात्मक रूप से दिखाई पड़ जाते है....!

सबसे पहले इसी ग्रंथ श्रीरामचरितमानस के पूर्व के और पश्चात के प्रसंगों में संदर्भ के अनुसार इसके रचनाकार गोस्वामी तुलसीदास द्वारा वक्तव्य को आधार मानते हैं और देखते हैं कि यह बेहद ही सामान्य समझ की बात है

..... अगर गोस्वामी तुलसी दास जी स्त्रियो से द्वेष या घृणा करते तो.....।

रामचरित मानस में उन्होने स्त्री को देवी समान क्यो बताया...?????

और तो और.... तुलसीदास जी ने तो नारियों के प्रति अपनी भावना का प्रकटन करते हुए उन्हें मातृ संस्था के रूप में स्थापित करते समय उनके बारे में विशद विवेचन जो किया है वह अत्यंत ही पवित्र एवं आदर्श की स्थिति को प्राप्त है

"एक नारि ब्रत रत सब झारी।

ते मन बच क्रम पति हितकारी।"[*2] श्रीरामचरितमानस,सुंदरकांड, लेखक -गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक- गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष- 2015

इस चोपाई में गोस्वामी तुलसीदास जी स्पष्ट रुप से कहते हैं कि उस समय के पुरुष की अपने निष्ठा समर्पण एवं लगाओ एक पत्नी व्रत के आधार पर एक ही स्त्री के प्रति होता था और वह उसी में व्रत रहते थे अर्थात उसी में सल्लम संत रहते थे और चित्र नारियों की लिए कहा गया है कि वे भी एक ही पुरुष के प्रति मन वाणी और कर्म से समर्पित धोती थी रखा उसका खंड के जीवन एवं व्यवहार के आधार को दृष्टि का करते हुए यह तस्वीर। अर्थात, मानस कार गोस्वामी तुलसीदास जी के अनुसार श्री रामचरितमानस की रचना प्रक्रिया में उस समय के मान्य परंपराओं के आधार पर नारी–पुरुष के विशेषाधिकारों को न मानकर..... उस कॉल खंड में स्त्री पुरुष दोनों को एक निश्चित आधार पर अपने आप को स्थापित करते हुए दोनों को समान रूप से एक ही व्रत पालने का आदेश दिया है।

साथ ही ..... मानस कार के अपने विवरण वर्णन एवं विश्लेषण में श्री रामचरितमानस की नायिका परांबा जगत जननी सीता जी की परम आदर्शवादी महिला एवं उनकी नैतिकता व्यावहारिकता सकारात्मकता स्वीकार्यता एवं सहजता का चित्रण....उर्मिला के विरह वियोग निष्ठा समर्पण और त्याग का चित्रण..... यहाँ तक कि.... लंका से मंदोदरी के अपने परिवार एवं कुल के प्रति जागरूकता अपनी आशंकाओं को लेकर के अपने पति को सावधान करने का कार्य तथा अपनी भूमिका के प्रति सदैव स्वस्थ एवं सजग रहने की आदत और त्रिजटा का उसकी समाज नारी एवं उसकी अस्मिता के प्रति लगाव का चित्रण भी गोस्वामी तुलसीदास जी के अनुसार श्री रामचरितमानस में वर्णन सकारात्मक ही है ....!

सिर्फ इतना ही नहीं..... मानस कारने मानस कारने हनुमान जी के समुद्र पार करते समय लंका में प्रवेश के दौरान मिलने वाली महिला लंकिनी हो या उसके पूर्व उनसे मार्ग में मिलने वाली महिला सर्पों की माता सुरसा हो दोनों के प्रति उनका व्यवहार विचार एवं कार्य कहीं ना कहीं उनके आधार को स्पष्ट करता है। सुरसा जैसी देवी को भी हनुमान द्वारा माता

कहना..... मानस कार के अपने विवरण एवं व्याख्यान में भगवान राम के विमाता एवं भरत की माता कैकेई के प्रति उनका लगाव समर्पण सम्मान और मंथरा के प्रति आदर भाव भी तब सहानुभूति का पात्र हो जाती हैं..... जब, उन्हे अपनी ग़लती का पश्चाताप होता है ।

ऐसे में तुलसीदास जी के द्वारा श्री रामचरितमानस में प्रयुक्त शब्द ताड़ना का अर्थ..... स्त्री को पीटना अथवा प्रताड़ित करना है.....आसानी से स्वीकार नहीं होता.....!

ममता रत सन ग्यान कहानी।

अति लोभी सन बिरति बखानी॥

क्रोधिहि सम कामिहि हरिकथा।

ऊसर बीज बएँ फल जथा॥2॥*[3] श्रीरामचरितमानस,सुंदर कांड, लेखक –गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार–हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक– गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष– 2015भावार्थ:–ममता में फँसे हुए मनुष्य से ज्ञान की कथा, अत्यंत लोभी से वैराग्य का वर्णन, क्रोधी से शम (शांति) की बात और कामी से भगवान् की कथा, इनका वैसा ही फल होता है जैसा ऊसर में बीज बोने से होता है (अर्थात् ऊसर में बीज बोने की भाँति यह सब व्यर्थ जाता है)॥2॥

साथ ही ... हमें मानस कार के दृष्टिकोण को आसानी से समझते हुए इस बात का भी ध्यान रखना आवश्यक है कि.... तुलसी दास जी.....द्वारा अपने कालजई महाकाव्य श्री रामचरितमानस में शूद्रो के विषय मे तो कदापि ऐसा लिख ही नहीं सकते क्योंकि.... उसी मानस में उनके द्वारा अपने प्रिय महानायक प्रिय राम द्वारा शबरी.....निषाद....केवट आदि से मिलन के जो सहज उदाहरण है..... वो तो उनके मंतव्य के प्रति और कुछ ही दर्शाते है .....!

तुलसी दास जीने मानस की रचना अवधी में की है और प्रचलित शब्द ज़्यादा आए हैं, इसलिए "ताड़न" शब्द को संस्कृत से ही जोड़कर नहीं देखा जा सकता..... बल्कि इसका अर्थ करने के लिए हमें उसी आंचलिक भाषा में वहां प्रचलित शब्दावली एवं वहां के दृष्टिकोण को लेकर चलना होगा तभी हम इसका सही अर्थ सही संदर्भ में कर पाएंगे!

फिर, यह प्रश्न बहुत स्वाभिविक सा है कि.... श्री रामचरितमानस के लेखक द्वारा अपने महाकाव्य में वर्णित चौपाई के आधार पर आखिर इसका भावार्थ है क्या....?????

यह प्रकरण अपने आप में बहुत विशिष्ट के और यहां पर अर्थ करने के लिए हमें शब्द के गुण शब्द की शक्तियां व्याकरण चीन ने एवं कथक कत्थक संबंध पर भी ध्यान रखना होगा। इसे ठीक से वास्तविक आधार के साथ समझाने के लिए..... मैं आप लोगों के सामने हिंदी भाषा के एक ऐसे वाक्य का उदाहरण देना चाहूंगा जिसमें आपस में व्याकरण चिन्हों के बदलाव अथवा अक्षरों के हेरफेर से पूरे वाक्य के भावार्थ के बदल जाने का एक उदाहरण देना चाहूँगा .....

मान लेते है कि .....

एक वाक्य है.....

"" भावनात्मक आधार पर असहमत लोगों को कारागार में **बंद रखा गया है** ""

दूसरा वाक्य .... "" भावनात्मक आधार पर असहमत लोगों को कारागार में **बन्दर खा गया है** ""

पहला वाक्य"""""**उसे छोड़ो, मत परेशान करो।**

दूसरा वाक्य """"**उसे छोड़ो मत, परेशान करो**""""

हालाँक ऊपर ऊपर दिए गए दोनों वाक्यों में ... उनके अक्षर समन्वय के साथ व्याकरणिक चिन्हों में पूरी तरह एकरूपता रखने का प्रयास किया गया हैं..... लेकिन.... अक्षरों के साहचर्य एवं व्याकरणिक चिन्हों के स्थान परिवर्तन के आधार पर दोनों वाक्यों के भावार्थ पूरी तरह बदल चुके हैं...!

ठीक ऐसा ही रामचरित मानस की इस चौपाई के साथ हुआ है..... क्योंकि जब हम इस चौपाई का अर्थ करने जाते हैं तो इसके ठीक पहले इसी चौपाई से जुड़ी हुई दूसरी चौपाई को जानना हमारे लिए बहुत जरूरी है जहां पर मानस कार श्री रामचरितमानस के इसी प्रकरण में गोस्वामी तुलसीदास जी लिखते हैं कि

तव प्रेरित मायाँ उपजाए।

सृष्टि हेतु सब ग्रंथनि गाए।।[*4] **श्रीरामचरितमानस,सुंदरकांड, लेखक -गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक- गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष- 2015**

यह घटना क्रम है एक प्रकरण है प्रस्तुति है जिसमें श्री रामचंद्र जी के कार्य व्यवहार के दृष्टि गत समुद्र स्वयं प्रस्तुत होकर कहते हैं यह प्रभु आपने बहुत अच्छा किया कि मुझे एक सीख प्रधान की एक शिक्षा दिया और इस शिक्षा में यह नियत है कि यह आपके मर्यादा के अनुकूल है अर्थात जब भी हम किसी से कोई अपेक्षा रखें या अपने प्रति अथवा समय समाज के प्रति किसी के व्यवहार बताओ भैया किसी भी तरह की हमारी अपनी कक्षा हो ऐसी स्थिति हमारा दायित्व बनता है कि उसे संबंध यह तो बताओ के बारे में एक आदर्श मानते आधार पर शिक्षक पिया जाए या उसे जागरुक बनाया जाए शिक्षक करने का अभिप्राय वाली यही नहीं है क्या उसको सिखाएं या उसके व्यवहार में इस तरह से परिवर्तन है तू उसके लिए आधार प्रस्तुत करें बल्कि यह हो सकता है कि समय गत अथवा जो हरकत स्थितियों में वह चीज को ना ध्यान कर पा रहा हो तो उसे उसके ध्यान में यह चीज़े लानी भी सीख से संबंधित है और वो सभी तुलसीदास जी ने अपने इस प्रकरण में इस्पात का पूरी तरह से ध्यान रखा है जो पिक्चर।किसी भी जगन लिखे गए प्रकरण में वाक्यों के अंतर्संबंध उनके अर्थ कथन के लिए अत्यंत आवश्यक होते हैं ऐसा नहीं होता कि हम एक शब्द उठा करके उसका स्वतंत्र अर्थ करने की और आगे बढ़े और वास्तव में जो अर्थ वहां जिस रूप में कवि द्वारा स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है उसे बिल्कुल भूल जाएं अगर ताड़ना का अर्थ प्रताड़ना या मारपीट से होता तो उस के संदर्भ में ऊपर के चौपाई में 'सिख' शब्द का प्रयोग क्यों किया जाता सिख शब्द से साफ साफ स्पष्ट होता है कि यहां सीखने ,जानने, बताने और जताने से ही इसका अभिप्राय है।

यहां पर संदर्भ और प्रकरण के साथ-साथ रचनाकार के मंतव्य के अनुसार भी यह ध्यान योग्य बात है कि उन्होंने जो कुछ भी लिखा है या जो कुछ भी कहा है या जो कुछ भी आगे स्पष्ट करने के क्रम में अपनी बात को रखने का यत्न करते हैं उनके विपरीत जाकर.... क्षुद्र मानसिकता से ग्रस्त ऐसे लोगो को..... निंदा के लिए ऐसी पंक्तियाँ दिख जाती है

.... परन्तु उन्हें यह नहीं दिखाई पड़ता है कि ..... उसी श्री रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास जी के ही अनुसार राजा दशरथ ने स्त्री के वचनो के कारण ही अपनी प्रतिबद्धता को सर्वोपरि रखते हुए तो अपने प्राण दे दिये....

और श्री रामचरितमानस में ही इस महाकाव्य के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास जी के अनुसार महाकाव्य के नायक श्रीराम ने स्त्री की रक्षा के लिए ही उस कालखंड के परम प्रतापी विद्वान शोधकर्ता रावण से युद्ध किया ....

साथ ही साथ....रामायण वर्णित अपने अपने विषय विचार प्रभाग के प्रत्येक पात्र द्वारा.... पूरी रामायण मे विभिन्न प्रकरणों में अपने विवेचन विश्लेषण एवं विवरण में वर्णनात्मक संवाद का आधार लेकर स्त्रियो का सम्मान किया गया और उन्हें देवी के समान बताया गया ..!

श्रीरामचरितमानस के मूल को देखते हुए गोस्वामी तुलसीदास जी के लेखन और विचार विनिमय के आधारों पर दृष्टिपात करने के उपरांत हम पाते हैं कि ये चौपाइयां उस समय उस विशेष आधार को लेकर कही गई है जब ... समुन्द्र द्वारा श्री राम की विनय स्वीकार न करने पर जब श्री राम क्रोधित हो गए..... प्रतिक्रिया स्वरूप श्री राम जी ने अपने आप को तैयार किया और समुद्र को सीख देने के लिए अपने तरकश से बाण निकाला ...! यहां यह ध्यान देने की बात है किया बाण सीख देने के लिए ही संधान किया गया अगर ऐसा न होता तो जिस व्यक्ति ने 3 दिन तक हमारे अनुनय विनय को अस्वीकार कर दिया उसके आने के 3 पदों के उपरांत ही हम उसी के मंतव्य के अनुसार उस संधारित तीर का प्रयोग करके उसे अभय दान न दे देते।

तब समुद्र देव .... उस समय के मर्यादा के अनुसार सीख पाकर श्री राम के चरणो मे आए.... और, श्री राम से क्षमा मांगते हुये अनुनय विनय करते हुए कहने लगे कि....

प्रभु आयसु जेहि कहँ जस अहई।

सो तेहि भाँति रहें सुख लहई।।*[5] **श्रीरामचरितमानस,सुंदरकांड, लेखक -गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक- गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष- 2015**

हे प्रभु – आपने अच्छा किया जो मुझे शिक्षा दी..... और ये ये लोग विशेष ध्यान रखने यानि .....शिक्षा देने के योग्य होते है .... ! यहां पर समुद्र ने बिल्कुल यह नहीं कहा है कि मुझे प्रताड़ित किया गया या मुझे दंडित किया गया है या कष्ट देने का उपक्रम किया गया उसने सीधे सीधे कहा कि मुझे सीख दिया गया तो सीख और ताड़ना दोनों एक दूसरे से जुड़ रहे हैं यहां पर। मानस कार का सहज भाव जो यहां दृष्टिगोचर होता है कि प्रभु संबोधन उसके लिए दिया जाता है जो सब पर समान रूप से अधिकार पूर्व विचार कर सके उसको रास्ता दे सके उसको अपने व्यवहार के प्रति जागरुक सके और ऐसे में समुद्र के द्वारा प्रभु श्री राम से कहना कि आपने मुझे सीख देकर बहुत अच्छा किया और आपके मर्यादा के अनुकूल है निश्चित रूप से समाज में व्याप्त विक्रम और व्यवहार और बताओ को लेकर के चल रहा ग्रहों का ही एक विशिष्ट परिप्रेक्ष्य को प्रदर्शित करता है। यह चौपाई जब हम सब संदर्भ के साथ रख यह तो उसके अर्थ और उसके विचार और विनय सुंदर होते उसका अर्थ और उसके विचार दोनों में हम बहुत अंतर भी पाते हैं।

कनक थार भरि मनि गन नाना।

बिप्र रूप आयउ तजि माना॥*[6] **श्रीरामचरितमानस,सुंदरकांड, लेखक -गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक- गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष- 2015**

भावार्थ:-प्रभु ने अच्छा किया जो मुझे शिक्षा (दंड) दी, किंतु मर्यादा (जीवों का स्वभाव) भी आपकी ही बनाई हुई है। ढोल, गँवार, शूद्र, पशु और स्त्री- ये सब शिक्षा के अधिकारी हैं।

रजनीकांत जी, अवधी भाषा में ताड़ना का अर्थ होता है देखना, समझना और समझाना ।

यदि किसी पशु से कोई गलती हो जाये तो उसे सजा नहीं दी जाती क्योंकि वह पशु है । ढोल का प्रयोग यहाँ मुनादी करवाने वाले से हैं.. यानि यदि मुनादी करवाने वाला कोई खबर ऐसी लाता है जो प्रजा को अनुचित लगे, तो उसे सजा नहीं दी जा सकती क्योंकि वह राजाज्ञा लेकर आया है राजा का सन्देश लेकर आया तो जो कुछ भी कहना है, विरोध करना है वह राजा से ही करना चाहिए । शूद्र यानि सेवक से कोई गलती हो जाये तो उसे भी सजा नहीं दी सकती क्योंकि वह आपका सेवक है और उसे समझाया जा सकता है । नारी पुरुष की जन्ननी भी होती है अर्धांगनी भी, बहन भी और साथी भी... तो उससे यदि कोई भूल हो जाए तो उसे भी समझाया ही जाना चाहिए, सजा नहीं दी जा सकती ।

तो उपोरोक्त सभी ताड़ना यानि समझाने के अधिकारी हैं । दूसरा अर्थ यह भी निकलता है कि उन सभी पर नजर रखनी चाहिए ताकि उनसे कोई भूल न हो जाए, कोई ऐसी गलती न कर बैठें जिससे परिवार या समाज या उसका स्वयं ही कोई अहित हो जाए ।

सन्दर्भग्रन्थ सूची

1. श्रीरामचरितमानस', लेखक –गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार–हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक– गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष– 2015
2. श्रीरामचरितमानस', लेखक –गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार–हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक– गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष– 2015
3. श्रीरामचरितमानस', लेखक –गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार–हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक– गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष– 2015
4. श्रीरामचरितमानस', लेखक –गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार–हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक– गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष– 2015
5. श्रीरामचरितमानस', लेखक –गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार–हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक– गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष– 2015
6. श्रीरामचरितमानस', लेखक –गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार–हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक– गीता प्रेस गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष– 2015

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

A Study of Self Concept and Gender as Predictors of Career Maturity of Students Studying in High Schools

Snigdha Pandey
MATS School of Education, MATS University Raipur (CG), India

Article Info
Volume 5, Issue 2
Page Number : 23-28

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Accepted : 15 March 2022
Published : 30 March 2022

Abstract - The findings of this research work makes it clear that gender is potential predictor of career maturity. The reason of the same may be attributed to the cultural factor. Under Indian cultural set up, the pattern of socialization for boys and girls are different. It may attributed to child rearing predictors of Indian society. The majority of boys is to choose a suitable career for themselves. In other words, it may be stated that boys are mainly career oriented whereas girls are expected to run a family after marriage. Parents give much importance to choose a suitable match for the daughters for females as marriage is expected to be the primary concern. Because of this orientation of boys and girls gender has played a crucial role in determining the career maturity of subjects. This work is systematic and scientific study in the field of career maturity. It will identify some important predictors of career maturity under the Indian context. The study is going to be helpful in counseling due to knowledge of career maturity factors that can effect adolescent students.

Keywords : Self Concept, Gender And Carrier Maturity.

Career Maturity plays an essential role in deciding the future of adolescents. In the present education system, career decisions start taking shape at pre - 10th stages, and it is expected that by the end of the +2 stage, a clear and distinct picture of career decisions would emerge. This is only possible when the adolescents are career conscious and aware of the different career options. The behavior, physical appearance, attributes, anxiety, popularity, happiness, satisfaction, intellectual and school status etc. of an adolescent student depending on his self-concept. Hence, the self-concept plays a significant role in adolescent life. During the process of growth and development, every individual acquires the awareness of his Self. He experiences his identity as somewhat different from that of others, impressions and feelings. It includes impressions one has of his body, the image of his physical appearance, and other tangible properties. It further includes the conception of himself, his traits and abilities, and his roles, including the possibilities of his future.

The present observation is conducted to conclude the effect of Self concept and Gender on carrier maturity. Observation is performed on one thousand students from different institutions. The stratified

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

random sampling technique is adopted to perform the study. As a result it is concluded that there is sufficient empirical and statistical evidence of the perfection effect of Self concept and Gender on carrier maturity. On the basis of the review of literature it was hypothesized that the adolescent students with high self-concept would show higher level of career maturity than the Ss with low level of self-concept. It was also hypothesized that the adolescents students gender would emerge predictors of career maturity. It is expected that males and females in comparison to show higher level or low level of career maturity. It was hypothesized that the Ss with high self concept and gender difference would show higher level of career maturity than the Ss with low self concept and aspiration.

Self concept and gender as a factor associated with career maturity operates differentially in different cultures. So Under Indian cultural set up self concept and gender as a determinant of career maturity might operate differentially than the other place. No such systematic study has yet been conducted. Since it has been demonstrated that different factors associated with career maturity operate differentially in different socio economic difference factors, race, culture and since study under Indian cultural set up, it is appropriate to investigate that whether or not self-concept and gender interaction with each other for differences in career maturity of class X adolescent students.

Introduction- Career maturity is a cognitive, emotional and other psychological factors whereby one acquires the capacity of making realistic and mature career choices. Career maturity is an individual ability to master certain career developmental tasks that are applicable to his life stage. It is extremely important to identify an individual's state of career maturity in order to give appropriate career guidance. Career maturity reflects an individual's readiness to make well-informed, age-appropriate career decisions and to shape his or her career carefully in the face of existing societal opportunities and constraints (King, 1989).

The career maturity includes: 1. Obtaining information about oneself and converting such information to self-knowledge; 2. Acquiring decision-making skills and applying them in effective decision-making. 3. Gathering career information and converting it into knowledge of the occupational world; 4. Integrating self-knowledge and knowledge of the occupational world; and 5. Implementing the obtained knowledge in career planning.

Career maturity is an individual's readiness to make well informed, age- appropriate career decision, and to shape one's career carefully. Although educational and vocational choices are made by an individual but they are certainly influenced by many social and environmental factors which include socio-economic status of the family, home and family environment, sex, age, rural and urban background psychological factors which may include intelligence, personality, achievement, motivation, interest, aptitude, self-concept academic achievement etc. Thus, career selection is not an exclusively intellectual process in which various possibilities are sorted out in a logical manner. Instead, decisions are based on the interaction of career maturity with various social or psychological factors. The role of psychosocial

variables like intelligence, socio-economic status, parental influence, school influence, needs and values as motivating factors in specific career preferences substantiated the beliefs concerning of adolescents.

Objectives of the Study

Based on the above facts following objectives are included in this research work-

1. To examine the relationship between self-concept and career maturity.
2. To examine the relationship between gender and career maturity.
3. To examine gender as the moderator on the relationship between self-concept and career maturity.

Hypothesis of the Study

Following objectives are included in this research work-

H_1: The self-concept would emerge as significant predictors of career maturity.

H_2: Gender would emerge as significant predictors of career maturity.

H_3: The gender would moderate the relationship between self-concept and career maturity.

Variable - The operational definitions of the variables of Interest are-

Career Maturity-In the study career maturity has been taken as criterion variable. Operationally career maturity has been defined as the maturity of attitudes and competencies that are realistic in career decision making at the particular development stage reached as the continuum of career development from early exploratory years to decline.

Self-Concept-Self-concept has been defined as the persons total review about himself/herself (Hamacheek, 1987). Operationally it has been defined as those perceptions, beliefs, attitudes and feelings which an individual views as part of characteristics of himself or herself. It is his/her own assumption of his/her health and physiques, intellectual abilities academic status, temperamental qualities, mental health, emotional tendencies and socio-economic status.

Gender- Here in this study males and females related each have been defined as gender. It has been taken in its socio-cultural context.

Tools- To measure the career maturity of subjects the Indian adaptation of Career Maturity Inventory (CMI) by Gupta (1989) was used. The inventory was originally constructed and standardized by Crites. It measures the maturity of attitudes and competencies that are critical in realistic career decision making. The item of the inventory are for the students of class IX and X. The attitudinal variables assessed by attitude scale are (i) decisiveness, (ii) involvement, (iii) independence, (iv) orientation, and (v) compromise in career decision-making. It has six independent dimensions- (a) attitudinal (b) self-appraisal, (c) occupational information (d) goal selection, (e) planning and (f) problem solving.

For measuring self-concept of the subject, Swatva Bodh Parikshan constructed and standardized by Sherry, Verma and Goswami (1988) was employed. The test is meant for measuring the self-concept of the school going adolescents of urban and rural areas. The test is intended to measure those perceptions, beliefs, attitudes and feelings which the individual views as part of characteristics of himself. It is his own conception of his health and physique, intellectual abilities, academic status, behaviour, temperamental qualities, mental health, emotional tendencies and socioeconomic status.

Procedure- Introductory interview with the participants was made at different school. They were aware about the objective of the research. Introductory interview, each participant was also illustrated the temperament of the research and the participants were illustrated about the privacy regarding acquaintance collected from them. They were urged to complete the questionnaire as per the instructions and after completion they returned the test and were acknowledged for their collaboration. In this research, Hierarchical multiple regression analysis used.

Population - In this research work, the meaning of Population is the Students from Urban, Semi-Urban and Rural area students studying in class $10^{th.}$ were included. The research done for 1000 students of class 10^{th} within the age range of 13 to 16 years were included. The stratified random sampling technique was used. Stratification was done on the basis of locality, English medium/ Hindi medium, and Government/Non-Government schools of Durg district Chhattisgarh. The students were of both medium English/Hindi. The sample employed in the study was drawn from the rural and urban adolescents population.

Result & Discussion

Self-concept, Gender and Various Components of Career Maturity

A Scrutiny of Table indicates that in the first model control factors (socio-demographic factors) explained 250.00% of Total variance(R^2 = 0.250; $F_{(8,991)}$ = 80.512; $p<0.01$). School of the participants (1= Government, 2 = Non-Government) was positively associated with attitudinal (0.116, $p<0.05$), which shows that participants from non-Government school reported high attitudinal.

Hierarchical regression models for the prediction effect of different predictors (dimension of career maturity)

Predictors	Model 1 β	Model 2 β	Model 3 β
School (1= Government, 2 = Private)	0.116*		
Age (1=13-14, 2 = 15-16)	0.208**		
Family (1= Nuclear, 2 = Joint)	-0.129*		
Medium (1= Hindi, 2 = English)	0.237**		
Local (1= Rural, 2= Semi-urban, 3= Urban)	0.275**		

Fathers Education (1= Pre-Primary, 2= Primary, 3= High School, 4= Higher Secondary, 5= Graduation, 6= Post-Graduation)	0.216**		
Mothers Education (1= Pre-Primary, 2= Primary, 3= High School, 4= Higher Secondary, 5= Graduation, 6= Post-Graduation)	0.291**		
Total Family income (per month)	0.283**		
Gender (1 = Boys, 2 = Girls)	-	-0.281**	
Self- Concept	-	-	0.326**
R^2	0.250	0.306	0.385
ΔR^2	0.250	0.056	0.079
F	$F_{(8,991)}$ = 80.512**	$\Delta F_{(1,990)}$ = 6.953*	$\Delta F_{(1,989)}$ = 8.829*
*p <0.05; **p<0.01			

The age of the participants was also positively associated with attitudinal (0.208, p<0.01), which also shows that the increasing age of participants reported high attitudinal. During the analysis, a family of the participants (1=Nuclear, 2 = Joint) was found negatively associated with attitudinal (-0.129, p<0.05), which clearly shows that participants from nuclear family were reported high attitudinal.

During the study, the teaching medium of school (1=Hindi, 2 = English) was found to be positively related (0.237, p<0.01), which shows that participants from English medium school were reported high career maturity. During the study, it was found that the locality of participants was positively (0.275, p<0.01), which shows that participants from the urban locality were reported high career maturity.

During the study, the father's education of participants was found to be positively associated (0.216, p<0.01), which shows that increasing level of participants fathers education reported high career maturity. Mothers' education of participants was also found to be positively associated with (0.291, p<0.01), which shows that increasing level of participants mothers education reported high career maturity.

Total family income of participants was also found to be positively associated with (0.283, p<0.01). This suggested that participants who belong to higher family income reported high career maturity.

In study, in the second model, gender explained an additional 5.6% ($\Delta F_{(1,990)}$ = 6.953, p<0.05) of the variance. Gender (1 = Boys, 2 = Girls) negatively associated(-0.281, p<0.01), which shows that boys participants were reported high career maturity.

In this study, in the third model, self-concept explained an additional 7.9%($\Delta F_{(1,989)}$ = 8.829, p<0.05) of the variance. Self-concept was found to be positively associated(0.326, p<0.01), which indicates that those who had higher levels of the self-concept have reported high career maturity.

The findings for the prediction effect of different predictors on attitudinal, self-appraisal, occupational information, goal selection, planning. problem solving made it clear that gender is potential predictor of career maturity.

Conclusion- The above findings made it clear that gender is potential predictor of career maturity. The reason may be attributed to the cultural factor. Under Indian cultural set up the pattern of socialization for boys and girls are different. It may the attributed to child rearing predictors of Indian society. The major of boys is to choose a suitable career for themselves. In other words it may be stated that boys are mainly career oriented whereas girls are expected to run a family after marriage. Parents give much importance to choose a suitable match for the daughters for females marriage is expected to the primary concern. Because of this orientation of boys and girls gender has played a crucial role in determining the career maturity of subjects. This work is systematic and scientific study in the field of career maturity. It will identify some important predictors of career maturity under the Indian context. The study will be helpful in counseling due to knowledge of career maturity factors that can effect adolescent students.

Reference

1. Dhillion, U. and Kaur, R.(2005). To study the relationship of career maturity with self-concept, achievement motivation and locus of control. *Journal of Indian Academy of Applied Psychology 31(1)*.
2. Gupta, N.(1987). Career maturity as a function of grade and sex. *Indian Psychologist, 4*.
3. Lawrence, W.E. and Brown, D. (1976). An investigation of intelligence, self-concept, socio-economic status, race, and sex as predictors of career maturity. *Journal of Vocational Behaviour, 9*.
4. Salami, S.O. (2008). Gender, identity status and career maturity of adolescents. *Journal of Social Sciences*.
5. Sherry, D.G., Verma, D.R. and Goswami, P.K. (1979). Swatva Bodh Pareekshan, Agra: National Psychological Corporation.

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

प्राचीन संस्कृत नाटकों में वर्णित सामाजिक मूल्यों की समसामायिक परिप्रेक्ष्य में प्रांसगिकता (आज के संदर्भ में)

डॉ. रमेश चन्द्र टांक
सीनियर रिसर्च फेलो, समाज शास्त्र विभाग, मो.सु.वि.वि, उदयपुर, राजस्थान, भारत।

Article Info
Volume 5, Issue 2
Page Number : 29-46

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Accepted : 15 March 2022
Published : 30 March 2022

सारांश (Abstract)– मूल्यों की आवश्यकता समसामायिक परिप्रेक्ष्य में मानव जीवन को स्वस्थ दिशा देने वाले गुणों को मानव मूल्यों की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है जीवन को अनुशासित एवं सुवासित करने वाले तत्वों को मानव मूल्यों की श्रेणी में रखा जा सकता है। आज विश्व में तामसिक प्रकृति का प्राधान्य है, इसी तामसिक ज्ञान के कारण विश्व शान्ति दिन प्रतिदिन नष्ट होती जा रही है। मनुष्य हिंसक पशु के समान मनुष्य को ही मार रहा है। इंसानियत पर शैतानियत हावी होती जा रही है फलस्वरूप अन्तराष्ट्रीय आंतकवाद आज विश्व की ज्वलन्त समस्या बन गया है। आज राष्ट्रीय स्तर पर ही या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिदिन होने वाली हिंसक एवं अनैतिक घटनाओं से यह स्पष्ट हो चुका है कि 21 वी सदी का मनुष्य न तो सभ्य कहा जा सकता है एवं नहीं सुसंस्कृत अपितु व्यापक जनसंहार की अत्याधुनिक विकसित तकनीको एवं अनैतिक व्यवहार से लेस होकर वह आदि मानव से कही ज्यादा बर्बर एवं पाशविक हो गया है। आज मनुष्य की मानवता के प्रति आदर भाव जाग्रत करने के लिए मानव को श्रेष्ठ माग्र की ओर प्रेरित करने के लिए संस्कृत नाटककारों द्वारा प्रदत विचार करने के लिए संस्कृत नाटककारों द्वारा प्रदत विचार रत्न स्वरूप मानव मूल्यों की ज्योति प्रत्येक मानव के मन में प्रदीप्त करने की परमावश्यकता है। संस्कृत नाटककारों द्वारा प्रदत मूल्य विचार प्रत्येक देश प्रत्येक काल, एवं प्रत्येक परिस्थिति में समसामायिक एवं प्रासंगिक है। ये मानव मूल्य अमूल्य होते हुए भी मानव जीवन को मूल्यवान बनाते है। मानव मूल्यों की दौलत से एक निर्धन भी स्वयं को धनवान से अधिक संडबर अनुभव करता है तथा इसके अभाव में धनवान भी स्वयं को दरिद्र अनुभव करता है। इसी से प्रेरित होकर मैने मेरा शोध आलेख प्राचीन नाटकों में वर्णित सामाजिक मूल्यों का समसामायिक परिप्रेक्ष्य में समीक्षात्मक अध्ययन चयन किया है।

मुख्य शब्द – प्राचीन, संस्कृत, नाटक, सामाजिक, मूल्य, जीवन, साहित्य

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

मूल्यों की अवधारणा को समझने के लिए सर्वप्रथम मनुष्य के लिए साहित्य की उपादेयता ओर साहित्य के माध्यम से मनुष्य में बेहतर बदलाव की प्रक्रिया को समझना होगा। साथ ही समाज में मूल्यों की स्थिति और संप्रत्यय पर चिंतन करना होगा। सदियों से चली आ रही भारतीय जीवन पद्धति में **मूल्यपरकशिक्षा** के महत्व का विवेचन होना चाहिए। साहित्य चाहे वह किसी भी धारा अथवा निकाय का क्यों नहीं कुछ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष मर्यादाओं द्वारा नियोजित होता है इन मर्यादाओं की सांस्कृतिक स्थिति बडी ही सूक्ष्म एवं जटिल होती है। एक ही संस्कृति में कभी कभी विभिन्न अंगों में अलग–अलग घुमावों में चलती रहती है। परिणाम यह होता है कि एक ही मूल्य मर्यादा कई ऐसी चिन्तन धाराओं और साहित्य निकायों में समान रूप से प्रतिफलित होती है जो सतही तौर पर न केवल एक दूसरे से भिन्न होते है किन्तु उनमें भयानक द्वन्द्ध घात प्रतिघात चलता रहता है।[1] इस प्रकार मूल्यों के निर्माण की प्रक्रिया बहुत धीमी मगर एक विचार के साथ सार्थकता लिए हुए होती है।

मूल्यों का विकास मनुष्य द्वारा समाज में किये गये व्यवहार से नियत होता है। मूल्य निर्माण में कई पीढिया गुजर जाती है। धर्मवीर भारती के अनुसार विवेकवादी नैतिकता इस बात पर आग्रह करती है कि हम भविष्य में जिन मानवीय मूल्यों के विकास का स्वप्न देखते है, उन्हें हम इसी क्षण अपने आचर जीवन पद्धति में प्रतिष्ठित करे। यदि हम ऐसा नहीं करते तो भविष्य के किसी अदृश्य वर्गहीन समाज की स्थापना करते है तो हम प्रगति की आस्था को आंतरिक रूप से पराजित कर एक प्रकार के नये भाग्यवाद को प्रश्रय देने लगते है।[2] जीवन में मूल्यों की अनुपस्थिति यात्रा को एक नीरस और उद्देश्यहीन बना देती है। सबकुछ भाग्य के भरोसे छोड बैठे रहना भी सुखद स्थिति नहीं है।

प्रस्तुत शोध आलेख का केन्द्रीय शब्द **'मूल्य'** है। विभिन्न शब्दकोशों के अनुसार इसे परिभाषित करना आवश्यक है। मूल्य संज्ञा शब्द है और वृहद समान्तर कोश के **अनुसार अर्थ है, आंकडा, उन्मान, कद, कीमत, खर्चा, दर, दाम, देय प्राइम, भाव मौल, रेट लागत, व्यय, शुल्क, मूल्यांकन** इत्यादि मूल्य के अर्थ माने गये है।

इसी तरह मूल्य एक धारणा है जिसका सम्बन्ध केवल मानव से है वस्तुतः मूल्य ही विचार की वह इकाई है, जिसको आधार बनाकर मानव अपना जीवन जी सकता है और उस जीवन को सार्थक बना सकता है।[3]

वामन राव आप्टे के अनुसार मूल्थ शब्द संस्कृत की **मूल धातु में यत् प्रत्यय** लगाने से बना है जिसका अर्थ कीमत, मजदूरी आदि होता है।[4]

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार मनुष्य के कर्म अथवा भोग के फलितार्थ रूप में जिसका महत्त्व या मान होता है, सामान्यतया उसे ही मूल्य कहते है। उन्हीं के अनुसार मूल्य उस गुण या गुण समवाय का नाम है किसी पदार्थ को अपने लिए, प्रमाता के लिए अथवा अपने परिवेश के लिए सार्थकता का निर्धारण करता है।

इस प्रकार हम समझ सकते है कि मानव जीवन का जो मूल्यवान बनाने की क्षमता रखते हे वही जीवन मूल्य है। हमारा लोकांचार ही मूल्यों की दिशा तथा दशा तय करता है। मूलय विहिन समाज के बारे में सोचना ही असंभव है। व्यक्ति समाज के बारे में सोचना ही असंभव है। व्यक्ति जैसे–जैसे स्वहित त्याग करके समाजहित में चिन्तन करने लगता है तो व्यक्तिगत मूल्य भी सामाजिक मूल्य के रूप में विकसित होने लगते है।

संस्कृत साहित्य के प्रमुख नाटकों में वर्णित सामाजिक मूल्य–जैसे पारिवारिक जीवन के मूल्यों के अन्तर्गत संयुक्त परिवार की आधार शिला–नैतिकता, त्याग, क्षमा, धैर्य, सद्भाव, मातृभक्ति, करूणा, आदर्श पति, आदर्श–पत्नी, आदर्श भाई, आदर्श राजा, प्रेम, स्नेह, आदर्श मित्र, अनिन्द्यभाव, उदारता सहिष्णुता सद्व्यवहार, सद्विचार, पर हितभावना, सत्य परिपालन आदि अनेक मूल्यों एवं गुणों का परिपालन किया गया है। इसी प्रकार राजनैतिक, राष्ट्रीय धार्मिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मक, आध्यात्मिक आदि अनेकों मूल्यों का समावेश संस्कृत नाटकों के अन्तर्गत हुआ है।

भारतीय समाज आज जर्जर हो गया है। आज हमारी प्राचीन संस्कृति मृत्यु के द्वार पर खड़ी है। अपने चारों ओर के परिवेश में हर दिन कुछ न कुछ ऐसी घटना दिखाई देती है जिससे यह प्रतीत होता है कि समाज किस तरह विभिन्न प्रकार की विकृतियों से भरता जा रहा है। समाज आधुनिकता के अंधे अनुसरण में व्यस्त है। वर्तमान में भोगवादी संस्कृति में व्यक्ति का सर्वस्व धन, पूँजी, दौलत और सम्पत्ति ही रह गया है। जिसके पास धन दौलत ऐश्वर्य है, उसके पास कोई अन्यगुण सदाचार से सम्बन्धित नहीं है तब भी वर्तमान समय में उसे पण्डित, ज्ञानी, श्रेष्ठ वक्ता, सर्वगुणसम्पन्न सुन्दर के रूप में परिभाषित किया जाने लगा है, जो भावी समाज के लिए शुभ संकेत नहीं है। .

किसी भी राष्ट्र या समाज की उन्नति की आधारशिला वहाँ के निवासियों की सच्चरित्रता, परिश्रमशीलता अथवा उनके नैतिक मूल्य होते हैं। विश्व के जो देश आज उन्नति के चरमोत्कर्ष पर पहुँच गये हैं, उनकी उन्नति का आधार इन्हीं नैतिक मूल्यों में आस्था तथा जीवन में इन्हें उतारना है। आज हम अपने देश की राजनैतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों को देखें तो स्पष्ट हो जायेगा कि आज किस

प्रकार से चारों ओर भ्रष्टाचार, बेईमानी, रिश्वतखोरी, भाई भतीजावाद, साम्प्रदायिकता तथा आलस्य आदि का बोलबाला है इन्हीं कारणों से विश्व में हमारी छवि धूमिल हुई है।

यदि मनुष्य का सामाजिक परिष्कार नहीं होता तो वह पशु तुल्य जीवन बिताता। मनुष्य को अच्छा बनाने का दायित्व समाज का रहा है, क्योंकि आदर्श मानव की संकल्पना मूल्यों से जुड़ी है, अतः हम कह सकते हैं कि मूल्यों की आधार शिला समाज है। समाज के कार्यकलाप, व्यवहार तथा आचरण साहित्य में बिखरे हुए रहते हैं। साहित्य तत्कालीन सामाजिक मूल्यों को ग्रहण करता हुआ नये जीवन मूल्यों की सृष्टि के माध्यम से समाज को गतिशीलता प्रदान करता है, इसीलिए सामाजिक परिवर्तित स्वरूप तथा मूल्यों का प्रतिफल साहित्य में स्वाभाविक रूप से उपलब्ध होता है, विशेष रूप से नाट्य साहित्य में क्योंकि नाट्य तो भरतमुनि के अनुसार ''त्रैलोक्यस्यास्य सर्वस्य नाट्यं भावानुकीर्तनम्।''

नाट्य तो समाज की साक्षात् अनुकृति होती है। भास कालिदास भवभूति, इत्यादि नाटककारों की कृतियों में हमें तत्कालीन समाज की झाँकी देखने को मिलती है। आलोच्य नाटकों में नाटककारों ने नायकों एवं नायिकाओं के चारित्रिक उत्कर्ष एवं परम्पराओं के परिपालन का उच्च आदर्श सर्वत्र प्रस्तुत किया है। साथ ही मानवीय मूल्यों को भी सर्वत्र स्थापित किया है जो नाटककारों का उद्देश्य भी है। सभी आलोच्य नाटकों में कवियों ने मूल्य सरिता की अभिव्यक्ति को विस्तृत फैलाव एवं अपेक्षित गहराई दी है क्योंकि संस्कृत नाटक आदर्श एवं मूल्यों की स्थापना के उद्देश्य से लिखे गये हैं, संस्कृत नाटकों में **त्याग, समर्पण, दया, स्नेह, अहिंसा, प्रेम, करुणा** आदि शाश्वत मूल्यों की सत्प्रेरणा हमें मिलती है। **'संसरति इति संसारः'** एवं **'गच्छति इति जगतः'** के आधार पर गति और प्रगति इस संसार का पर्याय है। संसार में प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील है। इसी प्रकार ''**कालः क्रमेण जगतः परिवर्तमाना**''[5] के अनुसार आज विश्व में द्रुत गति से परिवर्तन हो रहा है। परिवर्तन के इस वर्तमान समय ने समाज के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्वरूप को तो बदला ही है, साथ ही साथ आम व्यक्ति को अपने सामाजिक परिवेश से भी अलग कर दिया है।

हमारे परम्परागत जीवनमूल्य नये परिवेश की आवश्यकतानुसार बदल रहे हैं। आज हमारी परम्पराएँ छूट रही हैं और परिवर्तन की इस प्रक्रिया ने हमारे शाश्वत मूल्यों को भी प्रभावित किया है। नवीनता का आकर्षण नवीन आस्थाओं को जन्म दे रहा है। आज जीवन को भौतिक धरातल पर आँका जाने लगा है। वैज्ञानिक प्रगति, औद्योगिक विकास एवं नगरीकरण की प्रवृत्ति ने आग में घी का काम किया है। तेजी से बदल रही परिस्थितियों के साथ जीवन मूल्यों आदर्शों, प्रतिमानों, सद्भावनाओं, जीवन–दर्शन सभी में परिवर्तन होता जा रहा है व्यक्ति के सुख की परिभाषा बदल गयी है और व्यक्ति

अधिक सुख भोगने की चाह में बाजार से प्रभावित होकर आत्मकेन्द्रित हो गया है। जो वस्तु अधिक से अधिक स्वयं को सन्तुष्ट करे वही सुख है, यह भावना तेजी से पनप रही हैं। ऐसे में हमारी उपनिषदीय वाणियाँ– **''सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया''** तथा **''तेन त्यक्तने भुंजीथाः''**[6] अपना मूल्य खो रही हैं। आज का युवा स्वच्छन्द, आत्म निर्भर रहना चाहता है। ऐसे में वैयक्तिक संतुष्टि ही उसके लिए परम मूल्य हैं और इस बढ़ती प्रवृत्ति ने हमारे परम्परागत मूल्यों के स्वरूप को बदल दिया है। वैश्वीकरण ने धनोपार्जन के इतने अवसर प्रदान किये हैं कि आज युवा वर्ग अर्थ प्रधान तेजी से बदलती हुई जीवन शैली से अभिभूत होकर पारिवारिक रिश्तों के मूल्य को पहचान नहीं पा रहे हैं एवं बदलती शैली ने बच्चों एवं माता–पिता के बीच संवादहीनता की स्थिति पैदा कर दी है। फलतः **'मातृदेवोभवः' 'पितृदेवोभवः'** की पवित्र संकल्पनाएँ समाज में विलुप्त होती जा रही हैं।

तेजी से बदल रही, राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियों ने हमारे कुछ शाश्वत मूल्यों, परम्पराओं जैसे विवाह संस्था पारिवारिक जीवन के मूल्यों आदि का स्वरूप बदल दिया है। जिन्हें वर्तमान संदर्भो में प्रश्नांकित कर उनका महत्त्व प्रतिपादन कर वर्तमान में उनकी प्रासंगिकता पर चर्चा करना अभीष्ट हैं।

अतिथि देवोभवः सामाजिक शिष्टाचार में अतिथि सत्कार को सर्व प्रमुख स्थान दिया है। पंच महायज्ञों में अतिथि सत्कार का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। अतिथि सत्कार अर्थात् नृयज्ञ का भाव है अभ्यागत अतिथि की विधिवत् पूजा सत्कार । वाल्मीकि रामायण में भी अतिथि के सत्कार को प्राथमिकता दी गई है। **अतिथि किल पूजार्हः प्राकृतोऽपि विजानता''**[7] आज अर्थ के प्रभाव से हमारी यह पवित्र संकल्पना विलुप्त होती जा रही है। हमारे देश में प्रतिवर्ष लाखों विदेशी पर्यटक विशेष रूप से हमारी सांस्कृतिक विरासत से प्रभावित होकर आते हैं उन्हें लूटने एवं उनसे पैसा एंठने एवं गुमराह करने का हमारे स्थानीय लोग कोई मौका नहीं चूकते जो उनके नैतिक पतन को उजागर करता है। विदेशी महिला पर्यटकों एवं अतिथियों के साथ आज के लोग बलात्कार जैसी घटनाएँ करने से भी नहीं चूकते।

हमारी प्राचीन सभ्यता, संस्कृति एवं प्राचीन साहित्य तथा आलोच्य नाटकों में अतिथि सत्कार के मूल्य को सर्वोत्कृत महत्त्व दिया जाता रहा है। प्राणों से भी अधिक अतिथि का स्वागत सत्कार करना भारतीय जीवन का अभिन्न अंग था जो आज धूमिल होता दिखाई दे रहा है। आलोच्य नाटकों में राज परिवार और सामान्य परिवार दोनों में ही अतिथि सत्कार का बहुत महत्त्व बताया गया है यथा– 'स्वप्नवासवदत्तम्' के प्रथम अंक में कंचुकी ब्रह्मचरी के **''प्रतिगृह्यतामतिथिसत्कार''** एक आगन्तुक के प्रति सामान्य व्यवहार में विशिष्टता का परिचायक है। इसी प्रकार **''प्रतिज्ञायौगन्धरायण''** में राजा उदयन के

पकड़े जाने पर महासेन कंचुकी से उनका उचित सत्कार कर प्रवेश कराने का आदेश देता है।[8] इतना ही नहीं महासेन यह भी कहता है कि सत्कार इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे राजा उसका महत्त्व समझ सके।[9]

उपर्युक्त कथन के माध्यम से नाटककार भास ने अतिथि सत्कार के प्रति अपनी दृढ़ आस्था व्यक्त की है। अभिषेक नाटक में श्री राम विभीषण के आगमन का समाचार सुनकर उसे सत्कार पूर्वक प्रवेश कराने का आदेश देते हैं। रामः **"सत्कृत्य प्रवेश्यतां विभीषणः**[10] कालिदास ने **'अभिज्ञान शाकुन्तल'** में अतिथि का महत्त्व प्रतिपादित किया है एवं उसकी अवहेलना करने पर दण्ड भी मिला यह भी चित्रित किया है।[11]

पारस्परिक सहयोग एवं सद्भाव– पारस्परिक सहयोग का भाव, प्रेम, सहिष्णुता एवं त्याग भाव ही परिवार व समाज के लोगों को एक सूत्र में बाँधकर रखता है और यहीं से सहअस्तित्व की भावना विकसित होती है। आज बदलते एवं आर्थिक परिवेश ने समस्त मानवीय सम्वेदनाओं को बदल दिया है। एक परिवार के सदस्यों में भी आपसी प्रेम एवं सम्वेदना दिखाई नहीं देती। प्रत्येक व्यक्ति अपनी तरक्की एवं अपने अहं के शिखर पर आरूढ़ होने से दूसरे की भावनाओ से अनभिज्ञ है।

अपने पड़ौस में क्या हो रहा है, पड़ौसी संकट ग्रस्त है इस बात की किसी को भी फिक्र नहीं है। आपस में कोई संवाद नहीं है, कोई प्रेम नहीं है कोई सोहार्द नहीं है। ऐसे में अन्य प्राणियों के प्रति लगाव, दया एवं संवेदना की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती है। हमारी वेद वाणियों में प्रारम्भ से ही ज्ञात, अज्ञात सभी के प्रति सद्भावना की मंगल कामना की गई है– **"याँश्चं पश्याति याँश्च न तेषु ममा सुमति'' कृधि।''**[12] **''मित्रस्याहं चक्षुसा सर्वणि भूतानि समीक्षे मित्रस्य चक्षुसा समीक्षामहे।**[13]

अर्थात् मैं मनुष्य को व सभी प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखू हम परस्पर मित्र की दृष्टि से देखें। क्योंकि मानव होने के नाते एक दूसरे की रक्षा करना, सहायता करना, मनुष्य का प्रथम कर्त्तव्य है। **''पुमान् पुमांसं परिपातु विश्वतः''**[14]

सभी का कल्याण हो निरोग हों, कोई दुःखी न होवे ये भावनाएँ उपनिषदों में भी प्राचीन काल से ही मुखरित रही हैं।

सर्वेभन्तु सुखिनः सर्वेसन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित दुःख भाग्भवेत्।।[15]

यही मंगल कामनाएँ संस्कृत नाटकों के भरत वाक्यों में सर्वत्र व्याप्त है।

सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वो भद्राणिपश्यतु।
सर्वः कामानवाप्नोतु सर्वः सर्वत्र नन्दतु।।[16]

राजनीति में प्रासंगिकता एवं उपयोगिता– वाल्मीकि ने राजा को प्रजा के लिए पितृ स्थानीय पालक कहा है–**''पिता ही सर्व भूतानां राजा भवति धर्मत''**[17] आदि कवि का नैतिक निर्देश है कि राजा अपने नैतिक धर्म को पूर्ण करने में सर्वथा प्रतिबन्धित होता है। उसे स्वेच्छाचारिता के लिए कथमपि अवसर नहीं होते। नैतिक व्यवहार नम्रता, निग्रह और अनुग्रह ये चार प्रवृत्तियाँ राजा को स्वेच्छाचारिता से वारित करती है।[18]

मनुस्मृति में राजा को महान् उत्साही अत्यन्त उदार, कृतज्ञ विनीत, वृद्धोपसेवी, कुलीन, सत्यवक्ता सद्गुणी दूसरों के दोषों को न कहने वाला, धार्मिक बुद्धिमान तथा रहस्य गोप्ता बताया है तथा उसमें आन्वीक्षिकी, दण्ड, नीति एवं वार्ता आदि विधाओं का ज्ञाता होना चाहिए यह भी कहा है।[19]

आज हमारे देश में राजनीति एवं अर्थ के प्रधान रहने से नेता जो कि स्वयं जनता का प्रतिनिधि स्वरूप है वही जनता के समक्ष चारित्रिक एवं नैतिक पतन का ज्वलन्त उदाहरण प्रस्तुत कर रहा है कहा गया है कि **''यथा राजा तथा प्रजा''** ऐसी स्थिति में जनता को नैतिक मूल्यों का पथ दिखाने वाले, चारित्रिक उत्कर्ष की प्रेरणा देने वाले चरित नायकों का पुनः स्मरण दिलाने की आवश्यकता है।

कुर्सी एवं सत्ता के लिए गन्दी राजनीति करने वाले नेताओं के समक्ष प्रतिमा नाटक के राम एक आदर्श चरित हैं। जब राम का राज्याभिषेक होते–होते रूक गया तब भी वे प्रसन्न ही होते हैं[20] उनके मन में इस का कारण जानकर भी किसी के लिए कोई दुर्भावना नहीं आती है। उन्होंने प्रतिरोध किये बिना पिता के वचनों का पालन करने के लिए चौदह वर्ष के लिए वन में प्रस्थान किया।[21] व राज्य के ऐश्वर्य को तिनके के समान छोड़ दिया उत्तररामचरितम् में श्री राम लोकानुरंजन के लिए स्नेह, दया, तथा सखी स्वरूपा अपनी प्राणेश्वरी को त्याग देते हैं।[22] यद्यपि त्याग उचित है अथवा अनुचित यह एक अलग प्रश्न है किन्तु समष्टि हेतु व्यष्टि को न्यौछावर करना एक उच्च मूल्य कहा जा सकता है।

राजा स्वयं मर्यादा का पालन करके प्रजा के सम्मुख आदर्श भी उपस्थित करता था। राजा दुष्यन्त के हृदय में प्रजा के प्रति अपार स्नेह है, वह पाप आदि को छोड़कर स्नेही जनों से वियुक्त हुए लोगों के प्रति बन्धुभाव भी व्यक्त करता है।[23] कहीं–कहीं तो राजा प्रजा के मध्य सम्बन्ध अति आदर्शमय भी मिलते हैं। दुष्यन्त धनमित्र का धन राजकोष में जमा करने से पहले यह पता लगाने को कहता है कि कहीं उसकी कोई पत्नी गर्भवती तो नहीं हैं।[24]

चाणक्य भी राजा प्रजा के मध्य मधुर तथा विश्वास पर आधारित सम्बन्धों का पक्षधर हैं, इसीलिए वह चन्द्रगुप्त के प्रति प्रजा को अनुरक्त करने के लिए राक्षस को राजधानी से हटाने के साथ ही उस पर पर्वतेश्वर की हत्या का आरोप मढ़ता है।[25] ताकि प्रजा में उसकी छवि विकृत होने के साथ ही चन्द्रगुप्त की आदर्श छवि स्थापित हो सके।

इसी प्रकार समाज में शान्ति और सुव्यवस्था के लिए प्रजा राजा के महत्त्व को स्वीकार करती थी तथा राजा प्रजा का रक्षण तथा कष्टों का निवारण करता था।[26] दोनों के आदर्श सम्बन्धों का यही आधार था। राजा व प्रजा के सम्बन्ध पिता पुत्र की तरह आदर्श सम्बन्ध थे। राजा सूर्य के द्वारा अन्धकार दूर करने की भाँति प्रजा के कष्टों को भी दूर करता था।[27] इनके सम्बन्ध मर्यादा की रज्जु से बँधे थे। सामाजिक, धार्मिक अथवा किसी अन्य क्षेत्र में मर्यादा का उल्लंघन करने पर राजा कुमार्ग गामियों को दण्डित करता था। यही नहीं प्रजा के पारस्परिक विवादों को दूर करके[28] राजा समाज में शान्ति व व्यवस्था बनाए रखता था। समस्त नाटकों में राजा आदर्श पालक एवं रक्षक के रूप में चित्रित किये गये हैं। अभिज्ञानशाकुन्तलम् में दुष्यन्त को एक उदात्त राजा के रूप में ही चित्रित किया गया है जो प्रजा का पालन अपनी सन्तान के समान करता है। वह समस्त प्रजा का बन्धु है– **''त्वयि तु परिसमाप्तं बन्धुकृत्यं प्रजानाम्।।**[29]

राजा के द्वारा नियमित, एवं सन्तान के समान पालन करने के कारण कोई भी दुराचारी राज्य में नहीं था। **"कः पौरवे वसुमती शासति शासितरि दुर्विनीतानाम्''**[30]

अभिज्ञानशकुन्तलम् के पाँचवे अंक में कण्व शिष्यों के आगमन पर राजा सोचता है कि कण्व शिष्य स्वयं चलकर मेरे पास आए हैं जबकि मेरे राज्य में तो किसी को अपनी समस्या लेकर यहाँ आने की आवश्यकता नहीं है शायद मेरे ही द्वारा किये गये किसी पाप के कारण पृथ्वी ने कन्द फल, फूल आदि देना बन्द कर दिया है अतः तपस्वियों को जीवन यापन में बाधा हो रही होगी। इससे राजा की प्रजावत्सल्लता का मूल्य उभर कर आता है इस प्रकार की सोच यदि आज के राजनेता अपना लें तथा दूर दराज के गाँवों एवं ढाणियों में रहने वाले मनुष्यों एवं जीवों के जीवन यापन की आवश्यकताओं का ध्यान रखें तो विभिन्न प्रकार की समस्याओं जैसे **नक्सलवाद, डकैती, चोरी आदि** से छुटकारा पाया जा सकता है तथा समाज में शांति की स्थापना की जा सकती हैं लेकिन ऐसी सोच आज के राजनेताओं भी कही भी दिखाई नहीं देती है उन्हें तो सिर्फ अपना हित साधने की हर समय लगी रहती है।

राष्ट्रीय मूल्यों की प्रासंगिकता बताते हुए कवि काङ्करजी का कथन है किस्वदेश में अधीत विद्या से परदेश को समृद्ध करना स्वदेश के प्रति विश्वासघात है। स्वदेश की सेवा में ही मनुष्य की अधीत विद्या की सफलता है ऐसा समझकर स्वदेश सेवा से कभी भी विमुख नहीं होना चाहिए।[31] राष्ट्रीय मूल्यों की अभिव्यक्ति को कई अन्य नाटकों में जैसे कि– **राष्ट्र रक्षणम्**[32] **, प्राणाहुति, नाट्यकल्प** में कई स्थानों पर देखा जा सकता।

शैक्षिक मूल्यों की प्रासंगिकता

प्रकृति के समस्त जीवों में मानव को सर्वोत्कृष्ट होने का गौरव प्राप्त है, क्योंकि वह बुद्धिजीवी है। बुद्धि के बल पर उसने अनेक हिंसक पशुओं को अपने वश में किया है, वह ऐसे कार्य करने में समर्थ हुआ है जो कल तक असंभव प्रतीत होते थे मानव की इन उपलब्धियों का श्रेय यदि किसी को है तो वह है शिक्षा को। शिक्षा के अभाव में मानव तथा पशु में कोई अन्तर नहीं। विद्या विहीन मानव तो पशु के समान है इसलिए मानव के सर्वांगीण विकास के लिए अच्छी व ज्ञानोपयोगी शिक्षा आवश्यक है। विद्या के महत्त्व को बताते हुए भतृहरि ने अपने नीतिशतक में लिखा है कि–

येषां न विद्या न तपो न दानं, ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूताः, मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।।[33]

आज शिक्षा का उद्देश्य जीविकोपार्जन के लिए रोजगार प्राप्त करना हो गया है। वर्तमान में शिक्षा व्यवसायोन्मुखी हो गई है। जबकि अथर्ववेद[34] के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य मानव की बुद्धि को विकसित करके जीवन का सर्वांगीण विकास करना है। इसी प्रकार ऋग्वेद[35] का कथन है कि शिक्षा द्वारा अज्ञान अंधविश्वास तथा अपराधिक प्रवृत्तियों का उन्मूलन करके जीवन को सुखमय बनाया जाए। ऋग्वेद[36] ने शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान देना तथा निष्क्रिय को सक्रिय बनाकर प्रबुद्ध करना बताया है। यजुर्वेद ने ऐसी शिक्षा का प्रतिपादन किया है जिससे ऐसी सुमति प्राप्त हो जो संसार का कल्याण करने वाली हो। यजुर्वेद[37] तथा ईशावास्योपनिषद्[38] के अनुसार दृ कर्म मार्ग से जीवन निर्वाह होता है तथा ज्ञान मार्ग से मोक्ष प्राप्त होता है। वेद व्यक्तिगत उन्नति से ही सन्तुष्ट नहीं है वह समाज और राष्ट्र की उन्नति को भी यथोचित महत्त्व प्रदान करते हैं। अथर्ववेद में[39] समाज तथा राष्ट्र की उन्नति के साधन राष्ट्रीय चरित्र, अनुशासन तथा समर्पण की भावना को अनिवार्य बताया है।

प्राचीन शिक्षा पद्धति में केवल पुस्तकों के अध्ययन को ही शिक्षा या विद्याध्ययन नहीं समझा जाता था। ज्ञान–विज्ञान की अनेक शाखाओं का अध्ययन करने के उपरान्त भी व्यक्ति अशिक्षित रह सकता है। अध्ययन के द्वारा अन्तर्दृष्टि प्राप्त करके तथा चरित्र के समुन्नत होने पर ही उसको शिक्षित कहा जा सकता है। प्राचीन शिक्षा प्रणाली में छात्र गुरुओं के पास गुरुकुल में रहकर शिक्षा प्राप्त करते थे।

यहाँ ब्रह्मचारी छात्रों को कुछ नियमों का पालन अनिवार्य रूप से करना होता था जैसे दैनिक सन्ध्योपासना, ईश्वरोपासना, यज्ञ सम्पादन, तपोमय जीवन पद्धति, गुरुजनों के प्रति श्रद्धा, पवित्रता, सदाचरण, स्नान, अग्निहोत्र, इन सब नियमों के पालन का उद्देश्य ब्रह्मचारी छात्र में ईश्वर के प्रति भक्ति और धर्म के प्रति आस्था की भावना सुदृढ़ करना था।

आज शैक्षिक मूल्यों में निरन्तर हास दिखाई दे रहा है। शिक्षा संस्थाओं की संख्या अवश्य बढ़ गई है किन्तु शिक्षा की गुणवत्ता में कमी आयी है आजकल के शैक्षिक संस्थानों में गुरु द्वारा शिष्य से शिक्षा प्राप्त करने के लिए धन प्राप्त करने की प्रबल अभिलाषा ने शिक्षा प्रणाली को दूषित कर दिया है। आज डॉक्टरी पेशा अपने मूलधर्म मानव सेवा से विमुख होकर अर्थ लोलुपता की ओर अग्रसर होता दिखाई दे रहा है। जिसके उदाहरण के रूप में आए दिन कन्या भ्रूण हत्या एवं मानव अंगों की तस्करी होती रहती है। वर्तमान की चिकित्सकीय शिक्षा यहाँ पर डॉक्टरों के नैतिक पतन को ही दर्शाती है क्योंकि एक चिकित्सक का कर्त्तव्य होता है जीवन की रक्षा करना, जीवन की हत्या नहीं।

प्राचीन गुरु वर्तमान शिक्षकों की तरह केवल अर्थोपार्जन के लिए ही शिक्षा नहीं देते थे, अपितु उनका सोचना था कि हमें अपनी संस्कृति के संरक्षण एवं प्रचार हेतु विद्यादान करना चाहिए। यजुर्वेद[40] में कहा गया है कि ब्रह्मयज्ञ का अभिप्राय है विद्वान् ऋषियों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन के लिए वेदाध्ययन करना चाहिए।

इसी प्रकार ऋषि ऋण से मुक्ति तभी संभव है जब अर्जित ज्ञान को प्रसारित किया जाए। विद्यादान से मेघा प्राप्ति होती हैं।[41] भ्रम के निवारणार्थ विद्यादान महत्त्वपूर्ण माना गया है।[42] वेदों में विद्यादान विद्वानों का कर्त्तव्य माना गया है।[43] इस प्रकार हमारी प्राचीन शिक्षा धनोपार्जन के लिए न होकर शिष्य के चारित्रिक विकास के लिए होती थी। वर्तमान शिक्षा पद्धति में गुरुओं के द्वारा शिक्षण संस्थाओं में भारी शुल्क की दुर्व्यवस्था के कारण कमजोर आय वर्ग के छात्र योग्य होने पर भी शिक्षा से वंचित होते जा रहे हैं।

प्राचीन शिक्षा प्रणाली में शिक्षा प्राप्त करने के लिए शुल्क का प्रावधान नहीं था गुरु शिष्यों से शिक्षा प्राप्त करने का शुल्क नहीं लेते थे। शिष्य आचार्य के पास रहकर गुरु की सेवा करते हुए गुरु आश्रम को अपने घर के समान समझकर कार्य करते थे। शिष्य अपनी शिक्षा की समाप्ति होने पर गुरु की इच्छानुसार तथा अपनी हैसियत के अनुसार भूमि, सुवर्ण, गाय, घोड़ा, अन्न शाक वस्त्र आदि गुरु को दक्षिणा के रूप में प्रदान कर गुरु को प्रसन्न करते हुए अपने कर्तव्य का निर्वाह करता था। समाज का सुख तथा कल्याण इसी तथ्य में निहित था कि विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हुए समाज के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करे। विद्यार्थी को संस्कृति तथा सभ्यता का संरक्षक एवं प्रकाश स्तम्भ समझा जाता था। समाज का सुख तथा कल्याण इसी तथ्य में निहित था कि विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हुए समाज के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करे। बृहदारण्यक उपनिषद में कहा गया है कि पुत्र को उत्पन्न करके ही मनुष्य

पितृऋण से मुक्त नहीं हो जाता अपितु इस पुत्र को समुचित शिक्षा देने से ही वह इस ऋण से मुक्त हो पाता हैं[44]

शैक्षिक मूल्यों से सम्बन्धित अनेक तथ्य हमारे संस्कृत नाटकों में भी उपलब्ध होते है जो आज दूषित होती शिक्षा प्रणाली के उन्नयन में सहायक सिद्ध हो सकते हैं यथा– श्रेष्ठ शिक्षक के बारे में **'मालविकाग्निमित्र'** में कहा गया है कि किसी का स्वयं का ज्ञान विशिष्ट होता है और किसी को अध्यापन कला में दक्षता प्राप्त होती है। परन्तु जिन शिक्षकों में इन दोनों गुणों का समुचित सामन्जस्य हो, वे ही श्रेष्ठ शिक्षक कहे जाते हैं।[45] अध्यापक के दोषों को उजागर करते हुए कालिदास ने कहा है कि जो स्वयं को प्रतिष्ठित समझकर विवाद से डरता हुआ दूसरों के द्वारा की गई निन्दा को सहन करता है तथा जिसका शास्त्र ज्ञान केवल जीविकोपार्जन के लिए है, वह ज्ञान को बेचने वाला वणिक् के समान है–

लब्धास्पदोऽस्मीति विवादभीरोस्तितिक्षमाणस्य परेण निन्दाम्।

यस्यागमः केवल जीविकायै, तं ज्ञान पण्यं वणिजं वदन्ति।।"[46]

समाज एवं शिष्य वर्ग दोनों के लिए गुरु को गौरव पूर्ण स्थान देना भारतीय परम्परा रही है। श्रेष्ठ विद्या प्रदान करने के कारण पिता एवं अग्रज के समान गुरु का भी पितरों में परिगणन होता रहा है।[47]

वसिष्ठ ने गुरु को पिता–माता से भी उत्कृष्ट पद दिया है। माता–पिता तो केवल जन्म के कारण हैं परन्तु गुरु प्रज्ञा रूपी चक्षु प्रदान करता है।[48] अध्यापन कार्य अध्ययन करने वाले पर अधिक निर्भर करता हैं पण्डित लोग उसी शिक्षा को निर्दोष कहते हैं जो विद्वत्त समाज रूपी अग्नि में सुवर्ण के समान उज्ज्वल रहे।[49]

मेघ का जल जिस प्रकार, समुद्र की सीपी में प्रविष्ठ होकर मौक्तिक का रूप धारण कर लेता है उसी प्रकार उत्तम पात्र में रखी गयी शिक्षा अपना उत्कर्ष प्रकट करती है।[50] जिस प्रकार योग्य पुरुष को दी गई कन्या शोभा पाती है उसी प्रकार सुपात्र शिष्य को प्रदान की गई विद्या पूर्णतः फलवती होती है– **"सुशिष्य परिदत्ता व विद्येवाशोचनीया संवृता।"[51]**

प्राचीन विद्वानों ने सदैव स्वस्थ तन में स्वस्थ मन का आग्रह किया है। बाल विद्यार्थी को गुरु अपने आश्रम में रखकर निजी देखरेख में उसके मानसिक गुणों को विकसित करता हुआ उसके हृदय और मस्तिष्क को उन्नत बनाना अपना कर्तव्य समझता है। आधुनिक नाटककार नारायणशास्त्री काङ्कर के द्वारा रचित एकांकी गुरु दक्षिणा में कहा गया है कि कौत्स की तरह सभी शिष्यों को विद्यावान् विनीत और गुरुप्रिय होना चाहिए। वरतन्तु के तुल्य गुरुओं को विद्वान् और शिष्य प्रेमी होना चाहिए। रघु के समान शासकों को प्रभावशाली विद्यानुरागी और विद्वानों का सम्मानकर्ता होना चाहिए।[52] स्वदेश प्रेम

नामक एकांकी में काङ्कर जी ने कहा है कि . स्वदेश में अधीत विधा से परदेश को समृद्ध करना स्वदेश के प्रति विश्वासघात है स्वदेश की सेवा से ही मनुष्य की अधीत विद्या की सफलता है।[53] वर्तमान में देखा जा रहा है कि आज का विद्यार्थी अपने देश में उच्च अध्ययन प्राप्त कर विदेशों को अपनी शिक्षा का लाभ देकर उनको अपने ज्ञान से एवं आर्थिक रूप से सबल बना रहा हैं शिष्य के चारित्रिक विकास के लिए गुरु का व्यक्तित्व आदर्श भूत होता है। लेकिन आज के गुरुओं को तो सिर्फ अपनी फीस से ही मतलब होता है। शिष्य को पाठ समझ में आया या नहीं, शिष्य का चारित्रिक विकास हो रहा है या नहीं इस बात से उन्हें कोई लेना देना नहीं होता। इस प्रकार प्राचीन शिक्षा प्रणाली में तथा संस्कृत नाटकों में सभी प्रकार के जीवन मूल्य समाहित हैं ये शैक्षिक मूल्य किसी मत, पन्थ, सम्प्रदाय या देशकाल की सीमाओं में नहीं बँधे, ये मूल्य सार्वत्रिक, सार्वकालिक तथा सार्वभौमिक हैं। वर्तमान काल में भारत में वैदिक जीवन मूल्यों की अवहेलना होने से गुरु शिष्यों के सम्बन्ध बिगड़ गये हैं। आज की शिक्षा पद्धति में गुरु तथा शिष्य के सम्बन्धों में मधुरता नगण्य हो गई है, शिष्यों में गुरु भक्ति का मूल्य लुप्त प्राय हो गया है, व्यसनों के पाश में छात्रों की आबद्धता उनके नैतिक पतन की परिचायक है गुरु में भी शिष्यों के प्रति पुत्रवत् भाव कम ही देखा जाता है, जबकि गुरु को शिष्य का नया जन्म दाता माना जाता है इसीलिए वह आध्यात्मिक पिता होता है, वैदिक काल में गुरु शिष्यं सम्बन्ध अति मधुर थे। कठोपनिषद् के शान्तिपाठ में गुरु शिष्य सम्बन्धों की चरम परिणति देखी जा सकती है, जहाँ अध्ययन के प्रारम्भ में दोनों मिलकर प्रभु से प्रार्थना करते हैं ष्हे भगवान आप हम दोनों गुरु–शिष्य की साथ–साथ रक्षा करें। साथ–साथ हमारा पालन करें। हम दोनों की अधीत विद्या तेजोमयी हो और हम दोनों परस्पर वैष न करें।[54] इस प्रकार का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध वैदिक शिक्षा प्रणाली के अतिरिक्त कहीं नहीं प्राप्त होता./यह सम्पूर्ण भूतल के लिए आदर्श है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली की विविध समस्याओं के समाधान के लिए अनेक आयोग, समितियाँ, नियम, कानून बनाने . की अपेक्षा नीति निर्धारकों, समाज सुधारकों, शिक्षा विशेषज्ञों को वैदिक शिक्षा प्रणाली तथा संस्कृत नाटकों में उल्लिखित शैक्षिक मूल्यों रूपी संजीवनी पर अवश्य ही विचार एवं मंथन करना चाहिए, क्योंकि हमारे प्राचीन ग्रन्थों में एवं संस्कृत नाटकों में वर्तमान अव्यावहारिक एवं रोग ग्रस्त वर्तमान शिक्षा प्रणाली का निदान संभव है।

पर्यावरणीय मूल्यों की उपयोगिता एवं प्रासंगिकता– जैव विविधता संरक्षण तथा पर्यावरणीय मूल्य यद्यपि वर्तमान समय की आवश्यकता है। लेकिन संस्कृत वाङ्मय एवं नाटकों में इसके सूत्र प्राप्त होते हैं। वेदों से प्रारम्भ होकर उपनिषदों धर्मशास्त्रों एवं लौकिक संस्कृत साहित्य में भी पर्यावरणीय मूल्यों का वर्णन

आया है। वेदों में प्रकृति के पंच महाभूतों से लेकर वनस्पतियों एवं छोटे जीवों से लेकर मानव पर्यन्त पाणिमात्र को पुष्ट कल्याण एवं श्रेष्ठ फल प्रदान करने के लिए प्रार्थनाएं की गयी हैं।[55]

'इदं न मम' प्रभृत वाक्य तथा 'स्वाहा' प्रभृत शब्द से त्याग एवं लोकहित की भावना पोषित होती है। स्मृति ग्रन्थों में प्रकृति सन्तुलन के निर्वहन हेतु वनस्पतियों पशुओं, पक्षियों की उपयोगिता को स्वीकारा गया है। मनु ने कहा है– **'अहिंसायैव सर्वभूतानां कार्य श्रेयाऽनुशासनम्'**[56] स्वसुखसाधन हेतु प्रणिहिंसा उचित नहीं है क्योंकि

योऽहिंसकानि भूतानि हिनास्त्यात्मसुखेच्छया।
स जीवश्च मृतश्चौव न क्वचित् सुखमेद्यते।।[57]

'अभिज्ञानशाकुन्तलम्'[58] में सरसरोवर का, वनस्पतियों का तथा जीवों का अथवा प्रकृति के समस्त घटकों की उपयोगिता तथा उपादेयता को स्वीकार करते हुए उनके संरक्षण एवं संवर्धन पर बल दिया गया है। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि 'शास्त्रों' का प्रयोजन निखिल प्राणिमात्र का संरक्षण है।

उपसंहार– सरकार ने विभिन्न प्राकृतिक आवासों को सुरक्षित एवं संवर्धित करने के लिए वन्य –जीवन अधिनियम, पारित किया जिसके अन्तर्गत अनेक राष्ट्रीय उद्यानों एवं वन्य जीव अभ्यारण्यों की स्थापना की गई। भारत सरकार के नन्दादेवी (उत्तराखण्ड), शान्तघाटी (केरल) मन्नार की घाटी (तमिलनाडु) जैसे स्थानों को जैव विविधता क्षेत्र घोषित किया है। जैव विविधता एवं पर्यावरण संरक्षण हेतु किये गये जन–आन्दोलन अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय हैं। इसी प्रकार 'रक्षासूत्र' आन्दोलन' नर्मदा बचाओं आन्दोलन, आदि भी महत्त्वपूर्ण हैं।

पर्यावरणीय मूल्यों के संरक्षण हेतु विविध सुझाव दिये जा सकते हैं संस्कृत नाटकों में वर्णित पर्यावरणीय मूल्यों को व्यक्ति हृदय से अनुमोदित कर स्वयं अपना कर्तव्य समझ कर उनका पालन करे। वन्य जीवों के निवास स्थान एवं उनके प्रजनन क्षेत्रों की पहचान कर उनके संरक्षण को सुनिश्चित किया जाए। संकटापन्न प्रजातियों को सुरक्षित करने के लिए कार्य योजनाओं का निर्माण किया जाए, जिसमें उनके संरक्षण एवं पुनर्प्रजनन हेतु आवश्यक उपाय किये जाए। खाद्य–फसलों, चारा प्रदान करने वाले वृक्षों, ईधन एवं औद्योगिक कच्चे माल के रूप में उत्पादन हेतु प्रयोग में आने वाले वृक्षों के उत्पादन हेतु प्रयास किये जाएं तथा पशुओं के अवैध शिकार पर रोक के लिए बनाये गये कानूनों का अनिवार्य रूप से पालन किया जाय। पर्यावरण के संरक्षण हेतु किये जाने वाले सांस्कृतिक समायोजन मानव के हाथ में है। वर्तमान में अपराधिक वृत्तियों, भ्रष्टाचार व असंवैधानिक कार्यों से सामान्य मनुष्य दुःखी हो रहा है जिसके कारण उनके दुःख से उत्पन्न वेदना ईतियोंश के रूप में जन्म लेती है। जिसके फल स्वरूप जन जीवन

के साथ–साथ प्रकृति के भौतिक स्वरूप को भी हानि पहुँची है। इससे सिद्ध होता है कि आज प्रकृति की उग्रता का कारण अवांछित मानवीय हस्तक्षेप ही रहा है। चराचर जगत् की सुख शान्ति के लिए मानव के अनावश्यक हस्तक्षेप को समाप्त कर प्रकृति के मौलिक स्वरूप को पाने के लिए हमें कटिबद्ध होना चाहिए।

साहित्य समाज का दर्पण होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि संस्कृत नाटक भी अपने समाज की छवि प्रस्तुत करने के साथ–साथ तत्कालीन मूल्यों को भी पाठक के सम्मुख अभिव्यक्त करते हैं। शकुन्तला के प्रत्याख्यानके समय मौन रहने वाले और लोकापवाद के कारण सीता के परित्याग द्वारा अपने संगठन का नकारात्मक उपयोग करने वाले समाज का संस्कृत नाटकों में स्वाभाविक चित्रण है। संस्कृत नाटककार को समाज का एक पक्षीय स्वरूप कभी भी अभीष्ट नहीं रहा, यही कारण है कि संस्कृत नाटककार ने यथावसर मूल्यों की स्थापना भी की है। संस्कृत नाटककार की सामाजिक चेतना का धरातल व्यापक रहा है अतएव उसकी कल्पना 'वसुधैव कुटुम्बकम्'' व **''सर्वे भवन्तु सुखिनः''** की है जिसे वह नाटकों में साक्षात् कराना चाहता है। वह विश्व के कण–कण में चेतना का परिदर्शन करता है यही कारण है कि उसके जगत् में प्रकृति उसकी चिरसहचरी और पशु पक्षी जगत् के सगे सम्बन्धी हो जाते हैं।

ज्यों ज्यों मानव संस्कृति का विकास हुआ त्यों–त्यों उसके मूल्य स्थापित होते गये। भारतीय संस्कृति की परिवर्तनशीलता ने स्वयं को नष्ट होने से बचा लिया। जिन संस्कृतियों में इसका अभाव था वे समय के क्रूर प्रहार से लुप्त हो गयीं। भारतीय संस्कृति ने जिन संस्थाओं एवं अवधाराणओं जैसे वर्णाश्रम व्यवस्था, गुरुकुल प्रणाली जीवन के विभिन्न अवसरों पर किये जाने वाले विभिन्न संस्कार आदि ने मानव मात्र में जिन मूल्यों की स्थापना की थी उन्हीं मूल्यों के कारण हमारा देश सब देशों का शिरोमणि है। यही वह प्राचीन देश है जिसने ज्ञान की रश्मियाँ पूरे विश्व को प्रदान की। **सत्य, अहिंसा शांति, त्याग, सद्भाव, परोपकार तथा निष्काम कर्म शरणागत रक्षा, अतिथिदेवोभवः** जैसे विविध मूल्यों को आत्मसात करने का संदेश विश्व को दिया है। भारतीय संस्कृति मानवमात्र को सदैव जीवन के नैरन्तर्य की चेतना, मानव जीवन के प्रति अटूट सम्मान, उर्ध्वगति के लिए सदैव सत्कर्म तथा मोक्ष एवं निर्वाण के प्रति सतत् प्रयत्नशील रहने की प्रेरणा देती है। भारतीय संस्कृति में समाहित मूल्यों के बारे में कहा जाता है कि–

यूनान मिस्र सब मिट गये जहाँ से,
बाकी अभी तलक है, नामों निशा हमारा।
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी

सदियों रहा दुश्मन दौरे जहाँ हमारा।

"इकबाल"

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. धर्मवीर भारती मानवमूल्य और साहित्य
2. धर्मवीर भारती मानव मूल्य और साहित्य पृ.79
3. स्वामी ओम आनन्द सरस्वती : राजस्थान के संत साहित्य मे मुल्य बोध : राजस्थान का संत साहित्य स.वीणा लाहोटी पृ.132
4. वामन राव आप्टे : संस्कृत हिन्दी कोश, पृ.182
5. स्वप्न 1.4
6. ईशावास्योपनिषद – 1.1
7. वाल्मी. रा., सुन्दरकाण्ड 1.105 गच्छ !
8. भरत रोहकं ब्रूहि – कुमार विधिशिष्टेन सत्कारेण वत्सराजमग्रतः कृत्वा प्रवेश्यताममात्य इति। प्रतिज्ञा. यौ. – अंक 2 पृ. 64, भा. ना. च.
9. वही, अंक 2 श्लोक–10
10. अभिषेक ना. चतुर्थ अंक पृ. 87 भा. ना. चक्र
11. आः अतिथि परिभाविनी,
    विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा।
    तपोधनं वेत्सि न मामुपस्थितम्।।
    स्मरिष्यति त्वा न स बोधितोऽपि स–
    न्कथा प्रमतः कृतामिव।। अभि. शाकु. – 4.1
12. अथर्ववेद – 17–1–7
13. यजुर्वेद – 36/17
14. ऋग्वेद – 6.75.14
15. उपनिषद प्रार्थना
16. विक्रमो.– भरत वाक्य
17. वाल्मीकि रा. उत्तरकाण्ड–40/13

18. वही, किष्किन्धा काण्ड—17—28

19. मनुस्मृति — 7.3. 4

20. वन गमननिवृत्तिः पार्थिवस्येव ताव
न्ममपितृपरवत्ता बालभावः स एव।
नवनृपतिविमर्श नास्ति शङ्का प्रजाना
मथ च न परिभागैर्वचिता भ्रातरो मे।।

21. प्रतिमा अंक—2 पृ. 47 भा. ना. चक्रप्रतिमा — 1.14

22. उ. रा. 1.11

23. येन येन वियुज्यन्ते प्रजाः स्निग्धेन बन्धुना।
स स पापादृते तासां दुष्यन्त इति घुष्यताम्।। अभि शाकु. 6.23

24. अभि शाकु. अंक 6 पृ. 246 निरूपण विद्यालंकार षष्ठ सं. 1979
अभि. शाकु. 5.5

25. मुद्रा. अंक—1 पृ.

26. प्रजाः प्रजाः स्वा इव तन्त्रयित्वा निषेवतेऽशान्तमना विविक्तम्।
यूथानि संचार्य रविप्रतप्तः शीतं दिवा स्थानमिव द्विपेन्द्रः।।

27. आलोकान्तात्प्रतिहततमोवृत्तिरासां प्रजानां
तुल्योद्योगस्तव च सवितुश्चाधिकारो मतो नः।
तिष्ठत्येकः क्षणमधिपतिर्योतिषां व्योममध्ये
षष्ठे काले त्वमपि लभसे देव विश्रान्तिमहः।। विक्रमों 2.1

28. नियमयसि कुमार्गप्रस्थितानात्तदण्डः
प्रशमयसि विवादं कल्पसे रक्षणाय।
अतनुषु विभवेषु ज्ञातयः सन्तु नाम
त्वयि तु परिसमाप्तं बन्धुकृत्यं प्रजानाम्।। अभि. शाकु. 5.8

29. अभि. शाकु. —5.8

30. वही, 1.23

31. स्वदेश प्रेम — स. ना. र. — पृ. 201—206

32. राष्ट्ररक्षणम् — पृ. 164

33. भर्तृहरि का नीतिशतकम् – श्लोक 12

34. अथर्ववेद – 7/16/1

35. ऋग्वेद – 10/182/3

36. वहीं, 1/6/3

37. यजुर्वेद –40/14

38. ईशावास्योपनिषद् – मन्त्र – 11

39. अथर्ववेद दृ 19/41/1

40. यजुर्वेद दृ 26/2

41. ऋग्वेद – 1/48/4

42. वही 8/85/4

43. वही 1/105/12

44. बृहदारण्यक उपषिद् – 15.7

45. ''शिलष्टा क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था,
संक्रान्तिन्यस्य विशेष युक्ता।
यस्योभयं साधु स शिक्षकाणां
धुरि प्रतिष्ठापयितयव्य एव ।। मालविका. 1.16

46. मालविकाग्निमित्र 1.17

47. ज्येष्ठो भ्राता पितावापि यश्चविद्यां प्रयच्छति।
त्रयस्ते पितरौ ज्ञेया धर्मे च पथि वर्तिनः ।। वाल्मीकि. रा. किष्किन्धाकाण्ड, 18–13

48. पिता होनं जनयति पुरुषं पुरुषर्षम।
प्रज्ञां ददाति चाचार्यस्तस्मात्स गुरुरूच्यते।। वाल्मी. रा. अयोध्याकाण्ड ।।

49. उपदेशंविदुः शुद्धं सन्तस्तमुपदेशिन।
श्यामायते न युएमासु यः कांचमिवाग्निषु।। मालविका 2.9

50. पात्र विशेषे न्यस्तं गुणान्तरं व्रजति शिल्पमाद्यातुः।
जलमिव समुद्रशुक्तो मुक्ताफलतां पयोदस्य।। मालविका 1.6

51. अभि. शाकु. अंक–4, पृ. 128

52. गुरु दक्षिणा – स. ना. र. दृ पृ. 42.43

53. स्वदेश प्रेम – स. ना. र. वृ. 201–206

54. ऊँ सहनाववतु सहनौ भुनक्तु सहवीर्यं करवाव है।
तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ।। कठोपनिषद–शान्तिपाठ

55. (क) ऋग्वेद 7.35–5
(ख) ऋग्वेद 9.11.3
(ग) यजुर्वेद 19.36

56. मनुस्मृति– 5.45

57. अभि. शाक. – 1.10. 1.11, 4.10

58. अतिवृष्टिरनावृष्टिः शलभाः मूषकाः शुका. प्रत्यासन्नाश्च राजानः षडेता ईतयः स्मृताः। संस्कृत हिन्दी कोश, वामन शिवरामआप्टे, पृ. सं. 179

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

शिक्षा में कलाओं की अवधारणा

प्रो. अजय कुमार जैतली
विभागाध्यक्ष दृश्य कला विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश।
हिना यादव
शोध.छात्रा, दृश्य कला विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय,प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत।

Article Info
Volume 5, Issue 2
Page Number : 47-51

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Accepted : 15 March 2022
Published : 30 March 2022

सरांश- आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और धार्मिक सामन्जस्य से ओतप्रोत कला का सबसें विशुद्ध रुप यदि कहीं अपने समृद्ध अवस्था में मिलता है तो, वह भारतवर्ष है। वर्तमान में कलाओं के अध्ययन को दो तरह से देखा जा सकता है– पहला स्वतन्त्र विषय के रूप में तथा दूसरा अन्य विषयों को सिखाने के 'माध्यम' के रूप में। कला और शिक्षा दोनों ही राष्ट्रीय महत्व के विषय हैं। 'कला शिक्षा' का सबसे आसान 'अभिव्यक्ति' व ' अधिगम ' का प्रथम सशक्त माध्यम है। कलाकार नन्दलाल बोस का मानना है ''कि कला शिक्षण का उद्देश्य कलाकार का निर्माण नहीं बल्कि कलाबोध और कलात्मक व्यवहार को विकसित करना है। इसके लिए अलग से कला विषय की जरुरत नहीं बल्कि हर विषय के शिक्षण मे, शाला की साज–सज्जा में, और दैनिक व वार्षिक गतिविधियों में कलात्मकता का पुट समाहित करना अधिक उपयोगी है।'' एक दूरदर्शी कलाकार द्वारा 'कला शिक्षा' के मूल्य को शिक्षा के क्षेत्र में बहुत पहले ही अनुभव कर लिया गया था। बदलते परिदृश्य में वैश्विक स्तर पर पहुच सुनिश्चित करने के लिए शिक्षा की गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी ही प्रथम विकल्प है। विभिन्न शिक्षा समितियों द्वारा शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए समय–समय पर अनुशंसायें (Recommendations) की गई। एक सुदृढ़ शिक्षा प्रणाली जो भारतवर्ष को विकासशील से विकसित भारत बनने में सीधे योगदान देती है। मनुष्य एकमात्र प्राणी है जिसमें कलात्मकबोध और सौन्दर्यबोध पाया जाता है। इस धरती पर कदम रखने से लेकर आज आधुनिक समाज में सर्वे–सर्वा बनने तक का सफर उसने अपनी कलात्मक बौद्धिक क्षमता के बल पर ही तय किया। आदिमानव से आदर्श-मानव के पीछे, लगातार मस्तिष्क विकास, उसके समाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, स्थिति को सुदृढ़ बनाती गयी। कलाओं को अभिव्यक्ति की एक भाषा के रूप में देखा जा सकता है जो ललित कला (दृश्यकला या प्रदर्शन कला) या उपयोगी कला (हस्तकला, यांत्रिक कला) के रुप में होती हैं। कलाओं को शिक्षा में अन्य विषयों के साथ संयोजित करके विषय की अर्मूत अवधारणा को मूर्त रूप दिया जा सकता है। कला के इस सहयोग द्वारा अमुक विषय के प्रति एक खास समझ व दीठ विकसित होती है, साथ ही ज्ञान में विस्तार भी होता है। वर्तमान समय में कलाओं के समेकन (अन्य विषयों के साथ कला के एकीकरण) द्वारा प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा एवं उच्च शिक्षा में शिक्षण को प्रभावी बनाने का प्रयास जारी है, जिसमें नि:सन्देह कलाएँ हमेशा की तरह अपनी उपस्थिति से शिक्षण को नये आयाम प्रस्तुत करते हुए कुछ सार्थक बदलाव चिन्हित करेंगी।

शब्द कुंजी- शिक्षा, कलाएँ, सौन्दर्यबोध, समेकन, मानव जीवन, अवधारणा, उपादेयता।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

प्रस्तावना- मनुष्य सबसे पहले एक कलाकार है तत्पश्चात मनुष्य। कलात्मक क्षमता जन्म से ही उसके पास होती है। जब वह शिशु होता है तब बिना किसी भाषा के अपनी माँ से संवाद करता है। मानव शुरूआत से ही जिज्ञासु प्रवृत्ति होने के कारण अनगिनत ऐसे कार्यों को अनजाने ही किया, जिसका परिणाम उसे और अधिक उत्सुक बनाता गया उदाहारण स्वरुप मानव ने आग का अविष्कार दो पत्थरो को रगड़कर किया।[i] उसने दो समान आकार वाले सूर्य और चन्द्रमा के न सिर्फ आकार बल्कि उनके स्वभाव व उनसे पड़ने वाले प्रभाव को भी समझना शुरू किया। यह सम्भवत: तभी हुआ जब मानव अपने आस–पास में होने वाली समस्त गतिविधियों के प्रति सचेत रहा और प्रकृति में होने वाली किसी भी क्रिया के 'कारण' और 'परिणाम' का अवलोकन हर क्षण करता रहा। यहां भाषा के रूप में पहले कलाएँ रहीं या यूं कहें कि भाषा की कमी को कलाओं ने पूरा किया। मानव प्रवृत्ति है कि जिससे जितनी बार मुलाकात होती है या जिसके सानिद्ध में वह ज्यादा समय व्यतीत करता है उससे उसका सम्बन्ध आत्मीय होता जाता है और वह उससे सहजता महसूस करता है। वह अपने रहने/ठहरने लायक गुफाओं को गाँवो मे बदलने के बाद जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति में जुट गया। कला ने मानव को वह साधन दिया जिससे वह जीवन क्षेत्र में सफल और अर्थपूर्ण जीवन जीने में समर्थ बने।

हमारे धर्मशास्त्रों में 'ज्ञान' एवं 'कला' दोनों की देवी 'सरस्वती' है। पूजा अर्चना हेतु यज्ञ करते समय पूजा की सामग्री में कलावा (सूत का लच्छा जो मांगलिक अवसरों पर कलाई पर बाधा जाता है।) यहां पर कलावा वस्त्र के प्रतीक के रूप में होता है परन्तु कच्चे सूत का यह कलावा हमें कला की महत्ता की याद दिलाता है जिसका मतलब कलावा को कलाई में बाधकर हम कलापूर्ण होना सीखते हैं। करमूल अर्थात कलाई हमारे हाथों का आधार सिद्ध होती है जो हमारे अन्दर छिपे कला भावों को मूर्त रूप प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।[ii]

पुराकाल में भारत विश्वगुरू की उपाधि से विभूषित रहा इसके पीछे का महत्वपूर्ण कारण यहां की उन्नत व्यापक शिक्षा व्यवस्था रहीं। जहां शास्त्रीय ज्ञान के साथ–साथ जीवनपयोगी लौकिक ज्ञान अर्थात कला का सम्यक ज्ञान का समावेश होना था। वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली औपनिवेश काल की देन है। जब हम पराधीन थे तब आक्रांताओं ने अपने औपनिवेशिक हितों की रक्षा के लिए इस शिक्षा प्रणाली को प्रारम्भ किया था।[iii] कला शिक्षा के रूप में '1850 के मद्रास स्कूल ऑफ आर्ट' से कला की अकादमिक शिक्षा प्रारम्भ होती है। आगे इसी क्रम में '1854 कलकत्ता स्कूल ऑफ आर्ट', '1857 मुम्बई स्कूल ऑफ आर्ट', '1875 लाहौर स्कूल ऑफ आर्ट' भी इसी तर्ज पर खोले गये। हमारे भारतीय संस्कृति में तो खुले आसमान के नीचे प्रकृति के सानिद्ध में कलाओं की शिक्षा प्रदान करने की खास परम्परा रही है, जिस अनूठी परम्परा को कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 1901 में शान्तिनिकेतन के एक छोटे स्कूल के रूप में फिर से जीवित किया। वर्तमान में शान्तिनिकेतन कला, संगीत, नाटक जैसी सांस्कृतिक कलाओं के साथ शिक्षा का 'हब' है। 1919 ई. में कविवर ने यहीं कला के एक स्कूल 'कला भवन' की नीव भी रखीं जो 1921 ई. में स्थापित विश्व भारती विश्वविद्यालय का हिस्सा बन गया।[iv] भारत सरकार द्वारा 1954 में कलाओं के उत्थान के लिए 'ललित कला अकादमी' नाम की एक स्वायत्त संस्था का गठन किया गया, जिसका उद्घाटन हमारे पहले शिक्षा मंत्री 'मौलाना अबुल कलाम अज़ाद' द्वारा किया गया था।[v]

मनुष्य आन्नद की प्राप्ति और ज्ञान के लिए जितने उपायों का विकास किया, उसमे भाषा कला का विशेष स्थान है। साहित्य, दर्शन, विज्ञान और प्रकृति के नाना विषयों की चर्चा भाषा को माध्यम बनाकर ही की जाती है। साहित्य मनुष्य को अभिव्यक्ति देता है पर उसकी अभिव्यक्ति का क्षेत्र सीमित होता है। उस अभाव की पूर्ति करती

हैं ललित कलाएँ– चित्रकला, मूर्तिकला, स्थापत्यकला, संगीत कला एवं काव्यकला। जैसे साहित्य की अभिव्यक्ति की अपनी विशिष्टता है, वैसे ही चित्र, मूर्ति, नृत्य व अन्य ललित कलाओं की भी।[vi] भारत में कला शिक्षा एक विषय है, जिसकी खुद की एक भाषा व शब्दावली के साथ सिद्धान्त भी है। कला शिक्षा में कला से जुड़े सभी तथ्यों विभिन्न आयामों को समझने के कुछ सिद्धान्त व प्रस्तुति एवं प्रदर्शन की खास विधियाँ भी होती हैं। कला शिक्षा भी अन्य विषयों की तरह एक विषय के रुप में रहा मगर उतना पसन्दीदा व बाकी विषयों की तरह नहीं। इस खास विषय को पढ़ने वाला जरूरी नही कि कलाकार ही हो। कला जीवन के साथ–साथ अग्रसर होती है। कला 'सीखने' और सिखाने' की प्रक्रिया का अभिन्न अंग बनकर हमारे संस्थानों के पाठ्यक्रम को रूचिकर बना रहीं है।

''29 जुलाई 2020 को हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी द्वारा 'नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति' की घोषणा की गई। यह शिक्षा नीति अंतरिक्ष वैज्ञानिक 'के. कस्तूरीरंगन' की अध्यक्षता वाली समिति की रिपोर्ट पर आधारित है।''[vii] इस नई शिक्षा नीति के आते ही व्यापक चर्चाए प्रारम्भ हो गई। सवाल ये सामने है कि आखिर 34 साल बाद नई शिक्षा नीति लाने की आवश्यक्ता क्यों महसूस हुई एवं 1986 की शिक्षा नीति में ऐसी कौन सी त्रुटियाँ रह गयी थी जिसे नयी शिक्षा नीति के द्वारा दूर किया गया।[viii] इस नीति में कला और शिक्षा में कुछ वांछनीय बदलाव किए गए है। अभी तक कला, संगीत, क्राफ्ट, स्पोर्ट्स, योग आदि को सहायक पाठ्यक्रम (Co Curricular) एक्टिविटी के तौर पर पढ़ते आए हैं। अब ये मुख्य पाठ्यक्रम का हिस्सा होंगे इन्हे एक्स्ट्रा करिकुलर एक्टिविटी भर नहीं कहा जायेगा।[ix] कला अब रोजगारपरक और व्यावसायिक भी होगी। नई शिक्षा नीति 2020 में शिक्षा व कला के माध्यम से अन्य विषयों को रूचिकर बनाने की एक विशेष पहल शामिल की है जिसमें कला को अन्य सभी विषयों के साथ समेकित किया जा सकता है अर्थात विभिन्न विषयों के सीखने–सिखाने में कला संयोजन। भाषा, सामाजिक अध्ययन, विज्ञान और गणित जैसे विषयों को कला के साथ जोड़कर उस विषय की जटिलता व उसकी अवधारणा को बेहद सरल व सुगम बनाया जा सकता है। कलाओं द्वारा विषयों को रुचिकर बनाकर एक ऐसा माहौल तैयार किया जाता है जिसमें न सिर्फ उनका शरीर बल्कि ह्रदय और मस्तिष्क भी एक साथ काम करते है।[x]

हमारे समाज में उपस्थित प्रत्येक वस्तुए किसी कलात्मक मानव मस्तिष्क के देन है। हम सुबह उठकर जिस प्याले में चाय पीते है। हम चाय पीते–पीते दुनियाँभर की खबर अपने घर में जिस न्यूजपेपर के माध्यम से पाते हैं। क्या हमें मालूम है कि पहली बार न्यूज को अखबार में छापने का विचार किसका था और उसे क्यो जरूरत महसूस हुई अखबार की? हम सुबह ऑफिस पहुचने के लिए जिस पुल से होकर जाते हैं, वो भी किसी व्यक्ति के मस्तिष्क की उपज है। जरुरत की हर वो चीज जो आज आपके पास है जिसका इस्तेमाल आप आज बड़ी आसानी से कर रहे हैं, जिससे आप आनन्दित हो रहे, वो सबसे पहले किसी मानव के मस्तिष्क के कैनवास पर बनी है तत्पश्चात वास्तविक जगत में अपने वास्तविक रुप में आज हमारे सामने हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सृजन दो बार होता है पहला मस्तिष्क में दूसरा वास्तविक जगत में। 'कला' को लेकर हमेशा से आम लागों की एक विशिष्ट अवधारणा रही है कि ''कला बच्चों को पठन–पाठन से दूर कर देती है, जिससे बच्चों का शैक्षणिक विकास अवरूद्ध हो जाता है। शिक्षाविदों ने यह सिद्ध किया है, कि कला शिक्षा कोई पृथक ज्ञान नहीं है बल्कि हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा है जिसका प्रयोग हम किसी न किसी रूप में हर क्षण करते हैं।''[गप] अवधारणाओं के निर्माण में अनेक कारक होते है। जिसमें बौद्धिक कारक, सामाजिक कारक साथ में हमारी शिक्षा व्यवस्था भी एक महत्वपूर्ण कारक रहीं। ''हमारे देश में विश्वविद्यालयों की ओर से अब तक ऐसी कोई व्यवस्था

नहीं की गई है, वह नितान्त अपर्याप्त है। इसका एक कारण सम्भवतः यह है कि हमारे यहां अनेक लोगों की मान्यता है की कला–साधन मात्र पेशेवर कलाकारों का काम है, साधारण आदमी का इससे कुछ लेना–देना नहीं है। "जिसका परिणाम यह निकलता है कि शहर में लगने वाली कला प्रदर्शनियों से उनका कोई वास्ता नहीं और भूले–भटके अगर कभी कला–दीर्घाओं मे पहुच भी जाएं तो उन्हे सौन्दर्य बोध, कलाबोध नहीं होता अर्थात कला के प्रति उनकी समझ बिल्कुल अबूझ पहेली सी होती है।"[xii]

शोध के उद्देश्य- कलाओं द्वारा मानव जीवन में हुए सांस्कृतिक, सामाजिक विकास के क्रम को समझना। कला और शिक्षा के सम्बन्धों को विभिन्न स्तर पर रेखांकित करते हुए शिक्षा में कला की आवश्यकता, कारण व उसकी महत्ता का अध्ययन करना। समाज में कलाओं को लेकर बनी विशिष्ट अवधारणा और विभिन्न पक्षों का अध्ययन करना।

निष्कर्ष– हमारी शिक्षा का उद्देश्य एक मानव का अगर सर्वांगीण विकास करना है, तो हमारे पाठ्यक्रम में कला का स्थान अन्यान्य पढ़ाई लिखाई के विषयों के समान ही होना चाहिए। कला शिक्षा से व्यापक उद्देश्यों की पूर्ति हाती है। 'कला' और 'शिक्षा' ही एकमात्र ऐसे साधन हैं, जो अलग दीठ प्रदान करते हैं। देखने का एक खास किस्म का अपना इतिहास है। एक कलात्मक योग्यता से परिपूर्ण मनुष्य 'देखने' के खास ढंग की कला से बुना हुआ होता है। उसकी सिर्फ आँख ही देखने का कार्य नहीं करती अपितु समस्त ज्ञानेन्द्रियाँ (आँख, कान नाक, जीभ, त्वचा) किसी भी चीज को महसूस करके देखती हैं, छूकर देखती है, सुनकर देखती हैं, चखकर देखती हैं।

भूमण्डलीकरण के इस युग में कला की महत्ता को अनदेखा नहीं किया जा सकता। उच्च गुणवत्ता युक्त शिक्षा, कला के समेकित अध्ययन से निश्चय ही प्राप्त की जा सकती है। कला संज्ञानात्मक विकास करके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को उजला स्वरूप प्रदान करती है। शिक्षित समाज वर्ग ही जन साधारण का आदर्श होता है। कला के समेकन द्वारा जीवंत ज्ञान प्रदान करना व शिक्षण को सरल बनाकर समाज में; समस्त नागरिक द्वारा, भारत को एक वैश्विक ज्ञान का महाशक्ति बनाना है। आज के इस युग में ज्ञान, विज्ञान और अनुसंधान द्वारा ही हम विकसित हो पायेगें। अगर ज्ञान, विज्ञान और अनुसंधान हमारा खुद का नहीं विकसित होगा तो हम दूसरों की तरफ ही ताकते रहेगें। ज्ञान में विश्व को बदलने की 'शक्ति' है जो 'उर्जा' व 'पहचान' प्रदान करती है, वहीं कलाओं में वो शक्ति, क्षमता व निपुणता होती है जो उस उर्जा, पहचान को आत्मविश्वास के साथ अभिव्यक्ति का मार्ग सुझाती हैं। कलाएँ ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को जोड़ते हुए परम्परा को जन्म देती हैं, अर्थात बिन्दुओं के समान आगे बढ़ते हुए सभ्यता व संस्कृति रूपी 'रेखा परम्परा' का निर्माण करती हैं, जो समाज में आधार (Base) का काम करती है, जिस पर सम्पूर्ण मानव जाति का जीवन टिका होता है। किसी समुदाय के परिवेश, समाज, राष्ट्र की संस्कृति व सभ्यता की पहचान एवं संरक्षण कलाओं द्वारा ही सम्भव हुआ। ऐतिहासिक जानकारी के प्रमुख स्त्रोत में कला के अनगिनत उदाहरण द्वारा ही तत्कालीन स्थिति, (सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक) का ज्ञान संभव हो पाया। कला प्रत्येक युग में मानव हित में ही अपनी पूर्णता समझते हुए मानव जीवन के साथ अग्रसर रहीं नि:सन्देह वह आगे भी मानव का कल्याण ही करेगी।

संदर्भग्रन्थ–

i- बी.बी.सी न्यूज, इंसान की किस नस्ल ने आग जलाना पहले सीखा, 21 सितम्बर 2018, बी.बी.सीन्यूज.कॉम।
ii- मिश्र डॉ. धनजय कुमार, संस्कृत वाङगयमय में वर्णित चौसठ कलाओं की उपयोगिता, संस्कृत सेवा सदन, 19 अगस्त 2019.
iii- शर्मा प्रो. गोविन्द प्रसाद, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020: दिशा और दृष्टि, पुस्तक संस्कृति, नवम्बर–दिसम्बर 2020, पृष्ठ संख्या–3
iv- शान्तिनिकेतन, शोकेस, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्राहालय, नई दिल्ली।
v- Sourse-Wikipedia,https://lalitkal.gov.in
vi- बसु नन्दलाल, सुब्रह्मण्यम सी.एन., एकलव्य
vii- Sourse-Wikipedia
viii- दृष्टि द विजन, नई शिक्षा नीति, 2020, 25 अगस्त 2020, माध्यम इन्टरनेट।
ix- aajtak.in, education, नई शिक्षा नीति: पढ़ाई, परीक्षा, रिपोर्ट कार्ड सब में होंगे ये बड़े बदलाव, दिनांक 30 जुलाई 2020, अपडेट 7: 19 ए.एम आईएसटी
x-संदर्भ– कला समेकित शिक्षा अवधारणा प्रतिलिपि, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद द्वारा।
xi- वारिस हसन, मुईन डॉ. सैयद अब्दुल, कला शिक्षा–2 (तृतीय सत्र)।
राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद् (एस.सी.ई.आर.टी), महन्द्रू, पटना (बिहार), द्वारा प्रकाशित एवं बिहार स्टेट टेक्स्ट बुक पबलिशिंग कॉरपोरेशन द्वारा आदेशित तथा राजधानी ऑफसेट प्रिंटर्स, त्रिपोलिया पटना–07 द्वारा मुद्रित, प्रथम संस्करण–2014, ISBN-978-93-84709-08-2
राजस्थान में आधुनिक कला के बढ़ते कदम' डॉ अमित वर्मा, अतिशय कलित, vo1-2, pt, B, Sr4, 2013
xii- बसु नन्दलाल, सुब्रह्मण्यम सी.एन., एकलव्य

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

जन आंदोलनकारी कविता

डॉ अर्चना त्रिपाठी

असिस्टेंट प्रोफेसर, डॉ भीमराव अंबेडकर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

Article Info
Volume 5, Issue 2
Page Number : 52-59
Publication Issue :
March-April-2022
Article History
Accepted : 15 March 2022
Published : 30 March 2022

सारांश- जन आंदोलन से प्रभावित कविताओं के यदि विस्तार और महत्वपूर्ण पक्ष और ठोस पक्ष की बात की जाए तो जन आंदोलनकारी कविताओं के साथ प्रतिबंधित साहित्य को जोड़कर देखा जा सकता है जिसमें जन आंदोलन से प्रभावित कविताओं की ही तरह आक्रोश और जन–जन को शोषण के प्रति विरोध करने का आवाह्न हुआ है।

मुख्य शब्द- जन, आंदोलन, कविता, शोषण, सामाजिक, दासता।

वह आंदोलन जो जनता के हित में किया जाए जन आंदोलन है। यदि जन को व्यापक अर्थ में समझा जाए तो जन का अर्थ है समाज का वह मेहनतकश मज़दूर जो भौतिक मूल्यों का उत्पादन करता है। यह भारत का शोषित वर्ग है, इसी जन की वर्ग चेतना जिस पल अपनी माँगों को व्यक्त करना शुरू करती है वही पल एक आंदोलन की रूपरेखा की भी होती है। पूँजीवादी समाज में जन की दुर्दशा तथा उत्पादन की शक्तियों के हाथों उसकी दासता को लगातार देखा जा रहा है। यह वही 'जन' वही मेहनतकश जनता है जिसके लिए नागार्जुन लिखते हैं–

"पूरी स्पीड में है ट्राम
खाती है दचके पे दचका
सटता है बदन से बदन
पसीने से लथपथ।
.....
कुली–मज़दूर है
बोझा ढोते हैं, खींचते हैं ठेला
थके–माँदें जहाँ–तहाँ हो जाते हैं ढेर
कत्थई दाँतों की मोटी मुस्कान
सच–सच बतलाओ

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

घिन तो नहीं आती है?

जी तो नहीं कुढ़ता है?"[1]

यही जन जब एक जुट होकर व्यवस्था के ख़िलाफ़ खड़ा होता है तो उसे जन चेतना कहते हैं। जन चेतना का विकास जन आंदोलन पर निर्भर है और यह आंदोलन का रूप लेता है मज़दूर, छोटे किसान, दलित की एकजुटता से। यही जन मिलकर जन आंदोलन और जन चेतना का निर्माण करते हैं। आगे चलकर यही जन, चेतना का साहित्य रचती है और परिवर्तन की एकजुट माँग करती है।

जन आंदोलनकारी कविता को दो मुख्य रूपों में देखा जा सकता है।

1. वह कविता जो समाज में हो रहे परिवर्तन की माँग से उत्पन्न आंदोलन या क्रांति से प्रभावित होकर लिखी जाती है।
2. वह कविता जो कवि के मन में सामाजिक उथल-पुथल से उत्पन्न चेतना के द्वारा लिखी जाती है और वे बाद में आंदोलन के नारों के रूप में तब्दील हो जाती है।

उदाहरण स्वरूप रामधारी सिंह दिनकर की कविता 'सिंहासन ख़ाली करो कि जनता आती है....' जे.पी. के संपूर्ण क्रांति का एक प्रमुख नारा था। ऐसे ही शंकर शैलेंद्र, गोरख पांडेय की कविताएँ आज भी परिवर्तन की माँग में सहायक हैं। शंकर शैलेंद्र की कविता- तू ज़िंदा है तो ज़िंदगी की जीत में यकीन कर.... और गोरख की कविता- समाजवाद बबुआ धीरे-धीरे भाई..... पूरे राग में गाई जाती है, जो कि समाजवादी पार्टी पर व्यंग्य के रूप में भी गोरख की 'समाजवाद' कविता को देखा जा सकता है।

स्पष्ट है कि जन आंदोलन, सामाजिक या नव सामाजिक आंदोलन होने के केंद्र में शोषण निहित होता है, शोषण और शोषक वर्ग के ख़िलाफ़ जनता गोलबंद होकर इन शोषकों का असली चेहरा सामने लाती है और 'यह दुनिया बदल देनी चाहिए' की माँग करती है। किसी भी जन आंदोलन या जन आंदोलनकारी कविता के पीछे उस समय की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियाँ ज़िम्मेदार होती हैं।

शोषणकारी परिस्थितियों और उनसे उपजे विद्रोह की बात करते हैं तो उन्नीसवीं सदी का ज़िक्र उल्लेखनीय है। वीरभारत तलवार द्वारा संपादित पुस्तक 'नक्सलबाड़ी के दौर में' में '*भारतीय समाजवादी आंदोलन*' नामक लेख में प्रधान हरिशंकर प्रसाद लिखते हैं- "उन्नीसवीं सदी के मध्य तक अंग्रेज़ों की राजकीय सत्ता भारत के अधिकांश भागों में कायम हो चुकी थी। भारत के उन्नत कुटीर उद्योग को नष्ट कर दिया गया। यहाँ के गाँवों की प्राचीन आर्थिक आत्मनिर्भरता को समाप्त कर दिया गया, फिर भी ग्रामीण क्षेत्रों में सामंतवाद पर कोई विशेष आघात नहीं पहुँचा, अंग्रेज़ी राज्यकाल के प्रारंभ में मुख्यत: छोटे किसान ही थे पर बाद में बँटाईदार और खेतिहर मज़दूर वर्ग भी महत्वपूर्ण हो गए, ये सभी वर्ग कड़ी मेहनत करने के बावज़ूद दाने-दाने को मोहताज हो गए। ये गाँव के धनी वर्ग के चंगुल में रहक़र एक प्रकार की दासता की ज़िंदगी बिताते रहे इन्हें सूद लेना पड़ता था, जिन्हें ये चुका नहीं पाते थे और इनकी जमीनें गिरवी रख ली जाती थीं। इन्हें कर्ज और सूद के भय से छुटकारा नहीं मिल पाता था। अत: ये गाँव के धनी वर्ग के चंगुल में रहक़र एक प्रकार की दासता की ज़िंदगी बिताते रहे हैं। यह सामंतवाद का परिवर्तित रूप था जिसे हम अर्थ-सामंतवादी व्यवस्था के नाम से

[1] प्रतिनिधि कविताएँ, नागार्जुन, संपादक- नामवर सिंह, पृ. 36

संबोधित कर सकते हैं। अंग्रेज़ी शासन का मुख्य उद्देश्य भारत का औपनिवेशिक शोषण था। भारत से सस्ते दामों में खनिज और कृषि-उत्पादित कच्चा माल और गल्ला विदेश भेजा जाता था और इनके बदले में मँहगे दामों पर विदेशी वस्तुएँ भारत में बेची जाती थीं। विदेशी व्यापार के भारतीय दलालों को भी इस लूट का हिस्सा मिलता रहा। बदलती हुई 'उत्पादन की शक्तियों' के कारण 'उत्पादन संबंध' भी बदलने लगे और साथ-साथ अंतर्विरोध भी तीव्र होता गया, जिसका प्रभाव आस-पास के ग्रामीण क्षेत्रों पर भी पड़ा। अत: ये ही क्षेत्र मुख्य रूप से जन आंदोलनों की परंपरा कायम करने मे समर्थ हुए। यद्यपि इस प्रकार बंबई, अहमदाबाद, कोलकाता (तत्कालीन कलकत्ता), चेन्नई (तत्कालीन मद्रास), पंजाब, कानपुर, दिल्ली और अन्य तटवर्तीय क्षेत्रों के औद्योगीकरण की नींव पड़ चुकी थी, फिर भी उन्नीसवीं सदी में उद्योग-धंधों के विकास की गति बहुत ही धीमी रही। इस प्रकार उन्नीसवीं सदी मिल-मज़दूर आंदोलन से प्राय: अछूती रही।"[2]

जन आंदोलनकारी कविता का स्वरूप नागार्जुन की 'वह कौन था' कविता में देख सकते हैं। तेलंगाना आंदोलन में कई किसानों को जेल में डाल दिया गया था, उन पर तरह-तरह की यातनाएँ दी गईं, नागार्जुन लिखते हैं-

"बूचड़ों की क़ैद में है, भाइयों, साथी हमारे

तोड़कर हम जेल का फाटक

उन्हें आज़ाद करने जा रहे हैं..."[3]

इन पंक्तियों में जनांदोलनकारी कविता की पूरी बानगी देखी जा सकती है जिसमें चेतावनी देकर, बिना किसी लाग-लपेट के नागार्जुन कहते हैं 'तोड़कर जेल का फाटक हम छुड़ाने जा रहे हैं...' वहीं मुक्तिबोध अपनी दूरदृष्टि में देख रहे संघर्ष को जब व्यक्त करते हैं तो वह इस तरह सामने आता है-

"हमारी हार का बदला

चुकाने आएगा..... "[4]

इन पंक्तियों में शोषण ख़त्म करने के प्रति एक आशा जताई जा रही है और नागार्जुन सीधे कार्रवाई करने की बात करते हैं- 'हम छुड़ाने जा रहे हैं...'

जन आंदोलनकारी कविता की जब बात आती है तो आलोक धन्वा की कविता 'गोली दागो पोस्टर' उल्लेखनीय है-

"जिस ज़मीन पर

मैं अभी बैठकर लिख रहा हूँ

जिस ज़मीन पर मैं चलता हूँ

जिस ज़मीन को मैं जोतता हूँ "[5]

---

[2] नक्सलबाड़ी के दौर में, संपादक-वीरभारत तलवार, पृ. 183-84

[3] नागार्जुन: चयनित कविताएँ, संपादक- मैनेजर पांडेय, पृ. 13

[4] चाँद का मुँह टेढ़ा है, मुक्तिबोध, पृ. 33

वरवरराव की जनांदोलनकारी कविता की समझ ही है कि वे नक्सलबाड़ी आंदोलन और आदिवासी आंदोलन पर ध्यान न देने वाली सरकार को चेताते हुए लिखते हैं–

"बंज़र मैदान से पूछो
जल से पूछो
आँखों में प्राणों को थामे रखने वाले
भूखे मुँह से पूछो
हाथ आकर भी मुँह में न पहुँची
फ़सलों और खेतों से पूछो"[6]

जनांदोलनकारी कविता लिखने में उर्दू कवियों/शायरों का महत्वपूर्ण स्थान है। उर्दू शायर मख़दूम एक तरफ़ आंदोलन से जुड़े भी रहे और दूसरी तरफ़ आंदोलन के समर्थन में लिखते भी रहे–

"फिरने वाली खेत की मेंड़ों पर बल खाती हुई
कंगनों से खेलती औरों से शरमाती हुई
अजनबी को देखकर ख़ामूश मत हो गाए जा
हाँ तेलंगन गाए जा, बाकी तेलंगन गाए जा"[7]

यही नहीं तेलंगाना आंदोलन पर प्रसिद्ध शायर क़ैफ़ी आज़मी लिखते हैं–

"जईफ (वृद्ध) माँएँ, जवान बहने
झुके हुए सर उठा रही हैं
सुलगती नज़रों की आँच में
भीगी–भीगी पलकें सुखा रही हैं
ज़रा पुकार दो बेचैन नौजवानों को
ज़रा झँझोड़ दो कुचले हुए किसानों को
इधर से काफिला–ए–इंकलाब गुजरेगा..."[8]

---

[5] दुनिया रोज़ बनती है, आलोक धन्वा, पृ. 29
[6] साहस गाथा, वरवरराव, पृ.66
[7] मख़दूम मोहिउद्दीन, बिसात–ए–रक्स, पृ. 16
[8] अभिनव क़दम–26, संपादक– धूमकेतु, पृ. 21

जन आंदोलनकारी कविता को हमेशा रूखी, नीरस रूप में ही देखा जाता रहा है। जबकि उपर्युक्त पंक्तियों में अन्य कविताओं की तरह पूरी संवेदना देखी जा सकती है। जहाँ संवेदना भी है ओज भी है और सामाजिक परिवर्तन की बेचैनी भी। सही रूप में जन आंदोलनकारी कविता एवं कवि को शुष्क श्रेणी में रखने के बजाए इन कवियों के अन्य और कविताओं पर ध्यान देने की ज़रूरत है।

उदाहरण स्वरूप – एक तरफ़ आलोक धन्वा 'गोली दागो पोस्टर' लिखते हैं दूसरी तरफ़ अन्य संवेदनशील मुद्दे– 'भागी हुई लड़कियाँ, जनता का आदमी, ब्रूनों की बेटियाँ' पर भी दृष्टिपात करते हैं और लिखते–लिखते 'शरद की रातें', 'सफ़ेद रात' जैसे कोमल मिज़ाज की कविताएँ लिखना नहीं भूलते। आलोक धन्वा जब पूरे आक्रोश में हैं तो लिखते हैं– 'आदमियत को जीवित रखने के लिए अगर/एक दरोगा को गोली दागने का अधिकार है/तो मुझे क्यों नहीं.....?' वहीं 'सफ़ेद रात' में लिखते हैं–

"पुराने शहर की इस छत पर
पूरे चाँद की रात
याद आ रही है वर्षों पहले की
जंगल की एक रात"[9]

एक बड़े जनकवि, के रूप में प्रसिद्ध नागार्जुन एक तरफ़ 'भोजपुर', 'वह कौन था', 'सच न बोलना', 'मैं तुम्हें अपना चुंबन दूँगा', 'काश क्रांति उतनी आसानी से हुआ करती' लिखते हैं दूसरी तरफ़ अत्यंत संवेदना और सहज रूप में 'अकाल और उसके बाद', 'पैने दाँतो वाली', 'गुलाबी चूड़ियाँ' और 'हरिजन गाथा' जैसे अति संवेदनशील मुद्दे को कटाक्ष रूप में समाज के सामने बड़ी आसानी से रख देते हैं। 'भोजपुर' कविता में नागार्जुन लिखते हैं–

"यही धुआँ में ढूँढ रहा था
यही आग मैं खोज रहा था
यही गंध थी मुझे चाहिए
बारूदी छर्रे की ख़ुश्बू!"[10]

वहीं आगे 'पैने दाँतों वाली' में कविता के बदलते स्वरूप और सौंदर्य का नया रूप और कथ्य देखा जा सकता है–

"धूप में पसरकर लेटी है/मोटी तगड़ी–अधेड़
मादा सुअर....
अखरती नहीं है भरे–पूरे थनों की खींच–तान
दुधमुँहे छौनो की रग–रग में

[9] दुनिया रोज़ बनती है, आलोक धन्वा, पृ. 91

[10] नागार्जुन, प्रतिनिधि कविताएँ, संपादक–नामवर सिंह, पृ. 117

मचल रही है आख़िर माँ की ही तो जान!"[11]

नागार्जुन की 'सत्य' कविता से आज की उठा पटक को बड़ी आसानी से समझा जा सकता है यह कविता ये भी स्पष्ट करती है कि कैसे जनांदोलनकारी कविताएँ समय और समय से पहले के लिए लिखी गई हैं-

"सत्य को लकवा मार गया है

वह लंबे काठ की तरह/पड़ा रहता है, सारा दिन

सारी रात/वह फटी-फटी आँखों से/टुकुर-टुकुर

ताकता रहता है.....

सोचना बंद/समझना बंद/याद करना!"[12]

नागार्जुन जन आंदोलन पर कविता लिखते समय अत्यंत भावावेग के समय भी कविता के रूप और सौंदर्य का ध्यान रखते हैं। अत: इनकी कविताएँ खरी-खरी बात कह देने के बावज़ूद भी नीरस और शुष्क नहीं लगतीं।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना 'इस मृत नगर में' शीर्षक कविता में अत्यंत आसानी से इतनी बड़ी बात कह जाते हैं-

"इस मृत नगर में

रात-दिन मैं चलता हूँ

और अंत में वहीं पहुँच जाता हूँ

जहाँ से चलना शुरू करता हूँ"[13]

जनांदोलनकारी कवि और कविता की यह ख़ासियत है कि या तो मुद्दे को पूरे चेतावनी भरे शब्दों से पिरोया जाए या फिर सहज सरल शब्दों में कटाक्ष करते हुए बात रखी जाएगी। 'मैंने आवाज़ दी है' कविता शीर्षक के माध्यम से सर्वेश्वर जी उस विद्रूप व्यवस्था की तरफ़ इशारा करते हैं जो मनुष्य को जीते जी तो लाश बनने पर मजबूर करती ही है और सचमुच मृत्यु हो जाने पर उस व्यक्ति को लावारिश लाश घोषित कर वहाँ आना भी मुनासिब नहीं समझती, लोग आते भी हैं तो इसलिए कि उस लाश के पास जाने से क्या-क्या लाभ मिल सकता है। एक लाश की मन: स्थिति के माध्यम से हर उस मनुष्य की आवाज़ है यह कविता, जिसने भी इस समाज को सिर्फ़ दिया है लिया कुछ भी नहीं-

"मैंने आवाज़ दी है कोई अभी आएगा

लाश को मेरी वही खींच के ले जाएगा

रास्ते पर पड़ा हूँ इसका मत बुरा मानो"[14]

---

[11] वही, पृ. 80

[12] वही, पृ. 115-16

[13] सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, कविताएँ-2, पृ. 44

[14] सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, कविताएँ-1, पृ. 17-18

जनांदोलनकारी कविता समाज के हर उस पहलू को सामने लाती है जिससे समाज वीभत्स होने की कगार पर है। आज के कवि जो युग जागरण का गीत बड़े आराम से सोकर, खाकर, ऊँघकर लिखते हैं, इन पर कटाक्ष करती है सर्वेश्वर की यह कविता–

"मुझे नींद आ रही है
सोने दो
मेरे सामने काग़ज़
और मेरे हाथ में
स्याही से भरी क़लम
रात–भर रहने दो
सुबह आना
तुम्हें युग–जागरण का गीत मिल जाएगा"[15]

जनांदोलनकारी कवि कुमार विकल मानते थे कि 'कविता आदमी का निजी मामला नहीं है' वे कविता की कला के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी बख़ूबी समझते थे और वे अपने समय को समाज के शोषित और पीड़ित मनुष्य के प्रति नैतिक और मानवीय ज़िम्मेदारी से भी जोड़कर देखते थे, इसीलिए वे अपनी काव्य यात्रा में दोहरे–तिहरे संघर्ष का सामना कर रहे थे। वे 'डरा हुआ आदमी' कविता में लिखते हैं–

"इस घातक व्यवस्था में हर पतली त्वचा वाला
आदमी आरक्षित है
देखना तो यह है कि कौन बैसाखियों के सहारे
जीता है/ और कौन बिना बैसाखियों के
अपने नंगे शरीर से, किसी सुखद या दुखद अंत
तक जूझता है"[16]

यही कवि जब 'एक छोटी सी लड़ाई' में अपने भाव व्यक्त करता है तो कविता इस रूप में आती है–

"मुझे लड़नी है एक छोटी सी लड़ाई
एक झूठी लड़ाई में मैं इतना थक गया हूँ
कि किसी बड़ी लड़ाई के काबिल नहीं रहा
मुझे लडना है

[15] वही, पृ. 102–103
[16] संपूर्ण कविताएँ, कुमार विकल, पृ. 28

जनतंत्र में उग रहे वनतंत्र के ख़िलाफ़"[17]

जन आंदोलन के आदमियों को बहला-फुसलाकर सरकारी एन.जी.ओ में भेजने की प्रक्रिया के साथ आंदोलन को भी राजनीतिक बनाया जाने लगा है। इसीलिए कवि अपने संघर्षों में एक और संघर्ष को जोड़ता है और कहता है 'मुझे लड़ना है जनतंत्र में उग रहे वनतंत्र के ख़िलाफ़!'

सन् साठ के मोहभंग के बाद कविताएँ महत्वपूर्ण रूप से सामने आईं। नामवर सिंह ने जहाँ आज़ादी के बाद के 1950 के दशक को हिंदी साहित्य की दृष्टि से नव-रोमांटिक उत्थान का दौर कहा वहीं 60 के दशक को उन्होंने मोहभंग का दौर कहा। मैनेजर पांडेय ने नामवर सिंह द्वारा प्रयुक्त मोह और मोहभंग की शब्दावली और धारणा तथा उसके उत्प्रेरक तत्वों की पहचान के प्रति बुनियादी मतभेद प्रकट किया। उन्होंने कहा कि सवाल यह है कि स्वप्न भंग, मोह, भ्रम के शिकार कौन लोग थे? क्या नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, मुक्तिबोध, यशपाल, अमरकांत आदि के साहित्य से ये सिद्ध होता है?

लेकिन यदि समाज के व्यापक फलक में साहित्य को देखा जाए तो 1962 के चीन युद्ध में भारत की पराजय का प्रभाव भारत के सभी वर्ग के व्यक्तियों पर पड़ा, पराजय के बाद हुए मोहभंग को अन्य महत्वपूर्ण लेखकों में देखा जा सकता है। चाहे साठोत्तरी कविता हो, अस्सी के बाद की कविता हो, नक्सलबाड़ी के दौर की कविता हो या फिर नब्बे के बाद सामने आई कविताएँ हों जिससे समकालीनता का सवाल भी खड़ा होता है, इस दौर की कविताओं का आकलन सिर्फ़ कुछ चुनिंदा कवियों और लेखकों से ही तय नहीं होता। सन् साठ के बाद जो कविताएँ लिखी जाने लगीं, वे अधिक उग्र, साहसपूर्ण, विद्रोहात्मक, व्यंग्यपूर्ण और उत्तेजक स्वरों से भरी-पूरी थीं। अभिव्यक्ति की तीखी प्रणाली आने के मूल में साठ के बाद का विशद परिवेश रहा, चाहे वह आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक या सांस्कृतिक भी रहा हो, अत: जब वर्ण्य विषय बदलता है तो शिल्प प्रणाली या अभिव्यक्ति प्रणाली का बदलना स्वाभाविक होता है। साठ के बाद की कविता निश्चित रूप से अपनी एक अलग और सार्थक पहचान कायम करती है।

उपर्युक्त उल्लेख को जनांदोलनकारी कवियों के संदर्भ में जोड़कर देखा जाना चाहिए । जन आंदोलन से प्रभावित कविताओं के यदि विस्तार और महत्वपूर्ण पक्ष और ठोस पक्ष की बात की जाए तो जन आंदोलनकारी कविताओं के साथ प्रतिबंधित साहित्य को जोड़कर देखा जा सकता है जिसमें जन आंदोलन से प्रभावित कविताओं की ही तरह आक्रोश और जन-जन को शोषण के प्रति विरोध करने का आवाह्न हुआ है।

सन्दर्भ

1. नागार्जुन - खिचड़ी विप्लव देखा हमने, यात्री प्रकाशन, दिल्ली
2. साठोत्तरी कविता विद्रोही प्रतिमान, रतन कुमार पांडेय, अनंग प्रकाशन, दिल्ली
3. नक्सलबाड़ी आंदोलन और समकालीन हिंदी कविता, देवेंद्र, मेधा बुक्स, दिल्ली
4. प्रगतिशील कविता: कल और आज, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
5. बिसात ए रक्स - मोयुद्दीन मखदूम , पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली
6. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, कविताएं 1, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
7. किसान आंदोलन की साहित्यिक जमीन, अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद।

[17] वही, पृ. 43

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

स्वराज आन्दोलन में संस्कृत भाषा का अवदान

डा0 शालिनी साहनी
संस्कृत विभाग
आर0एम0पी0पी0जी0 कालेज, सीतापुर

शोध सारांष

Article Info
Volume 5, Issue 2

Page Number : 60-68

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Received : 01 March 2022
Published : 17 March 2022

स्वतंत्रता सग्रांम में अनेक संस्कृतज्ञों ने आत्माहुति दी तथा अपनी लेखनी से इस संग्राम को गति प्रदान की। "वयं राष्ट्रे जागृयामः पुरोहिताः" अभ्युन्नति का मूलमंत्र भारतीयों के रक्त में ही महती भावना को जगाने का कार्य संस्कृत के साहित्य ने उस काल में भी किया है।

स्वतंत्रता संग्राम में संस्कृत की सराहनीय भूमिका रही है। संस्कृत की अनेक पत्र–पत्रिकाओं , नाटकों, कृतियो एवं देषभक्ति गीतों ने स्वतंत्रता संग्राम आन्दोलनों को समय–समय पर ऊर्जा से भरकर जनमानस को स्वराज्य प्राप्ति की ओर अग्रसर करने में महती भूमिका निभायी है। संस्कृत कवियों, नाट्ककारों एवं संस्कृत पत्र– पत्रिकाओं के सम्पादकों ने पराधीन भारत माता को मुक्त कराने हेतु जन–जन को जागृति दी, राष्ट्रभक्ति एवं विद्रोह करने हेतु उन्हें प्रेरित किया।

भारत में शासन करने के लिए अंग्रेजो ने संस्कृत भाषा और उसके साहित्य को नष्ट करने का षडयंत्र किया। लार्ड मैकाले नें अंग्रेजो को भारत की सरकारी भाषा तथा षिक्षा का माध्यम बनाया, संस्कृत की पारम्परिक षिक्षा को अवैध घोषित किया, जिससे पूरे देष में संस्कृत के गुरूकुल बंद होने लगे संस्कृत के विद्वान बहुत आहत हुए ।

अरविन्द भारतीयों को सनातन बताते हैं वे भारत माता के पुत्र है उन्हें न तो विपरीत विधि मार सकता है, न काल या यमराज ही उनका कुछ बिगाड़ सकते है। भारत माता अपनी भारतीय सन्तति के बल, पराक्रम और पौरूष की प्रषंसा करती हुई भारतीयो को देष की रक्षा के लिये जगाती है प्रेरित करती है तथा उन्हें अग्नि के समान धधक उठने के लिये ललकारती है।

'भवानी भारती' ने भारतीयों को स्वतंत्रता संग्राम हेतु तैयार करने में महती भूमिका निभाई । इसे स्वतंत्रता संग्राम की गीता कहना सर्वाधिक उपयुक्त होगा। गीता ने जिस प्रकार अर्जुन को युद्ध के लिये सन्नद्ध किया उसी प्रकार 'भवानी भारती' ने भारतीयों को स्वतंत्रता संग्राम के लिये तैयार किया।

परतन्त्रता की कष्टकारी बेड़ियों में जकड़े हुए भारतीय जनमानस को स्वतंत्र कराने के लिए संस्कृत कवियों ने दृष्य श्रव्य अनेकानेक काव्यों के माध्यम से भारतीय जनचेतना को नवीन गति प्रदान की । भारत माता को स्वतंत्र कराने हेतु एक नवजागरण का कार्य संस्कृत कृतियों ने किया। काव्य गीतों, नाटको के माध्यम से विपुल साहित्यराषि की रचना हुई । जिसका प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से भारतीय जनचेतना

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

पर व्यापक प्रभाव रहा है और आज भी इस प्रकार का ऐतिहासिक किंवा काल्पनिक लेखन हो रहा है जिसमें तत्कालिन घटना क्रम का वर्णन किया जा रहा है । जिससे आज का स्वातन्त्रयोत्तर भारत भी उस समय के भगत सिंह, आजाद, लक्ष्मीबाई गाँधी वीरसावरकर आदि स्वातन्त्रय वीरों के योगदान से परिचित हों।

Keyswords - 'वन्देमातरम्', कार्यम् वा साधयेयं देहं वा पातयेयम्, असहयोग आन्दोलन, क्रान्तिकारी, आत्माहुति, "वयं राष्ट्रे जागृयामः पुरोहिताः"
अभ्युन्नति, "जननी जन्मभूमिष्च स्वर्गादपि गरीयसी"

स्वतंत्रता संग्राम में संस्कृत की सराहनीय भूमिका रही है। संस्कृत की अनेक पत्र–पत्रिकाओं , नाटकों, कृतियो एवं देषभक्ति गीतों ने स्वतंत्रता संग्राम आन्दोलनों को समय–समय पर ऊर्जा से भरकर जनमानस को स्वराज्य प्राप्ति की ओर अग्रसर करने में महती भूमिका निभायी है। संस्कृत कवियों, नाट्ककारों एवं संस्कृत पत्र– पत्रिकाओं के सम्पादकों ने पराधीन भारत माता को मुक्त कराने हेतु जन–जन को जागृति दी, राष्ट्रभक्ति एवं विद्रोह करने हेतु उन्हें प्रेरित किया।

वैदिक ऋषियों ने पृथ्वी को मातृभूमि की संज्ञा प्रदान की है और **"जननी जन्मभूमिष्च स्वर्गादपि गरीयसी"** की भावना का प्रसार किया है। "माताभूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः" की महती भावना श्रुति परम्परा द्वारा ही भारतीयों में समाहित रही है।

"वयं राष्ट्रे जागृयामः पुरोहिताः" अभ्युन्नति का मूलमंत्र भारतीयों के रक्त में ही महती भावना को जगाने का कार्य संस्कृत के साहित्य ने उस काल में भी किया है।

स्वतंत्रता सग्रांम में अनेक संस्कृतज्ञों ने आत्माहुति दी तथा अपनी लेखनी से इस संग्राम को गति प्रदान की। ह्यूम ने कांग्रेस की स्थापना भी मुम्बई के गोकुलदास तेजपाल संस्कृत महाविद्यालय में की । प्राचीन ज्ञान–विज्ञान की आदि भाषा संस्कृत आधुनिक समय की भी इतिहास एवं तथ्यपरक भाषा है। स्वराज आन्दोलन में अद्भुत भूमिका निभाने वाले महावीर क्रान्तिकारी चन्द्रषेखर आजाद की विजयगाथा संस्कृत साहित्य में बहुषः गायी गयी है उनकी अमर गाथा को गाते हुए संस्कृत कवियों ने विपुल लेखन किया है और अद्यतन हो रहा है।

संस्कृत के विद्यार्थी आजाद ने 15 वर्ष की स्वल्प आयु में ही अंग्रेंजो के विरूद्ध क्रान्ति की रणभेरी बजा दी थी। आजाद ने 1921 मे **असहयोगी संस्कृत छात्र समिति** के माध्यम से बहिष्कार आन्दोलन का नेतृत्व किया और अंग्रेंजो द्वारा गिरफ्तार किये गये। चन्द्रषेखर आदिवासियों और भीलों के बच्चों के साथ पले–बढे, उन्हीं के साथ धनुष–बाण चलाना सीखा। अपनी माता के आग्रह पर वे संस्कृत षिक्षा के लिये काषी गये और काषिक राजकीय संस्कृत महाविद्यालय में अध्ययन करने लगे। गॉधी जी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर मन्मथनाथ गुप्त द्वारा प्रणवेष चटर्जी के सम्पर्क में आये और स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। जलियांवाला बाग काण्ड से उद्विग्न होकर उन्होंने छात्रों के साथ मिलकर आन्दोलन किया और पहली बार पकड़े गये ।

मदनलाल वर्मा ने उनपर "आजादचन्द्रषेखरो वीरवरः" नामक नाटक की रचना की। स्वामी राम भट्टाचार्य ने खण्डकाव्य विधा में "आजाद चन्द्रषेखर चरितम्" लिखकर आजाद का गुणगान किया, अयोध्या निवासी देवी सहाय पाण्डेय "दीप" ने चन्द्रषेखर आजाद के गुणों पर ग्यारह खण्डों में सम्पूर्ण महाकव्य लिखा ।

संस्कृत में आजाद का यषोगान करने वाले अनेक कवि है। इन समस्त कवियों ने भारतीय स्वराज आन्दोलन को उपजीव्य बनाकर चन्द्रषेखर आजाद के चरित्र की पराकाष्ठा वर्णित की है। वह राष्ट्र के अनन्य उपासक एवं भारत माता के सच्चे पुत्र के रूप में इन काव्यों में वर्णित हैं। वे एक धर्मवीर, दयावार एवं युद्धवीर के रूप में अंकित हैं इन काव्यों में। उनके जीवन का लक्ष्य राष्ट्र को अंग्रेजों से मुक्त कराना ही था।

स्वामी राम भट्टाचार्य आजाद की वीरता को अपनी कविता का स्वर देते है ; आजाद का स्वर उनकी कविता का स्वर बनकर संस्कृत की स्वरलहरियों में गूँजता हुआ युवाओं में राष्ट्रभक्ति का जोष भर देता है। आजाद की पहली गिरफ्तारी के बाद न्यायाधीष के सम्मुख उपस्थित आजाद से न्यायाधीष पूछता है–

क्व ते गृहं का च तवाऽस्ति माता, कस्ते पिता, किं च तवाऽभिधानम् ।
के ते सहायाः ; व्यसनं च किन्ते क्रान्तौ किमिच्छन् समभूः प्रवत्तः।।[1]

अर्थात् तुम्हारा घर कहाँ है, तुम्हारे माता–पिता का नाम क्या है? तुम्हारे सहायक कौन है ? तुम्हारा व्यसन क्या है? और तुम क्या चाह कर क्रान्ति में प्रवृत्त हुए हो?

कारा मेऽस्ति गृहं च भारतमहीं माता मनोज्ञामम,
श्रीरामोऽस्ति पिता–समदृयजरि पून्नाजादनामास्म्यतः ।[2]

अर्थात कारागार मेरा घर है भारतभूमि ही मेरी सुन्दर माता है श्री राम मेरे पिता हैं मैं अजरूप अंग्रेज शत्रुओं का भक्षण करता हूँ । मेरा नाम आजाद है, अंग्रजों को उखाड़ फेंकने में तत्पर मेरी दोनो भुजायें ही मेरी सहायक है और भारतभूमि को अपनाने के इच्छुक तुम अंग्रेजो को उखाड़ फेंकने के लिए ही मैं क्रान्ति के लिये उतरा हूँ।

आजाद के इस उत्तर से क्षुब्ध न्यायाधीष ने उसे पन्द्रह बेंत मारने की सजा सुनायी । निर्दय सिपाही उस कोमल बालक पर कोड़े बरसाने लगा। उस दृष्य की कल्पना मात्र से संस्कृत का कवि रो पड़ता है –

अहो दुरन्तां च परिस्थितिं तां स्मृत्वा विदीर्णावसुधाकथं नो ।
निर्दोषबालं च यदा प्रहर्तुं प्रसह्य पापा निगडैर्बबिन्धुः।[3]

काकोरी काण्ड आदि घटनाओं से आजाद ने अंग्रेजों की नींद उदा दी। भगत सिंह राजगुरू के साथ मिल का लाहौर में साण्डर्स का बध करके उन्होंने लालालाजपत राय की मृत्यु का बदला लिया। आजाद के ही नेतृत्व में केन्द्रीय असेम्बली में बटुकेष्वरदत्त और भगत सिंह ने बम फोडा। पुलिस से चारों ओर से घिर चुके आजाद ने बहुत देर तक भंयकर गोली बारी की फिर आखिरी गोली स्वयं को मार ली किन्तु अंग्रेजी पुलिस के हाथ नही आये । प्रयागराज के चन्द्रषेखर आजाद पार्क में आज भी वह वृक्ष विद्यमान है जिसकी आड़ से अंग्रेजो से लड़ते हुए वे वीरगति को प्राप्त हुए थे ।

भारत में शासन करने के लिए अंग्रेजो ने संस्कृत भाषा और उसके साहित्य को नष्ट करने का षडयंत्र किया। लार्ड मैकाले नें अंग्रेजो को भारत की सरकारी भाषा तथा षिक्षा का माध्यम बनाया, संस्कृत की पारम्परिक षिक्षा को अवैध घोषित किया, जिससे पूरे देष में संस्कृत के गुरूकुल बंद होने लगे संस्कृत के विद्वान बहुत आहत हुए । संस्कृत विद्वानों की एक सभा कलकत्ता में हुई जिसके निर्णय के अनुसार H H Wilson को एक श्लोक बद्ध पत्र भेजा गया –

अस्मिन संस्कृत पाठ सद्यसरसि त्वत्स्थापिता
ये सुधी हंसाः कालवेषन पक्षरहिता दूर गते ते त्वयि।
तत्तीरे निवसन्ति सम्प्रति पुन व्यार्धास्तदुच्छित्तये
तेभ्यस्त्वं यदि पासि पालक तदा कीर्तिष्चिरं स्थास्यसि।

विल्सन को प्रेमचन्द्र तर्कवागीष आदि अनेक पण्डितों द्वारा संस्कृत की रक्षा हेतु अनेक पत्र भेजे किन्तु उन सबका प्रत्युत्तर विल्सन द्वारा कुछ इस प्रकार दिया गया कि संस्कृत की उपेक्षा और भारतीय जनता की दुर्दषा से संस्कृत विद्वान खिन्न हो गये ।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ से ही अंग्रेज संस्कृत को मृतभाषा कहकर दुष्प्रचार करने लगे । दूसरी ओर संस्कृत के विद्वानों एवं रचनाकारों एवं पत्रकारों ने संस्कृत की प्राणवत्ता और रचनाधर्मिता को अपनी पत्रिकाओं और रचनाओं के माध्यम से प्रमाणित किया? संस्कृत भाषा के अभिव्यक्ति सामर्थ्य को देखकर मोनियर विलियम्स ने लिखा Sanskrit is not a dead language ever today 1882 में बंकिम चन्द्र चटर्जी ने **'वन्देमातरम्'** का नारा दिया। जो स्वतंत्रता आन्दोलन का एक महत्वपूर्ण नारा बना और आज भी राष्ट्रगीत के रूप में प्रतिष्ठित है।

पं अम्बिकादत्त व्यास ने षिवराज विजय के माध्यम से राष्ट्रीय भावना को जगाया। भारत की दर्दुषा के चित्रण से उन्होंने जनमानस को आकृष्ट किया –

"क्वाधुना मन्दिरे मन्दिरे जयघोषाः ? क्वसम्प्रति तीर्थ घण्टानादः क्वाऽद्यापि मठेमठे वेदं घोषः ? अद्यहि वेदा विच्छिद्य वीथिषु विक्षिप्यन्ते " इत्यादि वर्णनों द्वारा उन्होंने भारतीय जनता को अपने राष्ट्र अपनी भाषा एवं संस्कृति के लिये प्राणोत्सर्ग हेतु राष्ट्रभावना को जागृत करने का प्रयास किया।

स्वराज आन्दोलन में संस्कृत की अनेक पत्र–पत्रिकाओं का भी अन्यतम योगदान रहा है। अप्पा शास्त्री राषि बडेकर ने 'संस्कतचन्द्रिका' तथा 'सुनृतवादिनी' जैसी पत्रिकाओं के माध्यम से अंग्रेजो के विरूद्ध आग बरसाना प्रारम्भ किया अंग्रेजों की परवाह किये बिना अपने सम्पादकीयों में वे अंग्रेजो की सत्ता की धज्जियॉ उड़ाने लगे "किमेष भेदः क्व सुखम्" जैसी रचनाओं की प्रकाषित कर उन्होंने आन्दोलन की दृढ भूमि तैयार की ।

लार्ड कर्जन के विरोध में अप्पा शास्त्री ने संस्कृत चन्द्रिका के सितम्बर 1905 के अंक में विस्तृत सम्पादकीय लिखी। बंगभंग का संस्कृत पत्रकारों ने खुला विरोध किया तथा स्वदेषीय आन्दोलन का प्रबल समर्थन किया गया। अप्पाषास्त्री ने **बङ्गीयेषु स्वदेषीयान्दोलनम्** जैसी तीक्ष्ण समीक्षा लिखकर आन्दोलन की तीव्रता का प्रचार किया।

दूसरी ओर बंकिमचन्द्र चटर्जी द्वारा लिखा गया 'वन्देमातरम् का उद्घोष सुनकर अंग्रेज उसे 'बॉधो मारो' समझते थे और भयभीत होकर भाग जाते थे हषीकेष भट्टाचार्य जैसे निर्भीक संस्कृत पत्रकारो ने लाहौर से अंग्रेजों के विरोध में प्रबल लेखन किया।

1908 में 'समाचार पत्र' अधिनियम के अन्तर्गत अंग्रेजों ने केसरी जैसे महान समाचार पत्र पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया और बाल गंगाधार तिलक को बन्दीबना लिया। 'सुनृतवादिनी' में इसका प्रबल विरोध प्रकाषित हुआ । अंग्रेजो ने तिलक पर भारी जुर्माना किया तथा उन्हे 6 वर्ष का सश्रम कारावास भी दिया गया सुनृतवादिनी ने इस समाचार को हा धिक कष्टम् !!! दण्डितो महात्मा तिलकः शीर्षक से प्रकाषित किया (संस्कत का समाज शास्त्र पृ 121)

अप्पा शास्त्री राषि वडेकर ने क्लाइव को लुटेरा बताते हुए अंग्रेंजी शासन का प्रखर विरोध किया। उन्होने **पञ्जरबद्ध शुकः** जैसी कविता लिखी और अन्योक्ति के बहाने परतंत्र भारत की वेदना व्यक्त की –

"शुक सुवर्ण मयस्तव पञ्जरो
न खलु पञ्जर एष विभाव्यताम् ।[4]
मुखमिदं ननु हेमश्लाकिका –
रदनषालिमृते रति भीषणम् ।

बालगंगाधर तिलक पर हुए अत्याचारों से अप्पाषास्त्री दुखी थे। उन्होंने तिलक "**महाषयस्य कारागृहनिवासः"** शीर्षक कविता लिखी। उन्होंने लिखा कि दर्बुद्धि लोग हथकड़ी की निन्दा भले ही करते रहें महात्मा तिलक के हाथ में पड़ने से वह आभूषण बन गयी है। –

निगदन्तु निसर्गदुर्धियों निगडं दूषणमित्यमुं तव।
अपर स तथापि भूषणं भवतो येन विषिष्य पूज्यते ।
अपतद् भवत् पदाम्बुजे निजपुण्यस्य विपाकतोऽद्यसः ।
यदपास्य जगत्यवद्यतां निगडः साधुतमत्वमागतः ।।

(संस्कृत का समाजषास्त्र पृ0 – 121)

अंगेंजी हुकूमत की अत्याचार इस सीमा तक बढ़ गयी कि उन्होंने संस्कृत चन्द्रिका, सुनृतवादिनी तथा ज्योतिष्मती जैसी अंग्रेजी सत्ता के विरूद्ध आग उगलने वाली पत्रिकाओं को बन्द करा दिया। स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वाले संस्कृत विद्वानों को प्रताड़ित करने के साथ ही उन्हें बन्दी बना लिया गया। किन्तु **कार्यम् वा साधयेयं देहं वा पातयेयम्** का सिद्धान्त लेकर संस्कृत विद्वान अंग्रेजो के उत्पीड़न से भयभीत नहीं हए। साथ ही बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय का वन्देमातरम् जैसा महनीय राष्ट्रीय गीत स्वतंत्रता संग्राम को गति देता रहा ।

महर्षि अरविन्द महान साधक और महान योगी थे अंग्रेजो ने उन्हें बडौदा कारागार में बन्द कर दिया था वहाँ उन्होंने स्वप्नाविष्ट अवस्था में भारत माता के विकराल स्वरूप का साक्षात्कार किया और उसे 'भवानी भारती' नामक अपने काव्य में अंकित किया। उस समय भवानीभारती की एक मात्र पाण्डुलिपि को पुलिस ने जब्त कर लिया था और वहाँ अंग्रेजी अनुवाद के साथ जो अब अरविन्द आश्रम पाण्डिचेरी से प्रकाषित है। स्वप्न में स्वामी अरविन्द ने किसी विकराल देवी को देखा। उस देवी ने अपने हाथ से उनका स्पर्ष किया और देखते देखते काली के रूप में परिवर्तित हो गया। महर्षि अरविन्द उस देवी के जिस विकराल रूवरूप को साक्षात्कार करते है यथाहि –

नरास्थिमालां नृकपालकाञ्चीं वृकोदराक्षीं क्षुधितांदरिद्राम् ।
पृष्ठे व्रणाङ्काम सुरप्रतोदैः सिंही नदन्तीमिव हन्तुकामाम्।[5]

इस विकराल देवी को देखकर महर्षि अरविन्द जैसा महातपस्वी भी भयभीत और उद्विग्न हो उठता है । वह उसे प्रणाम करके पूछते हैं –

"का भासि नक्त हृदये करालि । कुवाणिं किं ब्रूहि नमोऽस्तु भीमे ।"

अरविन्द के प्रष्न को सुनकर वह देवी – जंगल में किसी प्राणी के वध के लिये भ्रमण कर रहे सिंह की तरह गर्जना करती हुई बोली –

"माताऽस्मि भोः पुत्रक । भारतानां सनातनानां त्रिदषप्रियाणाम् ।
शक्तो नयान् विधिर्विपक्षः कालोऽपि नो नाषयितु यमो वा।"[6]

अरविन्द भारतीयों को सनातन बताते हैं वे भारत माता के पुत्र है उन्हें न तो विपरीत विधि मार सकता है, न काल या यमराज ही उनका कुछ बिगाड़ सकते है। भारत माता अपनी भारतीय सन्तति के बल, पराक्रम और पौरूष की प्रषंसा करती हुई भारतीयो को देष की रक्षा के लिये जगाती है प्रेरित करती है तथा उन्हें अग्नि के समान धधक उठने के लिये ललकारती है।

उत्तिष्ठ भो जागृहि सर्जयाग्नीन्साक्षाद्धि तेजोऽसि परस्य षौरेः ।
वक्षः स्थितेनैव सनातनेन शत्रुन् हुताषेन दहन्नटस्व । [7]

'भवानी भारती' ने भारतीयों को स्वतंत्रता संग्राम हेतु तैयार करने में महती भूमिका निभाई । इसे स्वतंत्रता संग्राम की गीता कहना सर्वाधिक उपयुक्त होगा। गीता ने जिस प्रकार अर्जुन को युद्ध के लिये सन्नद्ध किया उसी प्रकार 'भवानी भारती' ने भारतीयों को स्वतंत्रता संग्राम के लिये तैयार किया। उनमें ओज भरकर उन्हे स्वतंत्रता के संग्राम में क्रान्ति के लिये उतारा। अरविन्द प्रत्येक भारतवासी को स्वतंत्रता संग्राम के लिये जगाते हैं चाहे वह हिन्दु हों या मुसलमान । उनका धर्म भेद हो सकता है किन्तु देष भेद नही। सब इसी भारत के निवासी हैं –

भो भो अवन्त्या मगधाष्च बंगा , अंगा, कलिंगा कुरवष्चसिन्धोः ।
भो दक्षिणात्याः शृणुतान्ध्र चौला वसन्ति ये पञ्चनदेषु धीराः ।
ये के त्रिमूर्तिं भजतैकमीषं ये चैकमूर्तिं यवना मदीयाः ।
माताह्वये वस्तनयान्हि सर्वान्निद्रां विमुञ्चध्वमयेषृणुध्वम् । [8]

भवानी भारती संस्कृत साहित्य की अमूल्य कृति है। भावबोध तथा कर्तव्य की पराकाष्ठा इस कृति में दृष्टिगत होती है। अरविन्द अंग्रेजों की चाटुकारिता करने वाले भारतीयों की भारतमाता के मुख से कठोर निन्दा करते करते हैं–

" म्लेचछस्य पूतष्चरणामृतने गर्व द्विजोऽसमीति करोति कोऽयम् ।"

उस कालखण्ड का प्रत्येक संस्कृतज्ञ स्वान्त्रय योद्धाओं का सहयेाग कर रहा था ।

पी0आर0 कृष्णामाचार्य ने भारतगीतम् की रचना की। कवि नगरकर ने 'राष्ट्रीय जागृति', आत्मा राम शास्त्री ने 'षिवहृदयम्' ए0के0 तात्याचार्य ने **भारतीया मनोरथः वरकृष्णामाचार्य ने भारतखड्गः** रामावतार शर्मा ने अभिनव भारतम् **'चारूचन्द्र वन्द्योपाध्याय' ने मातृसम्बोधनम् , शालिग्राम शास्त्री ने प्रबोधनम् , मेधाव्रताचार्य ने 'मातः का ते दषा' , विधुषेखर भटटाचार्य ने भारतभूमिः,** वृद्धविहगः, उद्बोधनम् तथा अनेक अन्य कवियो ने स्वतंत्रता संग्राम से सम्बद्ध प्रभूत साहित्य की रचना करके जन जन तक पहुँचाया जो स्वतंत्रता की अग्नि को प्रज्जवलित व उदद्प्ति कर रही थी।

पण्डिता क्षमाराव ने 1931 में श्रीमद्भगवद्गीता की तर्ज पर 18 सर्गो में 'सत्यागृह गीता' का प्रणयन कया। यह गॉधी जी के जीवन चरित को गीता की पद्धति में बॉधने का सार्थक प्रयास है। इसमें अफ्रीका में गॉधी जी द्वारा रंगभेद के विरूद्ध किये गये आन्दोलन से लेकर गॉधी इर्विन समझौते तक की घटनाओं का वर्णन है। क्षमाराव बड़ी विन्रमता से कहती हैं–

"गम्भीरों विषय क्वाऽयं श्रेष्ठः सत्याग्रहात्मकः ।
कृत्स्ने जगति विख्यातः क्व मे लघुतमा मतिः ।
शब्द गौरवहीनाऽहं युद्ध स्यैतस्य गौरवम् ।
व्याख्यातुमसमर्थऽस्मि गुणै दिव्येर्वुभषितम्।।[9]

इस ग्रन्थ में अंगेंजो का विरोध होने के कारण कोई भी भारतीय प्रकाषक इसे प्रकाषित करने को तैयार नही हुआ, अतः 1932 में इसका प्रकाषन पेरिस से हुआ।

सत्याग्रहगीता के आरम्भिक पाँच सर्गो में भारतीय जनता के साथ अंग्रेजो और जंमीदारों के द्वारा किये जा रहे अत्याचारों का खुलासा किया गया है

जनरल डायर की क्रूरता को जिस साहस से क्षमाराव ने उपस्थापित किया है वह केवल उन्हीं के द्वारा किया जा सकता था सेनापति बनने के बाद डायर ने लोगों के यातायात और सभा बन्द करा दिया था उसकी आज्ञा के बिना कोई भी बाहर नही जा सकता था किन्तु जब लाखों तीर्थ यात्री अमृतसर में एकत्र हो गये तब जनरल डायर ने जलियॉवाला बाग में लोगों के ऊपर गोलियो की वर्षा करा दी।

ततो दिनद्वयारदांग्लो डायरो नाम दुर्नरः ।
महासेनामधिष्ठाय सेनानी र्द्रुतभागमत् ।।
पौराण्डिडिमघोषेण सम्महूय दुरात्मकः ।
जनयात्राः सभाष्चापि निषेधामीत्य गर्जयत् ।।[10]

सम्पूर्ण महाकाव्य स्वातंत्र्य पूर्व के भारत का लेखाजोखा और इतिहास प्रस्तुत करता है। साइमन कमीषन इर्विन के सन्देष, इर्विन के लिये महात्मा गॉधी द्वारा भेजे गये उत्तर दाण्डी यात्रा , नमक ,सत्याग्रह उसका सम्पूर्ण देष में प्रभाव, अंग्रेजों द्वारा निर्दोष लोगों को फॉसी दिया जाना बम्बई में लाठी चार्ज इत्यादि ऐतिहासिक धटनाओं पण्डित क्षमाराव की लेखनी का संस्पर्ष पाकर जीवित सी हो उठी है। इर्विन के लिये गाँधी जी द्वारा भेजे गये पत्र का अविकल अनुवाद करने में भी पण्डिता क्षमाराव सफल हुयी हैं

निरंकुषाः प्रवर्तन्ते यस्मिन राज्येऽधिकारिणः ।
शासनं तदवरं नष्टं प्रजातिविवर्जितम् ।।
दुर्बला ननु गणयन्ते शान्तिमार्गावलाम्बिनः।।
परं सत्याग्रहाद विद्धि नास्ति तीव्रतरं बलम्। [11]

संस्कृत कवियों ने महारानी लक्ष्मीबाई , भगतसिंह , चन्द्रषेखर आजाद , सुभाषचन्द्र बोस महात्मा गाँधी जवाहर नेहरू, सरदार पटेल आदि जैसे महान स्वान्तन्य वीरो का चरित्र वर्णन करके देष वासियों में नयी ऊर्जा भरी और उन्हें स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के लिये उत्तेजित किया । वह भारत माता का करूणा कलित चित्र खींचता है और उसकी रक्षा का आहवाहन करता है। वह भगत सिंह के वचन को प्रस्तुत करता हुआ कहता है।

मृप्युरेव वधूर्मे स्यात हुतात्मानष्च यात्रिणः
आचार्यो धातुका भूयाद् विवाहः स्यान्ममेदृषः ।[12]

मृत्यु मेरी वधू है। मेरे साथ राष्ट्र के लिये आहुति देने वाले बाराती है तथा निहन्ता विवाह कराने वाला आचार्य है । मेरा विवाह कुछ ऐसा ही हो ।

यह संस्कृत कविता के नवावतार का भी काल था। संस्कृत कवि इस काल में नया भाववोध पाकर नवीन रचनाये करते है एवं संस्कृत कविता में नवीन सम्भावनाओं को तलाषते है नवीन छन्द नवीन विधायें गढते हैं।

रामनाथ प्रणयी ने अपने गीतो से युवाओं को मातृभूमि पर मर मिटने के लिये ललकारा मृत्यु के भय से भीतर घुसे रहने वालों को कड़ी फटकार लगायी और रण में कूद पड़ने के लिये जगाया ।

व्यर्थ मुञ्च न लोचननीरम ।
जगति भवत्येवं बहुहेला।
नैषा युवजनबिलपनबेला
सङ्ग्रामे सैनिक । विजय श्री रञ्चति नूनंत्वादषवीरम्
व्यर्थ मुञ्च न लोचननीरम ।

हे वीर! व्यर्थ में आँसू मत बहाओं संसार में ऐसे खिलवाड़ होते ही रहते है यह तुम जैसे तरूण वीरों के विलाप का समय नही हैं। संग्राम में विजयश्री तुम जैसे वीर का ही वरण करती है।

रामनाथ 'प्रणयी' के गीत संस्कृत साहित्य की थाती हैं। उनकी 'राष्ट्रवाणी' इन गीतों के कारण सचमुच राष्ट्रवाणी बन गयी है।

जानकीवल्लभ शास्त्री के गीत परम्परा के पारावार के रत्न बन गये हैं।

संस्कृत की अनेक रचनाओं को अंग्रेजो द्वारा प्रतिबन्धित कर दिया जाने के कारण संस्कृत विद्वानों ने ष्लेष का आश्रय लिया और अंग्रेजों के विरूद्ध लिखते रहे।। ऐसे कवियों में गंगाधार शास्त्री तथा नरोत्तम शास्त्री गागेय का नाम लिया जा सकता है।

गंगाधर शास्त्री का **अलिविलास संलाप** उनके युग की विसंगतियो का बहुषः वर्णन करता है। अंग्रेजों के भारत विरोधी व्यवहार तत्कालीन भारतीय राजाओं का अंग्रेजी हुकूमत के प्रति आत्मसमर्पण तथा भारतीय जनता के प्रति अंग्रेजो के दुर्व्यवहार का संकेत शास्त्री जी ने अपने इस काव्य में दिया है।

"अलिविलास संलाप" वेदान्तषास्त्र के सिद्धान्तो का प्रतिष्ठापक काव्य है काव्य नायक अलि व्यावहारिक रूप से एक सामान्य भ्रमर है किन्तु वह अलग–अलग प्रंसगों में अलग–अलग विषयों का प्रतिभास देता है।

वह अंग्रेजो के द्वारा भारतीय जनता पर किये जा रहे शोषण का प्रतिभास देता है –

अये विलासिन् । नहि विद्यते मे
रसालसालेऽभि निवेषलेषः ।
असक्तक्चेता जनकाननेनोद्य
त्सर्वागगमोत्थ रसमाद्रियेऽहम् ।। [13]

व्यावहारिक दषा में वह एक साधारण भ्रमर है तथा मकरन्द पान के लिये एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर उड़ता रहता है किन्तु प्रातिभासिक दषा में वह जनता का शोषण करने वाला क्रूर अंग्रेज है वह असक्तचेता है किसी के प्रति उसके मन में मोह दया या करूणा नही है।

स्वतंत्रता संग्राम में अवदान देने वाले संस्कृत मनीषियो में मथुरा प्रसाद दीक्षित का नाम अग्रगण्य है उन्होंने महाराणा प्रताप के जीवन पर 'वीर प्रताप' नामक नाटक की रचना की। इसके अतिरिक्त उन्होने भारत विजयनाटकम् , शंकरविजयनाटकम् , भक्तसुदर्षननाटकम् , गान्धीविजय नाटकम् , वीर पृथ्वी राज विजयम् आदि । इन नाटको का मंचन सोलन में दुर्गा महात्सव आदि के अवसर पर किया जाता था ।

भारत विजय की रचना कवि ने 1937 में की तथा उसमें उन्होंने भारत को स्वतंत्र दिखाया । इस नाटक में कुल सात अंक है , इसके अन्तिम दृष्य में गॉधी जी की सविनय अवज्ञा से पराजित अंग्रेज शासन को सत्ता गॉधी जी को सौंप कर भारत छोड़कर चले जाते है इस नाट्य के इस दृष्य को देखकर सोलन नरेष ने अंग्रेजों के भय से इसकी एक मात्र पाण्डुलिपि जब्त कर ली।

'भारत विजय' नाटक का प्रारम्भ प्रस्तावना के अनन्तर भारत माता के विलास से होता है –

मान्धाता भरतः पुरूर्यदुपती रन्तिः क्व भीमार्जुनौ,
भीष्मद्रोणभगीरथप्रभृतयो हा हा क्व कर्णः कृपः ।।
एते में तनयाः सुखं दिविषदः पष्यन्तु नां दुःखिनीं,
केषदीनदषा दयाविरहि तै र्दुष्टैः परिप्राप्यते।।[14]

भारत माता की इस दषा को देखकर योरोप देष से व्यापार के लिये आया कोई गोरा उसे झूठा आष्वासन देता है –

अहं त्वां सर्वदुःखेभ्यो मोचयिष्ये शुचंत्यज ।
समृद्धां सौख्य सम्पन्नां विधास्यामि स्वनीतितः ।[15]

उस गोरे का वचन सुनकर भारत माता उसे आषीर्वाद देती है किन्तु नेपाल सखी भारत माता का उस गोरे पर विष्वास करने से रोकती है ।

यदि स्वनीतिनैपुण्येन त्वामेव दुःखिनीं करिष्यति
तदा खुल त्वां को नाम दुःखेभ्यउन्मोचयिष्यति ।

किन्तु भारत माता –

"नहि नहि आकृतिरस्य गुणान कथयति सुसाधुरयम् तथा
नहि सर्वे विधार्मिकोऽसदाचारा भवन्ति।।[16]

इत्यादि कहती हुयी उस पर विष्वास कर लेती है

अंग्रेजो के शासन काल में भारतीय तन्तुवायो पर अनेक अत्याचार हुए। अंग्रेज मेहनत से बने बहूमल्य वस्त्रों को सस्ते में खरीदकर उन तन्तुवायों के अंगूठे काट लेते थें। वे दुःखी होकर कृषि कार्य करने लगते थे । सह सब देखकर भारत माता विलाप करती है –

हा हा किं मम पुत्रकेषु विहिंत हा प्रत्ययात् किं कृतं
हा देषस्य दषां किमस्य भविता हा सर्वनाषोऽभवत्।
हा दीनानपि वित्तलोलपतया निघ्नन्त्यमी मत्सुतान्
सर्वो हा प्रलयं गता मम सुताः वीरै र्विहीनाऽस्म्यहम् ।।[17]

सातवे अंक में चिन्तित अंग्रेज कहता है कि मै धर्म के आधार पर हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच युद्ध कराकर मुसलमानों केा अपने पक्ष में करूँगा वो वैसा करता है । भारतीय आपसे में लडते है यह सब देखकर भारत माता दुःखी होती है और सुभाषचन्द्र बोस ,खुदीराम बोस राम प्रसाद बिस्मिल आदि क्रान्ति वीरों को याद करती है ।

वह अंग्रेजों को गर्जना करती हुई डाँटती है कुद्ध अंग्रेज उसे मारने को उद्यत होता है उसी समय सुभाषचन्द्र बोस मंच पर आकर उसे दूर करते है अंग्रेज आकर क्षमायाचना पूर्वक भारत का साम्राज्य गॉधी जी को सौंपता है। बालगंगाधर तिलक भी स्वर्ग से उतरते है गॉधी जी स्नेहपूर्वक कहते है –

जन्मसिद्धाधिकारों नस्त्वया संह्रियते कथम्
साधु मैत्रीं विधायैव स्वकीयं विषयं ब्रज।।[18]

स्वतंत्रता प्राप्ति से दस वर्ष पूर्व लिखे गये इस नाटक में स्वतंत्रता संग्राम के दो सौ वर्षो के इतिहास को समेटा गया है। स्वतंत्रता संग्राम में संस्कृत साहित्य के अवदान को लेकर यह केवल झलक मात्र है अनेक संस्कृतज्ञों ने स्वतंत्रता संग्राम में आत्माहूति दी तथा अपनी रचनाओं से इस संग्राम को गति प्रदान की।

परतन्त्रता की कष्टकारी बेड़ियों में जकड़े हुए भारतीय जनमानस को स्वतंत्र कराने के लिए संस्कृत कवियों ने दृष्य श्रव्य अनेकानेक काव्यों के माध्यम से भारतीय जनचेतना को नवीन गति प्रदान की । भारत माता को स्वतंत्र कराने हेतु एक नवजागरण का कार्य संस्कृत कृतियों ने किया। काव्य गीतों, नाटको के माध्यम से विपुल साहित्यराषि की रचना हुई । जिसका प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से भारतीय जनचेतना पर व्यापक प्रभाव रहा है और आज भी इस प्रकार का ऐतिहासिक किंवा काल्पनिक लेखन हो रहा है जिसमें तत्कालिन घटना क्रम का वर्णन किया जा रहा है । जिससे आज का स्वातन्त्रयोत्तर भारत भी उस समय के भगत सिंह, आजाद, लक्ष्मीबाई गाँधी वीरसावरकर आदि स्वातन्त्रय वीरों के योगदान से परिचित हों।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. संस्कृत साहित्य बीसवी शताब्दी , राधावल्लभ त्रिपाठी , राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान , नई दिल्ली।
2. संस्कृत साहित्य बीसवी शताब्दी , राधावल्लभ त्रिपाठी , राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान , नई दिल्ली।
3. विषेषताब्दी संस्कृत काव्यामृतम् : अभिराज, राजेन्द्रमिश्र , दिल्ली संस्कृत अका 2000
4. संस्कृत पत्रकारिता का इतिहास राम गोपाल मिश्र
5. भवानी भारती , महर्षि अरविन्द
6. वही
7. वही
8. वही
9. सत्याग्रह गीता , पण्डिता क्षमाराव
10. वही
11. वही

12. भारतविजयम् भूमिका ।
13. अलिविलाससंलाप , 1.25
14. भारतविजयम्
15. वही
16. वही
17. वही

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

मानव सभ्यता में धर्म का महत्त्व

नज़मी गौहर
शोधच्छात्रा संस्कृत विभाग, नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश।

डॉ0 देवनारायण पाठक
संस्कृत विभागाध्यक्ष, नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश।

Article Info
Volume 5, Issue 2
Page Number : 69-73

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Accepted : 15 March 2022
Published : 30 March 2022

सारांशः—धर्म विशाल एवं व्यापक है। सभी बातें धर्म में समाहित हैं। धर्म के बिना कुछ भी नही है चाहे वह समाज हो या राष्ट्र। धर्म की आवश्यकता सभी को है। वर्तमान समय में धर्म भावना का अभाव सर्वत्र दिखायी दे रहा है। इसीलिए मानव का पतन होता जा रहा है। लोगों के ह्रयह से ईश्वर का भय खत्म हो गया है इसीलिए अनीति, अनाचार और अनास्था बढ़ते जा रहे हैं। समाज पतन की ओर जा रहा है। अगर उसे बचाना है तो हमें धर्म को आधार बनाना होगा। जिसके द्वारा मानव जीवन के लौकिक तथा अलौकिक पक्षों को एकसूत्र में पिरोकर एक आदर्श समाज में व्यक्ति के अधिकार तथा कर्तव्यों को निरूपित किया जा सकता है।

मुख्य बिन्द :— धर्म, सत्य, अंहिसा, धर्म पारायणता, धर्मशील, धर्माचरण, नैतिकता, वेद।

धर्म शब्द धृ धातु से मन् प्रत्यय लगाकर धर्मन् शब्द बना है जिसका अर्थ है धारण किये जाने वाला या आचरण करने योग्य। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि ''धार्यते जनैरिति धर्मः'' मनुष्यों द्वारा जो धारण किया जाए या जिसका आचरण किया जाए वही धर्म है।

महाभारत में भी धर्म को धारण करने वाला बताया है —

''धारणाद् धर्ममिव्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः।[1] यत् स्याद् धारण संयुक्तं स धर्म इति निश्चयः।''

अर्थात् धारण करने के कारण ही धर्म कहलाता है और धर्म प्रजा का धारण करता है जो धारण से संयुक्त है वह धर्म है।

महाभारत में धर्म को श्रेष्ठ माना है क्योंकि धर्म ही है जो मुनष्य को पशुओं से अलग करता है जैसा कि स्पष्ट है —

''आहारनिद्रभयमैथुनञ्च सामान्यमेतत्पशुर्भिनराणाम्।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

धर्मो ही तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः।।''[2]

अर्थात् आहार निद्रा, भय और मैथुन पशु एवं मनुष्यों में सामान्य है। धर्म ही है जो मनुष्य को श्रेष्ठ बनाता है। धर्म के बिना मनुष्य भी पशु के समान है।

इसके अतिरिक्त ''ध्रियते लोकोऽनेन, धरति लोक' वा इति धर्मः।''[3]

अर्थात् कर्तव्य जाति और सम्प्रदाय आदि के प्रचलित आचार का पालन, कानून, प्रचलन, प्रथा एवं अध्यादेश और नैतिक गुण ही धर्म है।

मनु ने धर्म को दस विशेषताओं से युक्त बताया है –

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।

धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्।।[4]

अर्थात् धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य, अक्रोध इन दस बातों का पालन करना ही धर्म है।

इसके अतिरिक्त वे कहते हैं –

''वेदः स्मृतिः सदाचार स्वस्य च प्रियमात्मनः।

एतच्चतुर्विधं प्राहृ साक्षात्धर्मस्य लक्षणम्।।''[5]

अर्थात् जो कुछ वेदो एवं स्मृतियों में वर्णित है और सदाचार, तथा चौथे जो स्वयं को उचित लगे वह धर्म है।

पी0एच0 प्रभु के अनुसार ''धर्म निश्चय ही वह सिद्धान्त है, जिसमें सौर ब्रह्माण्ड को सुरक्षित रखने की क्षमता है।''[6]

चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः।''[7] चोदना ही धर्म है। चोदना का अर्थ है वेदप्रतिष्ठित मन्त्रों द्वारा प्रतिपाद्यमान प्रेरणा, जो विधि रूप है।

महर्षि वशिष्ठ के अनुसार– ''श्रुतिस्मृतिविहितो धर्मः''[8] अर्थात् श्रृति एवं स्मृति में विहित आचरण ही धर्म है।

''त्रयो धर्मस्कंधा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति।''[9] अर्थात् धर्म वृक्ष के तीन स्कन्ध यज्ञ, अध्ययन और दान।

तैत्तिरीयोपषिद में धर्म के विषय में प्रमाद नही करने को कहा गया है– ''धर्मान्न प्रमदितव्यम्''[10]

कणाद के अनुसार – ''यतोऽभ्युदयनिः श्रेयस सिद्धिः स धर्मः''।[11]

अर्थात् जिससे अभ्युदय और निश्रेस की सिद्धि हो वह धर्म है।

''य एवं श्रेयस्करः स एव धर्मधब्देनोच्यते।''[12] अर्थात् जो कुछ श्रेयस्कर है वही धर्म है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि धर्म–लौकिक एवं सामाजिक कर्तव्य, किसी व्यक्ति या पदार्थ के मूलभूत गुण, व्यावहारिक एवं नैतिक, नियम, ईश्वरीय उपासना, पूजापाठ आदि है।

धर्म समाज एवं संस्कृति का मूल आधार है। इसी मूल आधार पर संसार का कल्याण आधारित है। धर्म का स्वरूप सार्वभौम है इसी कारण विश्व का धर्म एक ही है। परन्तु धर्म को जानने के लिए जो अलग–2

पद्धतियाँ बनाई गयी, उसे ही लोग धर्म समझने लगे है जबकि वह सम्प्रदाय है। धर्म अगम है, अथाह है, महासार है और सम्प्रदाय सरितावत् है। धर्म महासागर में अनेक सरितावत् सम्प्रदायें आकर समाहित हो जाते हैं।

ईश्वर में आस्था एवं विश्वास और विश्वास भी ऐसा जो सभी प्राणियों के प्रति प्रेम एवं आत्मीयता की भावना पैदा करता हो, जो संसार को एकता के सूत्र में बाँधता हो वह धर्मपरायणता है। धर्म पारायण मनुष्य साम्प्रदायिकता एवं मतभेद से दूर रहता है। वह सम्पूर्ण समाज को अपना समझाता है। और सबको अपना बंधु समझता है। वह जन कल्याण को पूजा मानता है। यही धर्म का सच्चा अर्थ है।

एकता, ममता, सहिष्णुता और शुचिता ही धर्म का लक्ष्य है और धर्म की गरिमा इसी तथ्य पर अवलम्बित है।

इस प्रकार हम कह सकत हैं कि धर्म के सच्चे स्वरूप को जान लेने पर और शाश्वत सिद्धान्तो को जीवन में अपनाने पर ही मनुष्य का उद्धार हो सकता है।

धर्म का बहुत महत्त्व है। संसार में धर्म ही सबसे श्रेष्ठ है। धर्म में ही सत्य की प्रतिष्ठा है श्रुति का कथन है –

''धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा, लोके धार्मिष्ठ प्रजा उपसर्पन्ति।
धर्मेण पापमपनुदति, धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद् धर्मं परमं वर्दान्त।।''[13]

अर्थात् धर्म सम्पूर्ण संसार की प्रतिष्ठा है। संसार में लोग धर्मशील के ही पास जाते हैं। धर्माचरण से पाप दूर होते हैं। धर्म पर सब कुछ आधारित है। धर्म ही सर्वश्रेष्ठ है।

धर्म की महिमा का वर्णन स्कन्दपुराण में भी प्राप्त होता है। स्कन्दपुराण में बताया गया है कि जिसमें धर्म की रक्षा कर ली उसने सब कुछ कर दिया। फिर कोई कमी नही रही। उसने तीनों लोकों की रक्षा कर ली। अतः धर्म की रक्षा ही सर्व रक्षा है क्योंकि धर्म मुख्य होता है। यथा –

''धर्मो हि रक्षितो येन देहे सत्वरगत्वरे।
त्रैलोक्यं रक्षितं येन किं कामार्थैः सुरक्षितैः।।''[14]

धर्म के महत्त्व को समझने के लिए बाल्मीकि के जीवन का उदाहरण अत्यन्त मार्मिक है। जैसा कि हम सभी जानते है कि बाल्मीकि अपने युवा अवस्था मे एक दस्यु थे। अपनी पत्नि एवं पुत्र के जीव–यापन के लिए वे लोगों की हत्याएं करते थे एवं उनके पास जो कुछ भी रहता था वो छीन लेते थे। एक बार उनकी मुलाकात नारद मुनि से हुई। बाल्मीकि ने नारद मुनि से कहा तुम्हारे पास जो कुछ भी है मुझे दे दो वरन् मैं तुम्हारी हत्या कर दूँगा। नारद मुनि ने कहा जो तुम यह पाप कर रहे हो क्या इसमें तुम्हारे पत्नि एवं पुत्र भागीदार होंगे। यह सुनकर वे स्तम्भ रह गये और घर जाकर उनसे पूछा तो उनका उत्तर सुनकर वे बहुत दुःखी हुए क्योंकि उन्होंने पाप में शामिल होना से मना कर दिया था। घर से आने के बाद उनके विचार बदल गए एवं नारद मुन ने भी समझाया और उनके समझ में आ गया। वे सोचने लगे जिसके लिए मैं पाप कर रहा हूँ वे मेरे पाप में भागी नही होंगे, दूसरे मैं लोगों की हत्याएं कर रहा हूँ यह वृत्ति भी बुरी है। ऐसा कार्य जिससे लोगों को दुःख हो वह

कार्य धर्म नही अपितु अन्याय है यह धर्मतत्त्व जब उनके हृदय में उत्पन्न हुई तब से उनका जीवन ही बदल गया। वे दस्यु से महर्षि हो गये। धर्म की कितनी बड़ी महिमा है। आज उनको धर्म प्रवर्तक के रूप में माना जाता है।

इसीलिए कहा गया है कि मनुष्य का पुनीत कर्तव्य है कि वह इस दुर्लभ मनुष्य जन्म को प्राप्त करके सदा धर्माचरण पर ही चले। यथा – ''तस्माद्धर्मः सदा कार्यो मानुष्यं प्राप्य दुर्लभम्।''[15] वह व्यक्ति श्रेष्ठ होता है जो धर्म का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर उसका आचरण करता है। इस प्रकार आचरण करने वाला व्यक्ति सच्चा धार्मिक होता है वह संसार में श्रेष्ठतम तथा यशस्वी व्यक्ति होता है। उसे सब मानते हैं और अन्त में वह स्वर्ग जाता है।

वसिष्ठ धर्मसूत्र का कथन है – ''ज्ञात्वा चानुतिष्ठन् धार्मिकः प्रशस्यतमों भवति लोके प्रेत्य च स्वर्गलोकं समश्नुते।।''[16]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मनुष्य के सदैव धर्म का पालन करना चाहिए क्योंकि जो धर्म का पालन नहीं कर सकता है उसे सुख कैसे सम्भव हो सकता है क्योंकि धर्माचरण से ही सुख प्राप्त होता है जैसा कहा भी है – ''धर्मेण सुखमासीत्''। धर्म मनुष्य को मनुष्य बनाता है तथा ''वसुधैव कुटुम्बकम् की शिक्षा भी देता है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि धर्म का बहुत महत्त्व है सभी धर्मशास्त्र और वेदों में धर्म के बारे में चर्चा हुई है और सभी ने धर्म का बहुत महत्त्व बताया है।

संदर्भ सूची

महाभारत

महाभारत

आप्टे कोश – पृ0 489

मनुस्मृति – 6.12

मनुस्मृति – 2.12

कल्याण, हिन्दु संस्कृति अंक पृ0 370

जैमिनि सूत्र – 1

वशिष्ठ धर्मसूत्र – 1.3

छान्दोग्योपनिषद

तैत्तिरीयोपनिषद्

वैशेषिक दर्शन – 1.2

बलदेव उपाध्याय – वैदिक साहित्य और संस्कृति – पृ0 449

श्रीमन्नारायणोपनिषद – 79

स्कन्द पुराण, काशी खण्ड, 46, 33

वृद्ध गौतम स्मृति – 233

वसिष्ठ धर्मसूत्र – 1.2

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

Progress of Learning During The Reign of Akbar The Great(1556-1605) : A Review

Dr. Nazneen Farooqi
Assistant Professor in Medieval History, Arya Kanya PG College, Prayagraj University of Allahabad, U.P., India

Article Info
Volume 5, Issue 2
Page Number : 74-79

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Accepted : 15 March 2022
Published : 30 March 2022

Abstract -After the Mughal conquest of India all kinds of cultural activities, including education received great encouragement. The imperial Mughals were highly educated and cultured princes of their times who extended liberal patronage to education and learning. Both Babur and Humayun were men of literary taste and had great love for education. They set up a number of new educational institutions and repaired the old ones. But particularly Akbar who is regarded as great Mughal ruler showed much great interest in education. It would not be wrong to say that his reign marked the beginning of a new chapter in the history of education for Muslim India. He was the first among the muslim rulers of lndia who made a serious attempt to reform the educational system to suit the national aspirations of the people. His appreciation for educational and cultural values and the policy of religious tolerance and benevolence created a social environment which was highly conducive to the advancement of education and learning. His period of rule witnessed almost a renaissance in the fields of ancient and medieval learning. He extended liberal patronage to the intellectuals belonging to all religious communities and disciplines without discrimination.

Keywords - Progress of Learning, During, The Reign, Akbar, The Great, A Review.

With the coming of the Mughals in India(1526 A.D) educational and cultural activities received great encouragement. Babur, the founder of Mughal empire was a man of literary taste and possessed perfect knowledge of persian, Arabic and Turkish languages. He was expert in both prose and poetry. Mirza Muhammad Haider writes in his book Tarikh-i-Rashidi about Babar's literary achievements that "In the composition of Turkish poetry he was second only to Mir Ali Shir ---------- He invented a style of verse called Mubaaiyan and was the another of a most useful treaties on Juris prudence --------- He also wrote on Turkish Prosody.[1] But the greatest of all his works is his memoirs entitled 'Tuzuk-i-Babri' which is a masterpiece of his intellectual achievements and monument of his memory. S.M.Jaffar writes that he is rightly regarded as the, 'Prince of autobiographers'.[2] He entrusted an additional work,.i.e construction of

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

school and colleges, to the Public works Department(shoba-i-Aam).[3] Since then the promotion of education became the direct concern of state. This shows Babar's interest in the wide dissemination of education.Despite his great love for education he could not accomplish much because his reign lasted only for four years(1526-1530).

Humayun(1530-1540,1555-1556),Babar's son and successor was also a great scholar and known for his love of learning. He provided patronage to man of arts and literature. In spite of many difficulties and disturbance, he rendered valuable service to the cause of education. He established a Madrasah at Delhi where Mathematics, Astronomy and Geography were specially taught. Shaikh Hussain was one of the famous teacher of this madrasah.4 A teacher who used to teach in a madrasah was known as 'Mudarris' or 'Maulvi Saheb' and other titles of a teacher were 'Ustaad' and' Shaikh'.[5] A magnificent personal library was attached to his royal palace, called Din Panah or Sher Mandal in Delhi.[6] He also constructed an observatory for his personal use. It is to his credit that he invented an astrolabe known as Usturlab-i-Humayuni.[7] After sustaining injuries in an accidental fall while descending down the stairs of his library his life came to an end.

After the death of Humayun Akbar became the Mughal emperor(1556-1605 A.D).He was the greatest monarch among all the mughal rulers and famous for his liberal policies in every sphere of his empire. As far as education is concern he was the first among the muslim rulers of India who made a serious attempt to reform the educational system to suite the national aspirations of the people. Abul Fazal's monumental work, entitled Akbarnama, including the Ain-i-Akbari stated that Akbar was fully conscious about the importance of education for the socio-cultural and material advancement of the people.[8] Some prominent features of his education policy were as follows:

1- He provided a secular base to it by making a distinction between the Arabic, and Persian studies. The Arabic studies which dealt almost exclusively with the Islamic scriptures and theology were allowed to flourish as ever before albeit the curricula and scope of Persian studies were droad-based to include many secular subjects, including natural sciences and medical studies, to attract hindus and muslims alike. The study of Persian language and literature was popularised on an all-India basis.

2-Akbar expanded elementary education to raise the percentage of general literacy among the masses. He introduced a new curriculum of studies for the maktabs and suggested improved methods of instruction to the children. Ain 25 of the Ain i Akbari, which is devoted to the reorganisation of education, runs as follows:

"In every country, but especially in Hindustan, boys are kept in school for years where they learn the consonants and vowels. A great portion of life of the students is wasted by making them read many books. His Majesty orders that every school boy should first learn to write the letters of the alphabet and also learn to trace their several forms. He ought to learn the shape and name of each letter, which may be done in days; then the boy should proceed to write the joint letters. They may be practised for a week, after which the boy should learn some prose and poetry by heart, and commit to memory some verses in praise of God or moral sentences, each written separately. Care should be taken that he learns to understand everything himself but the teacher may assist him a little. He then ought for sometime, to be daily practised in writing a hemistich or a verse, and will soon acquire a current hand. The teacher ought

especially to look after five things; know ledge of letters, meaning of words, the hemistich, the verse, the former lesson. If this method of teaching be adopted, a boy will learn in a month, or even in a day what it took others years to understand, so much that people will be quite astonished."[9]

Akbar prescribed subjects for higher studies in the madrahsas some of which had never found their place in the curriculum of the muslim institutions before; his ordinance to this effect declares:

"Every boy ought to read books on morals, arithmetic, the notion peculiar to arithmetic, mensuration, geometry, astronomy, household matters, rules of government, medicine, logic, the tibiy iilahi sciences (philosophy and metaphysics) and history, all of which may be gradually acquired. In studying Sanskrit the students ought to learn Vyakarna, Niyai, Vedanta and Patan jal (Yogadarshana of Patanjali)."[10]

3- Akbar made an attempt to secularise the teaching process itself by encouraging the Hindus to join the ranks of Persian teachers in the state-run madrassas. It was really a revolutionary step the like of which could never be envisaged before his times. A.L. Srivastava has to say the following on this point:

"One healthy change, a faint beginning of which was made in the time of Sikander Lodhi, continued during the reign of Akbar. It was that hindu students began to be admitted into the maktabs and madrassas.The result was that within half a century there was a large number of hindu scholars, historians and poets of Persian, and some of these excelled in rational sciences and were appointed teachers of the Persian language[1] in the madrassas. There was thus a secular bias imparted to education in the time of Akbar." [11]

4-Akbar introduced the system of grants-in-aid to the educational institutions of the hindus also. He encouraged the muslim scholars to study Sanskrit and Hindi and translate the religious as well as secular literature of the hindus into Persian and Arabic for the benefit of the muslims. Akbar extended liberal patronage to the intellectuals belonging to all religious communities and disciplines without discrimination. The chief sadr (sadr us sadur) of the empire, who was a cabinet minister incharge of the ecclesiastical department and religious endowments, held charge of the educational institutions as well. After the dismissal of Abdun Nabi as the chief sadr by Akbar all those who were appointed to this exalted office were liberal and secular in their religious outlook; they were put under obligations to sanction stipends and scholarships to all the scholars and grants to all the educational institutions. Thus the hindus also became entitled to receive a part of the funds under the charge of the chief sadr which were previously utilised for the spread of Islam and development of education and learning among the muslims alone. As a result of the impetus given by Akbar, the whole of the mughal empire was dotted with maktabs and madrassas. Some prominent Hindu scholars and Historians learnt Persian and made valuable contribution to the cause of education.Some of them were Madho Bhat,Shri Bhat,Bishan Nath,Ram Krishan,Balbhadra Misr,Vasudeva Misr,Bhan Bhat,Vidya Nivas,Gauri Nath,Gopi Nath,Kishan Pandit,Bhattacharji,Bhagirath,Kashi Nath,Mahadeo,Bhim Nath and Narain Sivji etc.

5-Besides Delhi, Agra and Fatehpur Sikri, the provincial headquarters and other major towns became centres of Persian, Arabic and Sanskrit education; the ruling elite and the public, in general, made liberal

contributions to wards the establishment and management of these institutions. He built'Ibadat Khana'in 1578 in Fatehpur Sikri in the garden of Royal Palace.There were four big halls,each hall was occupied by sayyeds,learned,sufis or shaikhs and noble officers of the Court.In the debating hall discussions were hold by the scholars of different schools of thought. It was used as a platform, from which,religious Unity was preached and propagated.[12] A big madrasah was also founded at Agra where the scholars from Shiraz were invited and the students from various places came to attend the lectures of renowned scholars.[13]

6-Akbar displayed a passion for the acquisition of books, and encouraged their production and multiplication. His imperial library at Agra had on its shelves, at the time of the emperor's death, more than 24,000 books, all in manuscript, written by great men, mostly by very ancient and serious authors'. Abul Fazl records: "His Majesty's library is divided into several parts; some of the books are kept within, and some without the Harem. Each part of the library is subdivided, according to the value of the books and the estimation in which the sciences were held, of which the books treat. Prose books, poetical works, Hindi, Persian, Greek, Kashmirian, Arabic, are all separately placed. In this order they are also inspected." [14]

These books were adorned with attractive and costly buildings, in many cases enriched with beautiful illustrations by the best artists; of course, these were worth millions.[15] Abul Fazl informs us that the imperial library at Agra included 4300 choice manuscripts which had been transferred from the personal library of his elder brother Faizi, the poet laureate, after his death in 1595 A.D. [16] The educational institutions, mosques, khankahs and hindu temples were the places where the books were usually preserved [17] , that is why the historians of the day do not much about the libraries of the period.

7- The art of medieval Indian historiography reached its perfection during the reign of Akbar under whose liberal patronage the Indian scholars, hindus and muslims both, 'cherished and cultivated' it as a full-fledged discipline in its own right. The mughal emperors employed chroniclers, diarists and court historians who maintained profuse records of the royal performance in systematic and chronological order, though usually exaggerated. The scholars wrote not only for literary fame, reward or edification of their patrons but also to satiate their intellectual hunger and inner urge for writing their observations and experiences.[18]

8-Akbar's reign is also notable for the introduction of maqulat or rational sciences as a subject of study in the madrassas and encouragement to industrial and technical education in the state run karkhanas. This step was taken by Akbar on the advice of Mir Fathullah Shirazi, a Persian scholar and scientist who excelled in all branches of maqulat, including physics, chemistry and mechanics. He was an expert in the art of metallurgy. He had come to Bijapur on a special invitation from sultan Ali Adil Shah but, after the death of his royal patron, Akbar called him to Agra and offered him the exalted office of the chief sadr. By virtue of his office, Mir Fathullah also held charge of karkhanas, and ordnance factories. He had a number of mechanical inventions to his credit and one of his hobbies, apart from research and experimentation in rational sciences, was to deliver lectures on maqulat to the old and the young alike. Akbar used to discuss with him various problems regarding the production of heavy artillery, gun-powder and other weapons of war. Some of the mechanical inventions which effected improvement and economy in the state defences have been recorded by Abul Fazl in the Ain i Akbari (Ains 36-38). It was Mir Fathullah who directed the

daroghas or superintendents of various state undertakings to provide vocational training to young boys in the various crafts and trades.[19]

9-The age of Akbar is also described as the period of renaissance in the fields of Persian and Hindi literature. According to an observation, 'the brilliant development of original Hindi poetry in the time of Akbar may be ascribed partly to the undefinable influence exercised by a glorious and victorious reign, which necessarily produces a stimulating effect on all the activities of the human mind. Almost all Hindi poetry of merit is closely associated with the unrestricted practice of Hinduism which was absolutely assured by the government of Akbar.'[20] During his reign flourished saint Tulsi Dass, the celebrated author of Ramcharit Manas or the Tulsi Ramayana.But he never visited the court of Akbar although some of his nobles, including Raja Man Singh and Mirza Abdur Rahim khan i khana were his disciples and admirers. [21]

It is noted that during Akbar's reign the nobles of the court also took interest in the cause of education. Maham Anga,the foster mother of Akbar,built a madrasah at Delhi with a mosque attached to it in 1561 A.D.It was called Khairul Manazil.[22]Another well-known madrasah was Madrasah-i-Khwaja Muin,where Mirza Mufti Samarqandi taught for three years from 1571.[23] The liberal educational policy adopted by Akbar for the intellectual and cultural advancement of the Indians remained in full force till the end of Shah Jahan's reign(1658 A.D)and played an important role in the unification of India politically, Socially, religiously and culturally etc.

Reference:

1. Quoted by N.N.Law,Promotion of Learning in India during Muhammadan Rule,Idara-i-Adbiyat-i-Delhi,Delhi,1973,P.122
2. S.M.Jaffar,Education in Muslim India,Delhi,1936,P.77
3. 3.N.N.Law,Op.Cit.,PP.126-127
4. 4.Imperial Gazetteer of India,vol.IV,p.408,quoted by M.P Srivastava,Social and Economic Trends in Muslim India,Allahabad,1989,P.159
5. Ibid,P.159
6. N.N.Law,Op.Cit.,p.133,S.M.Jaffar.Op.Cit.,P.78,Krishnalal Ray,Education in Medieval India, Delhi,1984,P.20
7. Abul Hasnat Nadvi,Hindustan ki Qadeem Islami Darsgahen,Azamgarh,1936,P.21
8. J.L Mehta,Advanced study in the History of Medieval India, Vol.III,New Delhi,Reprint 2001
9. Abul Fazl,Ain-i-Akbari,Vol.I,P.288,289
10. Ibid,P.289
11. Ashirbadi Lal Srivastava,Medieval Indian Culture,Delhi,1964 ,PP.105-106
12. S.M.Jaffar,Op.Cit.,.83
13. Abul Hasnat Nadvi,Op.Cit.,p.28-29
14. Abul Fazl,Ain-i-Akbari,Vol.I,PP.109-110
15. V.A Smith,Akbar the Great Mogul,Oxford,1919,p.424
16. Abul Fazl,Op.Cit.Vol.I,P.550
17. S.A.Nadvi,quoted in K.P.Sahu,Some Aspects of North India Social life:1000-526,Calcutta,1973,P.153

18. J.L.Mehta,Op.Cit.P.281
19. Ibid,p.281
20. V.A. Smith,Op.Cit,P.421,quoted by J.LMehta,Op.Cit.P.282
21. J.L.Mehta,Op.Cit.P.282'
22. Abul Hasnat Nadvi,Op.Cit.P.22
23. N.N.Law,Op.Cit.,P.168

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

आर्षग्रन्थों में शाप और वरदान की अवधारणा

डॉ.भोला नाथ
असि.प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, गनपत सहाय पी.जी. कालेज, सुल्तानपुर, उ.प्र.

Article Info
Volume 5, Issue 2

Page Number : 80-83

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Received : 01 March 2022
Published : 17 March 2022

शोध-सारांश : शाप और वरदान वह सत्य वचन है, जिसका अनुसरण प्रकृति स्वयं करती है। सत्य सिद्ध होने पर वाणी अचूक हो जाती है। वाणी जब सत्य में प्रतिष्ठित हो जाती है तब वाक् सिद्धि होती है। सामान्य जनों की वाणी अर्थ के पीछे चलती है जबकि वाक् सिद्धि होने से ऋषियों की वाणी का अनुसरण अर्थ स्वयं करता है। वाक् सिद्धि वाक्संयम तथा तप की ऊर्जा पर आश्रित होती है। सत्य वचन से उन्नत लोकों की तथा असत्य वचन से अधम लोकों की प्राप्ति होती है। शाप में दोनों पक्ष दु:खी तो वरदान में दोनों पक्ष सुखी होते हैं। शाप और वरदान कर्म होने से कर्मफल की प्राप्ति सुनिश्चित होती है।

मुख्य शब्द : शाप, वरदान, आर्षग्रन्थ, सत्यवचन, कर्मफल, ऋषि, लोक आदि।

शाप शब्द शप् धातु से घञ् प्रत्यय करने पर बनता है जिसका अर्थ है आक्रोश, अभिशाप, भ्रत्स्ना, कसम, मिथ्या आरोप इत्यादि यथा – संमोचित: सत्त्ववतात्वयाहं। शापाच्चिरप्रार्थितदर्शनेन॥[1] ऋग्वेद में शाप का अर्थ जल किया गया है यथा– 'प्रतीपं शापं नद्यो वहन्ति'[2] सायणाचार्य ने इस पंक्ति की व्याख्या करते हुए कहा है– नद्यो गंगाद्या: सरित: प्रतीपं प्रतिकूलं शापं उदकं वहन्ति। वरं शब्द वृ वरणे धातु से कर्म अर्थ में अप् प्रत्यय करने से बनता है। व्रियते इति वरम् अर्थात् जो वरण किया जाता है उसे वर कहते हैं।

रामायण का प्रारंभ ही शाप से होता है। देवर्षि नारद द्वारा उपदिष्ट धर्मात्मा ऋषि वाल्मीकि के तमसा नदी पर स्नान के लिए जाते समय निषाद द्वारा मारे गये क्रौञ्च नर को देखकर उनके मन में करूणा उत्पन्न हुई। जिसके कारण ऋषि वाल्मीकि ने निषाद को अभिशप्त किया–

मा निषाद प्रतिष्ठाम त्वमगम: शाश्वती समा:। यत् क्रौञ्च मिथुनादेकम अवधी: काममोहितम् ॥[3]

कुशनाभ की कन्याओं का कथन है कि देवता होने पर भी आप को शाप देकर वायु पद से भ्रष्ट कर सकती हूँ किन्तु ऐसा करना नहीं चाहती क्योंकि हम अपने तप को सुरक्षित रखना चाहती हैं।[4] इसका तात्पर्य है कि शाप और वरदान देने के लिए तप की ऊर्जा कार्य करती है। शाप और वरदान देने पर तपोबल का क्षय होता है। महाभारत के अन्त में गांधारी ने श्रीकृष्ण को वंशविनाश का शाप दिया कि जिस प्रकार इस युद्ध में मेरा वंश नष्ट हो गया। उसी प्रकार आज से 36 वर्ष बाद आपके यदुवंश का विनाश हो जाएगा। श्रीकृष्ण ने हंसते हुए होनी समझकर उस शाप को स्वीकार कर लिया।[5] इससे ज्ञात होता है कि शाप और वरदान भविष्य में होने वाली घटनाओं का पूर्व कथन होता है। जो कि प्रकृति से जुड़ा हुआ व्यक्ति ही बता सकता है। पतञ्जलि योग दर्शनम् में उल्लेख है कि लम्बे समय तक सत्य वचन बोलने से सत्य सिद्ध

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

हो जाता है। सत्य सिद्ध होने पर वाणी अचूक हो जाती है। साधक जैसा कहता है वैसा ही हो जाता है,'सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्'।[6]

शाप को वापस नहीं लिया जा सकता है। क्योंकि ऐसा करने का तात्पर्य है कि अपनी ही बात को असत्य सिद्ध करना। कालिदास ने अभिज्ञान शाकुन्तल में ऐसा ही दर्शाया है। ऋषि दुर्वासा शकुन्तला को शाप दे देते हैं कि जिस व्यक्ति को अनन्य मन से याद करती हुई मुझ पूज्य अतिथि का तिरस्कार कर रही हो। वह तुम्हें भूल जायेगा। याद दिलाने पर भी तुम्हें स्मरण नहीं करेगा। बाद में शकुन्तला की दोनों सखियां अनुनय विनय करती हैं तो ऋषि दुर्वासा अपने शाप का समाधान भी बताते हैं कि याद दिलाने के लिए कोई वस्तु प्रयोग किया जायेगा तो वहीं यह शाप समाप्त हो जायेगा।[7]

शाप और वरदान के ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं कि ये दोनों कभी–कभी इस जन्म फलित न होकर दूसरे जन्म में फलित होते हैं। वरदान भी शाप की तरह दु:खदायी सिद्ध होता है। दु:खदायी होकर भी वरदान प्राप्त करने वाला व्यक्ति अपने आराध्य के वचन को सत्य सिद्ध किया है। द्रौपदी के विवाह के समय वेदव्यास ने द्रुपद नरेश को पूर्व जन्म में प्राप्त शिव के वरदान को स्मरण दिलाया।[8] फिर भी द्रौपदी ने पांच पाण्डवों के साथ विवाह करके शिव के वचन को सत्य सिद्ध किया और शिव के आशीर्वाद की भागीदार बनीं। ऐसा माना जाता है कि शाप और वरदान के वचन असत्य होने पर, देने वाले पुरुष को अधम लोकों की प्राप्ति होती है। अपने चहेते को अधम लोक की प्राप्ति न हो इसके लिए प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर लेते थे। रामायण में राम ने दशरथ का वचन असत्य न हो इसके लिए उन्होंने दु:ख पूर्ण वनवास जीवन को स्वीकार कर लिया और पिता दशरथ को उन्नत लोकों की प्राप्ति हुई।

शाप और वरदान कर्मेन्द्रिय वाक् पर आश्रित होने से कर्म के अन्तर्गत आते हैं। वरदान में दूसरा पक्ष खुश होने से पुण्यकर्म के अन्तर्गत आता है। वहीं शाप में दूसरा पक्ष दु:खी होने से पाप कर्म के अन्तर्गत आता है। इसलिए वरदान देने वाले पुरुष का वरदान सत्य होने पर भी उसे मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती। क्योंकि कर्म से चित्त शुद्ध होता है और ज्ञान से मोक्ष की प्राप्ति। हां यदि ये दोनों अनाशक्त भाव से किए जाएं तो मोक्ष में बाधक भी नहीं बनते हैं। दशरथ का वचन सत्य होने के बाद भी उन्हें इन्द्रलोक की प्राप्ति हुई।[9] अत: सत्य बोलने का फल इन्द्रलोक की प्राप्ति है। शाप वरदान के प्रसंगों का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि वरदान हमेशा खुश होकर दिया जाता है और शाप हमेशा क्रोध की स्थिति में ही दिया जाता है। कभी–कभी ये दोनों परिस्थितियां एक साथ घटित हो जाती हैं। छद्म वेशधारी इन्द्र का अहल्या के साथ समागम को देखकर गौतम मुनि ने इन्द्र और पत्नी अहल्या को शाप दे दिया कि तुम पत्थर बन जाओ। क्रोध शान्त होने पर उन्होंने यह भी वरदान दिया कि त्रेतायुग में राम तुम्हारा उद्धार करेंगे।[10]

कई प्रसंग ऐसे भी प्राप्त होते हैं जब वरदान प्राप्त करने वाले के लिए वह वरदान ही शाप सिद्ध होता है। भस्मासुर की कथा इसका प्रबल उदाहरण है। कभी ऐसा भी होता है कि शाप आगे चलकर वरदान बन जाता है। नल और नील दोनों भाइयों को बचपन में शाप मिला था कि वे जो भी वस्तु पानी में फेकेंगे वह वस्तु तैरने लगेगी। बाद में यही शाप उनके लिए वरदान बन गया और रामेश्वरम सेतु के निर्माण में काम आया।[11]

भवभूति ने एक प्रसंग में कहा है कि लौकिक पुरुषों की वाणी अर्थ के अनुसार चलती है। लेकिन ऋषियों की वाणी के पीछे अर्थ स्वयं चलता है। अर्थात ऋषियों की वाणी का अनुसरण प्रकृति स्वयं करती है। युद्धकाण्ड 124 वें सर्ग के अनुसार भगवान् राम लंका से अयोध्या लौटते समय भारद्वाज आश्रम पर उतरकर महर्षि से मिले और महर्षि प्रसन्न होकर श्रीराम को वर प्रदान किया था। वर रूप में भगवान् ने इस प्रकार इच्छा प्रकट किया कि अयोध्या जाते समय उनके मार्ग में आने वाले वृक्ष फलित हो जाएं। ऐसा ही हुआ।[12]

वरदान प्राप्ति के लिए हमेशा योग्यता देखी जाती है। जो व्यक्ति जिस योग्य होता है वैसा ही वरदान उसे दिया जाता है। ऐसे अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं कि जब साधक को मनोवांछित वर की प्राप्ति नहीं होती है। योग्यता होने पर ही वर प्रदान किया जाता है। कठोपनिषद् में यमराज को लगा कि नचिकेता आत्मज्ञान प्राप्त करने के योग्य नहीं है। उन्होंने नचिकेता को अनेक प्रलोभन देकर बहलाने की कोशिश की। अनेक इन्द्रिय सुख देने का प्रलोभन दिया। लेकिन नचिकेता ने क्षणभंगुर समझकर सबका त्याग कर दिया। नचिकेता के त्याग से प्रसन्न होकर स्वेच्छा से एक अतिरिक्त वरदान दे दिया। कि अब यह अग्नि तुम्हारे ही नाम से जानी जायेगी। जब यमराज नचिकेता की योग्यता की परीक्षा कर लिए तभी नचिकेता को आत्मज्ञान का उपदेश किए।[13]

ऐसा भी देखा गया है कि वरदान देने वाला तीन वरदान से ज्यादा नहीं देता। स्वेच्छा से दे वह अलग बात है। लेकिन मांगने वाले को तीन ही वरदान मांगने की अनुमति प्रदान की जाती है। इसका एक कारण यह बताया जाता है कि भू: भुव: स्व: तीन ही लोक होते हैं। वरदान देने वाले को यह आशंका रहती है कि तीन वरदान में यदि तीनों लोक मांग लिया तो चौथे वरदान के लिए अवकाश नहीं रहेगा और वाणी असत्य हो जायेगी। इसीलिए यमराज ने तीन रात्रियों को आधार बनाकर तीन ही वर नचिकेता को दिये।

निष्कर्ष- शाप ऋषि मुनियों के मुख से निकला हुआ वह सत्य वचन होता है जिसका प्रकृति अनुसरण करती है। इस प्रकार शाप को महर्षि जन प्राय: एक शस्त्र के रूप में प्रयोग करते हैं। शाप में दोनों पक्ष दु:खी होते हैं शाप देने वाला भी और प्राप्त करने वाला भी। जबकि वरदान में दोनों पक्ष प्रसन्न होते हैं। इस प्रकार रामायण और महाभारत में प्राप्त शाप और वरदान के प्रसंगो से इनकी प्रकृति और विशेषताओं का स्पष्टी करण होता है। शाप और वरदान देने के लिए तप की ऊर्जा कार्य करती है। शाप और वरदान देने पर इस तपोबल का क्षय होता है। लम्बे समय तक सत्य वचन बोलने से सत्य सिद्ध हो जाता है। सत्य सिद्ध होने पर वाणी अचूक हो जाती है। साधक जैसा कहता है वैसा ही हो जाता है। शाप को वापस नहीं लिया जा सकता है। क्योंकि ऐसा करने का तात्पर्य है कि अपनी ही बात को असत्य सिद्ध करना। ये दोनों कभी-कभी इस जन्म में फलित न होकर दूसरे जन्म में फलित होते हैं। कभी-कभी वरदान भी शाप की तरह दु:खदायी सिद्ध होता है। शाप और वरदान के वचन असत्य होने पर देने वाले पुरुष को अधम लोकों की प्राप्ति होती है। शाप और वरदान कर्मेन्द्रिय वाक् पर आश्रित होने से कर्म के अन्तर्गत आते हैं। वरदान में दूसरा पक्ष खुश होने से पुण्यकर्म कर्म के अन्तर्गत आता है। वहीं शाप में दूसरा पक्ष दु:खी होने से पाप कर्म के अन्तर्गत आता है। इसलिए वरदान देने वाले पुरुष का वरदान सत्य होने पर भी उसे मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती। क्योंकि कर्म से चित्त शुद्ध होता है और ज्ञान से मोक्ष की प्राप्ति। हां यदि ये दोनों अनाशक्त भाव से किए जाएं तो मोक्ष में बाधक भी नहीं बनते हैं। वरदान हमेशा खुश होकर दिया जाता है और शाप हमेशा क्रोध की स्थिति में ही दिया जाता है। कभी-कभी ये दोनों परिस्थितियां एक साथ घटित हो जाती हैं। भवभूति ने शाप और वरदान की अवधारणा को संक्षेप में स्पष्ट कर दिया है कि लौकिक पुरुषों की वाणी अर्थ के अनुसार चलती है। लेकिन ऋषियों की वाणी के पीछे अर्थ स्वयं चलता है। अर्थात ऋषियों की वाणी का अनुसरण प्रकृति स्वयं करती है।

लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते।

ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति।। (उत्तररामचरितं 1.10)

अभी तक प्राप्त उदाहरणों से यही स्पष्ट होता है कि याचक अधिकतम तीन ही वरदान प्राप्त करने का अधिकारी होता है। इसका एक कारण यह बताया जाता है कि भू: भुव: स्व: तीन ही लोक होते हैं। शाप और वरदान देने के लिए योगबल का होना आवश्यक है। यह योगबल तपस्या, इन्द्रिय संयम, वाणी संयम आदि से प्राप्त होता है।

संदर्भ-

1–रघुवंश–5.56

2–ऋग्वेद 10.28.4

3–रामायण, बालकाण्ड, द्वितीय सर्ग, श्लोक–15

4–रामायण, बालकाण्ड, सर्ग–32, श्लोक–20

5–महाभारत, स्त्रीपर्व, अध्याय–25, श्लोक, 40–50

6–पातञ्जलयोगदर्शनम्, साधनपाद, सूत्र–36, व्यास भाष्य, योगसिद्धि हिन्दी व्याख्या, सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव, चौखम्भा सुभारती प्रकाशन, वाराणसी.

7–ततो न मे वचनमन्यथाभवितुमर्हति, किन्त्वभिज्ञानाभरणदर्शनेन शापो निवर्तिष्यत। अभिज्ञान शाकुन्तलम्, अंक–4

8–महाभारत, आदिपर्व, अध्याय–196, श्लोक–47

9–रामायण, युद्धकाण्ड, सर्ग–119 श्लोक–7

10–रामायण, बालकाण्ड, सर्ग–48, श्लोक –27–32

11–रामायण, युद्धकाण्ड, सर्ग–22, श्लोक–46

12–रामायण, युद्धकाण्ड, सर्ग–124, श्लोक–19

13–कठोपनिषद् 1.1.15

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, गीताप्रेस गोरखपुर, सचित्र हिन्दी अनुवाद सहित, संस्करण (PDF)
2. महाभारत, वेदव्यास, अनुवादक– रामनारायणदत्त शास्त्री, गीताप्रेस गोरखपुर (PDF)
3. उत्तररामचरितम्, डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार, इलाहाबाद, संस्करण, 2016.
4. रघुवंश महाकाव्य, मोतीलाल बनारसी दास, हिन्दी अनुवाद – आचार्य धारादत्त मिश्र, प्रथम संस्करण, 1974 (PDF)
5. संस्कृत हिन्दी कोश, वामन शिवराम आप्टे, नाग पब्लिशर्स, दिल्ली संस्करण, 2002.

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

भारतीयज्ञानपरम्परायां मानवविकासे संस्काराणां महत्त्वम्

डॉ. इक्कुर्ति. वेङ्कटेश्वर्लु

सहायकाचार्यः, शिक्षापीठम्, श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः, नवदेहली ।

Article Info
Volume 5, Issue 2
Page Number : 83-90
Publication Issue :
March-April-2022
Article History
Received : 01 March 2022
Published : 17 March 2022

शोधसारांशः- भारतीयज्ञानपरम्परायां मानवविकासाय वेदारभ्य अनेकानि शास्त्राणि मानवजीवनपद्धतिं निर्दिशन्ती आसन्। तत्र मानवविकासविषयकं विचारः भारतीयज्ञानपरम्परायां संस्कारेषु उपनिबद्धः वर्तते। तेषु उपनयन–समावर्तन–विद्यारम्भादि संस्काराः मानवविकासाय अत्यन्तमुपकुर्वन्ति।

मुख्यशब्दः- संस्काराः, मानवः, विकासः, संस्कारः, दैहिकः, मानसिकः ,बौद्धिकः।

मानवः सर्वजीवेषु अन्यतमः भवति। मानवस्य विकासः समाजेन भवति। प्रत्येकेन समाजेन मानवस्य विकासः तत् समाजस्य रूपरेखानुसारं भवति। तदैव भारतीयसमाजेन भारतीयमानवानां विकासः जायते। तत्रापि भारतीयमानवानां विकासस्तु भारतीयज्ञानानुसारं तथैव भारतीयसंस्कृतिसभ्यतानुसारञ्च भवति। तत्र भारतीयज्ञानपरम्परानुसारं मानवविकासाय काश्चन संस्काराः धर्मशास्त्रादि ग्रन्थेषु संस्काराणां विश्लेषणं तेषां प्राधान्यञ्च प्रपञ्चितं वर्तते। भारतीयज्ञानपरम्परायानुसारं मानवविकासः जायतेति नास्ति विसंवादः लेशमात्रेऽपि। तदत्र विचार्यते।

संस्काराः- भारतीयजीवनविधाने संस्काराणां प्राधान्यं वर्तते। जीवने सर्वाङ्गीण– विकासार्थं संस्काराः क्रियन्ते। यदि व्यक्तेः संस्कारः न क्रियते तर्हि व्यक्तिः संस्कारवान् न भवति । संस्कारस्याभिप्रायः शुद्धिः धार्मिकक्रियायां तथा व्यक्तेः दैहिक–मानसिक – बौद्धिक – परिष्काराणामनुष्ठानम्, अनेन व्यक्तिः समाजे पूर्णविकसितसदस्यरूपेण परिचितो भवति। किन्तु हैन्दवसंस्कारे बहूनि प्रारम्भिकविचारधार्मिकविधिविधानसहायकनियमानुष्ठानानि च समाविष्टानि। अस्योद्देश्यं केवलमौपचारिकदैहिकसंस्कारेषु सीमितं न भवति। प्रत्युत व्यक्तेः सम्पूर्णव्यक्तित्वस्य पूर्णत्वसम्पादनम्। वस्तुतः सर्वविध– संस्कारेषु संस्कृतव्यक्तेः विलक्षणीयता तथा अवर्णनीयता परिलक्षिता भवति।[1]

संस्कारस्यानुष्ठानं वैदिककालात् पूर्वमभवत् यत्र कर्मकाण्डस्य प्रयोगोऽभवत्। शतपथब्रह्मणे – स इदं देवेभ्यो हविः संस्कुरु साधु संस्कृतं संस्कुर्वित्येवैतदाह[2] इति । पुनः तस्मादुस्री पुंमासं संस्कृते तिष्ठन्तमभ्येति इति वर्णितम्। छान्दोग्योपनिषदि[3] – तस्मादेव एवं यज्ञस्य मनश्च वाक् च वर्तिनी। न्यतरां मनसा संस्करोति ब्रह्म वाचा होता इति दृश्यते। एतेन ज्ञायते यत् संस्काराः व्याक्तिं व्यक्तित्ववन्तं कुर्वन्ति इति। एवञ्च मानवः यदि जन्मना शूद्रोऽपि संस्कारेण द्विजः भवति।[4] अतः व्यक्तिं संस्कर्तुं संस्काराः करणीयाः।

संस्काराणां वर्गीकरणम्- भारतीयप्राचीनपरम्परायां संस्काराणां निश्चितसंख्या नास्ति। मनु – याज्ञवल्क्य – विष्णवादिषु स्मृतिषु षोडशसंस्काराः निरूपिताः। गौतमधर्मसूत्रे संस्काराः चतुर्दश इति निरूपिताः। महापुराणे तु संस्काराः अष्ट[5] इति निरूपिताः। तथापि भारतीयजीवनविधाने षोडशसंस्काराणां क्रमः अस्ति। ते संस्काराः क्रमशः एवं भवन्ति – 1.

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

गर्भाधानम् 2.पुंसवनम् 3. सीमन्तोन्नयनम् 4. जातकर्मविधि: 5. नामकरणम् 6. निष्क्रमणम् 7. अन्नप्रासनम् 8.चूडाकर्म 9. कर्णवेधनम् 10. उपनयनम् 11. वेदारम्भ: (विद्यारम्भ:) 12. समावर्तनम् 13. विवाह: 14. वानप्रस्थ: 15. संन्यास: 16. अन्त्येष्टि: इति।

जन्मन: प्राक्संस्कारा: - 1.गर्भाधानम् 2.पुंसवनम् 3. सीमन्तोन्नयनम्।

शैशवावस्थायां संस्कारा: – 4. जातकर्म 5. नामकरणम् 6.निष्क्रमणम् 7.चूडाकर्म 8.अन्नप्राशनम् 9. कर्णवेध:। विद्याध्ययन–संस्कारा: – 10. उपनयनसंस्कार: 11. वेदारम्भसंस्कार: 12. समावर्तनसंस्कार: । गृहस्थाश्रमसंस्कारा: – 13. विवाहसंस्कार: 14. वानप्रस्थसंस्कार: 15. **संन्याससंस्कार:।**

मरणानन्तरसंस्कार: – 16. अन्त्येष्टि:।

संस्कारस्य उद्देश्यानि

1. अवाञ्छितप्रभावस्य निराकरणम्।

2. अभीष्टप्रभावाणामामन्त्रणम्।

3. धन–धान्य–पशु–सन्तान–दीर्घायु–समृद्धि–शक्ति–बुद्धीनां प्राप्ति:।

4. जीवनदशायां बहूनां हर्षानन्दविषयादभावानामभिव्यक्तीकरणम्।

5. सामाजिकविशेषाधिकारेषु दायित्वप्राप्ति:। यथा – उपनयनात् परं वेदाध्ययने धार्मिकक्रियासु च अधिकार:।

6. गर्भबीजसम्बन्धिदोषाणां दूरीकरणम्।

7. स्वर्गमोक्षयोश्च प्राप्ति:। शङ्खलिखितौ कथयत: – संस्कृत: अष्टावात्मगुणै: युक्त: पुरुष: ब्रह्मलोकं प्राप्नोति। यथा – संस्कारै: संस्कृत: पूर्वैरुत्तरैरनुसंस्कृत:।

नित्यमष्टगुणैर्युक्तो ब्रह्मणो ब्रह्मलौकिक:।

ब्रह्म्यं पदमवाप्नोति यस्मान्नच्यवते पुन:।।

8. व्यक्ते: नैतिकविकास:।

9. व्यक्तित्वस्य निर्माणं विकासश्च। चित्रक्रमेऽपि संस्कारस्य आवश्यकतां प्रतिपाद्य अङ्गिरा: कथयति –

चित्रकर्म यथाऽनेकैरङ्गैरुन्मील्यते शनै:।

ब्रह्मण्यमपि तद्वत् स्यात् संस्कारैर्विधिपूर्वकम्।।

10. योऽनुभवार्थं सम्पूर्णदैहिकक्रियायामाध्यात्मिकध्येयं सूचयति।

11. व्यक्तेरन्त: करणे सामाजिकदायित्वप्रबोधनम्।

12. अध्ययने प्रभावपूर्णाधिगमसाधनाय इति।

संस्कारशब्दार्थ: संस्कारस्वरूपञ्च- संस्कारशब्दस्य निष्पत्ति: सम् उपसर्गात् कृञ्धातो: घञ् प्रत्यये भवति। अस्यार्थ: प्रतिपन्नोऽनुभव: मानसकर्म वेति मेदिनीकोषकारस्य अभिमतम्। संस्कारतत्त्वमतानुसारं संस्कारशब्द: शुद्धि: अदृष्टविशेषजनकं कर्म च। यथा यद्यग्निस्थापनानन्तरं कर्मकाले वृष्ट्यादि शङ्कया संस्काराग्निरन्यत्रानीयते तदा पुनर्भूसंस्कार: कर्तव्य:। समूह्य उपलिप्य उल्लिख्य उद्धृत्य अभ्युक्ष्य एव भूसंस्कार: क्रियते गृह्यानुसारात् ।

हलायुधकोशकारमतानुसारं6 संस्कार- शब्दस्यार्थो भवति वासना, प्रतियत्न:, अनुभव:, मानसकर्म, गुणविशेष: पृथिव्यादिचतु: पदार्थगुणश्च।

संस्कारशब्द: अंग्रेजीभाषायां सेक्रामेण्ट[7] इति शब्देन बहुधा व्यवह्रियते। धार्मिकविधिविधानमेव सेक्रामेण्ट शब्दस्यार्थ: । अनेन प्रकारेण बहुत्र धार्मिकक्षेत्रेषु प्रयुक्त: व्याप्तश्चायं शब्द: संस्कृतसाहित्ये शुद्धिप्रायश्चित्तव्रतादिष्वन्तर्भवति ।

संस्कारशब्दं दार्शनिकदृष्ट्या मीमांसका एवमभिप्रयन्ति यत् यज्ञाङ्ग-भूतपुरोडाशादीनां विधिवत् शुद्धिरिति।[8] अद्वैतवेदान्तिन: जीवे शारीर- क्रियाया: मिथ्यारोप9 इति प्रतिपादयन्ति। नैयायिका: भावस्य व्यक्तीकरणाय आत्मव्यञ्जकशक्ति: संस्कार:[10] इति कथयन्ति। संस्कृतसाहित्ये संस्कारस्य प्रयोग: शिक्षासंस्कृति: प्रशिक्षण[11]-सौजन्यपूर्णता-व्याकरणगत- शुद्धि[12]-संस्करण-परिष्करण[13]-शोभा-आभूषण[14]-प्रभाव-स्वरूप- स्वभाव- क्रिया-स्मरणशक्ति:[15]-स्मरणशक्त्या वर्धितप्रभाव[16]-शुद्धक्रिया- धार्मिक- विधिविधान[17]-अभिषेक-विचारभावना-धारणा-परिणामादिक्रियादिषु अर्थेषु प्रयुक्तो दृश्यते।[18] एते सर्वेऽपि क्रियाकलापा: मानवं प्रभावयन्ति। संस्कारेण य: कोऽपि मानव: योग्यवान् भविष्यति[19] एव। संस्कारकरणे व्यक्ते: गुणानाम् आह्वानं, दोषाणां दूरीकरणं च भवति।[20] यदि संस्कार: क्रियते व्यक्ते: मूलप्रवृत्ति: दमिता भवति।[21] तेन व्यक्ति: उत्तमव्यवहारवती, ज्ञानवती च भविष्यति। विद्याधिगमसंस्कारा: (शैक्षणिकसंस्कारा:) यद्यपि षोडशसंस्कारा अपि मानवं सच्छीलवन्तं, ज्ञानवन्तं, संस्कारवन्तं च कुर्वन्ति। तथापि विद्याधिगमसंस्कारा: तु व्यक्तिम् अध्ययनार्थं प्रेरयन्ति। दीक्षाबद्धञ्च कुर्वन्ति। अत: विद्याधिगमसंस्कारा: व्यक्ते: जीवनपरिवर्तने महत्त्वपूर्णा: भवन्ति। मातृगर्भत: जन्मापेक्षयाऽस्य कर्मण: संस्कारेण च गुरुत्वं सर्वाधिकम्। अस्मिन् संस्कारे उपनयनयोग्य: बालक उपनीतो भूत्वा गुरुगृहे स्थित्वा, वेदाध्ययनं करोति। अध्ययनं समाप्य प्रस्थानमपि करोति। विद्याधिगम- संस्कारेषु त्रय: अन्तर्भवन्ति। ते च भवन्ति यथा - 1.उपनयनसंस्कार: 2. वेदारम्भसंस्कार: 3. समावर्तनसंस्कार: ।इदानीमेतेषां संस्काराणां प्रभाव: छात्रेषु कीदृश: इति विमृश्यते ।

उपनयनसंस्कार: - नयनं दर्शनं नेत्रम् इति वचनानुसारेण नयनशब्दस्य दर्शनमित्यर्थ:। उप इत्युपसर्गपूर्वक णीञ् प्रापणे इत्यस्मात् धातो: करणाधिकरणयोश्च इति सूत्रेण ल्युट् प्रत्ययो भवति।[22]

उपनयनसंस्कारस्यार्थ: भवति गुरो: समीपं नयनमिति। पिता बालकं गुरो: समीपं नयति। तत्र गुरु: तमुपनीय स्वगृहे स्थापयेदिति।[23] ब्रह्मचारिण: मौञ्जीबन्धनसमये (उपनयनवेलायां) माता सावित्री इति पिता तु गुरुरिव भवति।[25] एवञ्च उपनयनस्य परममुद्देश्यं वेदानामध्ययनमेव। अत: ब्रह्मचारी वेदाध्ययनं तदा एव प्रभावरूपेण कर्तुं प्रभवति। यदा स: उपनीतो भवति।[26] ससिंद्धच्छात्रे प्रभावपूर्णाधिगम: जायते। आचार्यादीनाम् उप-समीपं वटोर्नयनं प्रापणमुपनयनम्। अर्थात् गुरु-विद्या-यम-नियम-देवत्वादिषु श्रद्धा कल्पनेन, नियमकल्पनेन छात्र: द्विज: भवति।[27] उपनयनं विद्यार्थिन: श्रुतित: संस्कार: इति।[28] उपनयनसंस्कारस्यानुष्ठानार्थं कश्चन कालोऽपि धर्मसूत्रकारै: निर्दिष्ट:। तदनुसारं ब्रह्मणस्य अष्टमे वर्षे, क्षत्रियस्य एकादशवर्षे, वैश्यस्य द्वादशवर्षे उपनयनं करणीयमिति।[29]

तेऽनुपनीता: बालका: द्विजकुलेषु जाता अपि कर्मणा शूद्रतुल्या: भवन्ति। अर्थात् अध्ययनाय अनर्हा: भवन्तीति। तादृशसन्दर्भे व्रत्यस्तोमं कृत्वा तत: उपनीतो भूत्वा पुन: अध्ययनाय उपक्रमो विधीयते।[30] कुतश्चेत् जन्मना जायते शूद्र: संस्काराद् द्विज उच्यते इति आर्षवचनात् द्विजत्वं ज्ञानेन, उत्तमव्यवहारेण, सच्छीलेन च प्राप्यते।

अध्यापनार्थमुपयुक्त: गुरु: चेतव्य:। पित्रा गुरो: गुणान् सम्यक् परीक्ष्य अध्यापनयोग्यं गुरुं चिनोति। यदि गुरु: वैदिकनिष्ठ:, कुलीन:, शुचिमान्, श्रोत्रियवान्, अनालस्यपर:[31] च न भवति, तादृशस्य समीपे शिष्य: किमपि अधिगन्तुं न

शक्नोति। उपनयनसमये विधीयमानस्य यज्ञोपवीतस्य माहात्म्यमिदं ग्राह्यम्। यज्ञोपधारणेन ब्रह्मचारिण: बुद्धिशुद्ध:,[32] बलं, तेज: च वर्धते।

संस्कारसमय:- उपनयनसंस्कारस्यानुष्ठानार्थं काल: निर्दिष्टो वर्तते। साधारणत: उपनयनं सूर्ये उत्तरायणे स्थितवति सम्पद्यते। वैश्यानां दक्षिणायनं विधीयते। विभिन्नवर्णानां कृतेऽपि संस्कारसमयो निर्दिष्ट:। वसन्तकाले ब्रह्मणस्य उपनयनं करणीयं, यत: कालेऽस्मिन् शान्तवातावरणं, तेन उपनीत: छात्र: स्वविद्यां सम्यगधिगन्तुं शक्नोति, सात्विक: च भवितुमर्हतीति। ग्रीष्मकाले क्षत्रियाणाम् उपनयनं करणीयं, तेन क्षत्रियत्वं, राजसं, धनुर्विद्यां च सम्यगधिगच्छन्ति। शरदृतुकाले वैश्यानाम् उपनयनं करणीयम्, तथैव वर्षासु रथकाराणां नाम शूद्रानाम्[33] उपनयनं करणीयमिति। तेन स्वस्वविद्यामधिगन्तु ते ससिंद्धा: भवन्ति।

ज्यौतिषशास्त्रमतानुसारं तेषां ग्रहाणां प्रभावेण कीदृशं फलं लभ्यते इत्यपि निरूपितं वर्तते। माघमासे उपनीत: वटु: महाधनिक: भवति। फाल्गुण- मासे उपनीत: प्रज्ञावान्, मेधावी च भवतीति। चैत्रे उपनीत: सम्यक् विद्यामधि- गच्छति । वैशाखमासे उपनीत: सुखभोगान् प्राप्नोति इति। ज्येष्ठे कीर्तिमान्, आषाढे विजेता, महापण्डित: च भवतीति स्पष्टमुल्लिखितम्।[34]

वस्त्रधारणम्- यथा आधुनिककाले अनुशासनार्थं छात्रै: समवस्त्रधारणं क्रियते तथैव प्राचीने काले उपनयनसंस्कारादेव समानवस्त्रधारणं क्रियते स्म। उपनीयमानो ब्रह्मचारी मृगचर्मै: निर्मतवस्त्रं धरति स्म।[35] एवं भिन्नपाठ्यक्रमाध्येतृणां विभिन्नवस्त्रधारणमासीत्। ब्रह्मविद्याधिगन्तृणां मृगचर्मवस्त्रं, सैनिकशिक्षाम् अधिगन्तृणां कृते कार्पाससमवस्त्रं च निर्दिष्टम्।[36] वेषे उपरि वस्त्रम् अधोवस्त्रं च ध्रियते। ब्रह्मणच्छात्रेभ्य: कृष्णमृगचर्मस्य वस्त्रं धरणीयमिति,[37] अन्यच्छात्रै: भेडचर्मेण निर्मितवस्त्रं धरणीयमिति[38] च नियम: कल्पित:। एतत्सर्वमपि स्वविद्यायां दीक्षात्मकश्रद्धामानेतुं प्राचीनकाले अधिगन्तृभ्य: नियमा: कल्पिता:।

दण्ड:- ब्रह्मचारिणा वस्त्रधारणानन्तरं दण्डधारणं करणीयमासीत्। आचार्य: ब्रह्मचारिणे दण्डमेकं प्रयच्छति स्म। य: दण्ड: ब्रह्मचारिणा मन्त्रपूर्वकं गृह्यते, स च दण्ड: दीर्घायुर्निमित्तं, वर्चसनिमित्तं शुध्यर्थं च गृह्यते स्म। अन्यथा ब्रह्मचारी विद्यारक्षणनिमित्तमपि दण्डं स्वीकुर्यात्। ब्रह्मणेभ्य:, क्षत्रियेभ्य:, वैश्येभ्य: च क्रमश: पलाश-उदुम्बर-बिल्वदण्डा: च दीयन्ते। अन्ये तु यत् किमपि दण्डं धर्तुं शक्नुवन्ति।[39] ब्रह्मणस्य दण्ड: तस्य केशपर्यन्तं, क्षत्रियस्य ललाटान्तं, वैश्यस्य नासिकान्तं च भवेत्।[40] दण्डधारणै: सौम्येन, दर्शने उद्वेगरहिता:, अनग्निदूषिता च भवेयु:।[41] तत्त्वमिदमपि छात्रेषु समानतामानेतुं निर्दिष्टोपाय: भवति।

मेखला- आचार्य: बालकस्य कटिदेशे चतुर्षु दिक्षु समन्त्रकां मेखलां बध्नीयात्। मेखलासूत्रै: त्रिगुणवेष्टितो भवेत् वटु:। अस्यार्थ: भवति ब्रह्मचारी सर्वदा त्रिभि: वेदैरावृतो तिष्ठति। मेखला तं ब्रह्मचारिणं गोपायितुं तथा दुष्प्रभावेभ्य: त्रातुमपि समर्था भवति। मेखला ब्रह्मणस्य मुञ्जनिर्मिता, क्षत्रियस्य धनुर्गुण- निर्मिता, वैश्यस्य ऊर्णासूत्रविशिष्टा भवेत्। कदाचित् सर्वेभ्य: अपि मुञ्जनिर्मिता मेखलाऽपि धर्तुं शक्यते इति।[42]

यज्ञोपवीतम्- मेखलाधारणानन्तरं ब्रह्मचारी उपवीतं सूत्रं गृह्णीयात्। यत: संस्कारे- ऽस्मिन् सर्वाधिकं महत्त्वं विद्यते। धर्मशास्त्रनियमानुसारमुपवीतब्रह्मणाय कार्पाससूत्रनिर्मितं, क्षत्रियाय शणनिर्मितं, वैश्यस्याविकसूत्रनिर्मितं यज्ञोपवीतं दीयते स्म।[43] यज्ञोपवीतं ब्रह्मणानां श्वेतं, क्षत्रियस्य रक्तं, वैश्यस्य हरिद्रावर्णं भवेदिति।[44] उपवीतस्य सूत्रं त्रिगुणावृतं भवेदिति। यज्ञोपवीतधारणसमये आचार्य: शिष्यमाशीर्वचनपूर्वकम् आयुष-बल-तेजसा वर्धनार्थं प्रार्थयति।[45] यज्ञोपवीतधारणकाले ब्रह्मचारी सूर्येक्षणं करोति। ब्रह्मचारी उपवीतवस्त्रमेकं धारयति। गृहस्थ: उपवीतवस्त्रद्वयं धारयति। आत्मन: निमित्तमेकं,

पत्नी– निमित्तमेकं च धरतीत्यर्थः। यज्ञोपवीतधारणतत्त्वमिदं छात्रं सच्छीलं करोति यतः यज्ञोपवीतं परमं पवित्रमिति। अतः छात्रः यज्ञोपवीतं दृष्ट्वा मनोनिग्रह– पूर्वकविद्यामभ्यस्यति।

हृदयस्पर्शः- यज्ञोपवीतधारणानन्तरमाचार्यः ब्रह्मचारिणं स्वशिष्यरूपेण स्वीकरोति। तदनन्तरमाचार्यः शिष्यस्य दक्षिणस्कन्धदेशे उपस्थितो भूत्वा तस्य हृदयं स्पृशति ।[46] अर्थात् तमालिङ्गति। एतेन शिष्यस्य हृदये आचार्यस्य स्थानं गौरवं, दैवसदृशं, पितृतुल्यञ्च भवति।

आदेशपालनम्- ततः आचार्यः शिष्यमग्निप्रदक्षिणं कर्तुं तत्र आहूतिदानार्थं च आदिशति। अन्यांश्च नियमानादिशति। ते च नियमाः – दिवा छात्रेण स्नानं न करणीयम्, अतिभाषणं न करणीयम्, अग्नौ समिधादानं प्रतिदिनं करणीयमिति।[47] छात्रः आचार्यस्यादेशानुसारं वचनं पालयति स्म । तेन शिष्यः आचार्यस्य आज्ञाबद्धः, दीक्षाबद्धश्च भवति स्म। एतेन आदेशपालनेन छात्रे क्रियानुबन्धनाधिगमो जायते।

भैक्षकर्म- उपनयनसंस्कारे विधिवत् भैक्षकर्मोद्देश्यमिदं निर्दिष्टम्। इयमेव भिक्षा समग्रविद्यार्थिजीवनपर्यन्तं पोषणस्य प्रमुखं साधनमासीत्। उपनयनदिने बालकः मातरं भिक्षां याचते। अपरानपि परिजनान् भगिनीं च सः भिक्षां याचते।[48] स भिक्षामानीय गुरोः कृते समर्पयति।[49] एवं प्रकारेण विधीयमानेन उपनयनसंस्कारेण बालकः छात्रत्वेन द्वितीयजन्म प्राप्नोति। एवञ्च विद्यायाम् आसक्तो भूत्वा सर्वविधविषयान् सम्यगभ्यस्यति ।

अनेन विमर्शनेन विद्यार्थिनां केचन गुणाः प्रकटिताः भवन्ति –

1. मनसः पूर्णस्वातन्त्र्यम्
2. आत्मनियन्त्रणम्
3. सदा सेवासन्नद्धता
4. लोकज्ञानम्
5. सहिष्णुता
6. स्वाध्यायः
7. ईर्षादिगुणानां परित्यागः

संस्कारोऽयं एतन्निर्दिशति यत् विद्यार्थी ज्ञानपथस्य एकः दूरगामी यात्री विद्यते । अनेन संस्कारेण छात्रः विद्यायामासक्तो भविष्यतीति प्राचीनानां धर्मशास्त्रज्ञानां च धीः।

विद्यारम्भसंस्कारः (गुरुकुले प्रवेशः)- उपनयनानन्तरं सुतं पिता गुरुकुलं नीत्वा तत्र गुरुकुले (विद्यालये) आचार्यस्य सकाशे वेदाध्ययन–गायत्र्युपासना–शौचाचारादिशिक्षणार्थं स्थाप्यते।[50] स्मृतिकारः व्यासः अस्मिन् विषये प्रथमतः उल्लिलेख। उपनयना– नन्तरं किमपि शुभदिनं निश्चित्य अयं संस्कारः आयोज्यते। गौतमः आश्व– लायनेऽपि वेदारम्भसंस्कारे चत्वारि वेदव्रतानि करणीयानि इति। प्रथमं महानाम्नी, द्वितीयं महाव्रतम्, तृतीयम् उपनिषद्, चतुर्थं गोदानाख्यं[51] च कृत्वा विद्यालये प्रवेशः करणीयः छात्रेण। उपनयनानन्तरमेव पवित्रतमगायत्रीमन्त्राध्ययनेन साकं वेदाध्ययनं प्रारभ्येत।[52]

प्राचीनभारते विद्यायाः प्रारम्भः श्रावणमासे भवति स्म, अतः तस्य संस्कारस्य नाम श्रावणी उपाकर्म[53] इति । एतेन वार्षिकारम्भः भवति। एवं प्रकारेण प्रविष्टच्छात्रेभ्यः आचार्येण विशेषोपदेशः क्रियते।[54] सः उपदेशः अत्यन्तप्रभावी आसीत्। एतेन उपदेशेन छात्राः निद्रा, आलस्यं, भयं, क्रोधादीन् त्यक्त्वा[55] गुरुनियमानुसारं श्रद्धां च प्राप्य वेद–वेदाङ्ग–दर्शन–उपवेद–ब्रह्मण– आरण्यक–उपनिषदादि ग्रन्थान् तेषां रुच्यनुगुणमधिगच्छन्ति स्म।

समावर्तनसंस्कारः- आधुनिकशिक्षाप्रणाल्यामध्ययनानन्तरमर्थात् स्नातक–स्नातकोत्तरा– द्यध्ययनसमनन्तरं यथा दीक्षान्तसमारोहे उपाधिः दीयते। तथैव प्राचीनभारतीय शैक्षिकप्रशासनप्रणाल्यां समावर्तनसंस्कारः इति एकं तत्त्वं भवति।

संस्कारोऽयं ब्रह्मचर्यस्य विद्यार्थिजीवनस्य च परिसमाप्तिं सूचयति। किं नाम समावर्तनम् इति चेत् वेदाध्ययनानन्तरं गुरुकुलात् स्वगृहागमनम्।[56] ब्रह्मचर्यपूर्वकवेदा- ध्ययनानन्तरं गुरोरनुमतिं स्वीकृत्य गृहस्थाश्रमस्वीकरणार्थं ब्रह्मचर्यसमाप्त्यर्थं च कृतं यत् स्नानं तत् समावार्तनमिति[57] सूरिभिः परिकीर्त्यते। मनुमते स्नानम्- समावर्तनम् इति पदद्वयस्यापि एकः एवार्थः। स्नान (समावर्तनं) संस्कारानन्तरं ब्रह्मचारिभ्यः[58] स्नातकोपाधिः दीयते। शास्त्रकाराणां मते स्नातकं त्रिप्रकारकरूपेण परिभाषितं, यथा - विद्यास्नातकं-व्रतस्नातकं-विद्याव्रतस्नातकमिति।[59] अत्र विद्यमानानां त्रयाणां स्नातकानां विद्याध्ययनैव विद्याव्रतस्नातकं च पाल्यते।[60] समावर्तनसंस्कारसमये क्षौरकर्म-स्नान-वस्त्र-आभूषण-केश-नखेत्यादि[61] संस्कारान् अधिगम्य गृहस्थाश्रमे प्रविशत्। स्नातकसमये शिष्याय आचार्येण अन्तिमदीक्षान्तसमारोहे उपदेशः क्रियते। वेदः - सत्दं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः[62] इत्यादि उपदेशेन पुनः शिष्यस्य स्वकर्तव्यं सूचयति आचार्यः। एवं क्रियमाणे समावर्तनसंस्कारेण अन्तेवासिनः गृहस्थाश्रमे कथं भाव्यम्? कथं व्यवहर्त्तव्यम्? कीदृशज्ञानं प्राप्तव्यम्? इत्यादि विषयान् अधिगच्छन्ति स्म।

उपसंहारः - भारतीयज्ञानपरम्परायां मानवविकासाय वेदारभ्य अनेकानि शास्त्राणि मानवजीवनपद्धतिं निर्दिशन्ती आसन्। तत्र मानवविकासविषयकं विचारः भारतीयज्ञानपरम्परायां संस्कारेषु उपनिबद्धः वर्तते। तेषु उपनयन-समावर्तन-विद्यारम्भादि संस्काराः मानवविकासाय अत्यन्तमुपकुर्वन्ति।

पादटिप्पणीः-

1. आत्मशरीर ..वि.मि.सं.भा.2, पृ.132
2. स इदं देवेभ्यो .... श.ब्र.1.1.4. 10, 3, 2,1.22
3. तस्मादेव .... छा.उ.4.26.12
4. जन्मना .... म.स्मृ.10.125
5. म.पुरा. 30. 51. 68
6. ह.को.पृ. 680
7. आक्सफोर्ड डिक्सनरी .... सेक्रामेण्ट शब्दः
8. प्रोक्षणादि .. वा.स्प.बृ.भा,5, पृ.5188
9. स्नानाचमनादि .... तत्रैव.
10. संस्कारव्यवहारा .... त.भा.पृ.212
11. निसर्गसंस्कार .... र.वं.3.35
12. संस्कारवत्येव.... कु.स.1.28
13. प्रयुक्तसंस्कार .... र.वं.3.28
14. स्वभावसुन्दरं .... अ.शा.7.33
15. यन्नेव याजने .... हि.दे.1.108
16 .संस्कारजन्यं .... त.सं.
17 .कार्यः शरीर .... म.स्मृ.2.26

18. फलानुमेयाः .... र.वं.1.20

19.संस्कारो स ..वेदा.सू. 3.1.13.शा.भा

20. संस्कारो हि ..वेदा.सू.1.15, प.शा.भा.

21. एवमेव .... या.स्मृ.1.23

22. उप इत्युपसर्गस्य .... सं.द.51

23. उपनीयमानां .... अ.वे.11.5.3

24 . यत्र यद् .... म.स्मृ.2.170

25. उपनीय .... या.स्मृ.1.15

26. गुरोव्रतानां .... वि.मि.सं.प्र.पृ.334

27. उपनयनं .... आ.स्त.ध.सू.1

28. पा.गृ.सू.2.2; आ.गृ.सू.1.19; शां.गृ.सू.2.1; बौ.गृ.सू.2.5; आ.गृ.सू. 1.1; गौ.गृ.सू.10; म.स्मृ.2.36; या.स्मृ.1.11

29. अत ऊर्ध्वं .... म.स्मृ.2.39

30. ब्रह्मणः .... व्यासः द्रष्टव्यम्

31. यज्ञोपवीतं .... सं.द.57

32. वसन्ते .... बो.गृ.सू.11.5.6

33. माघे मासि .... राज.वि.मि.सं.प्र.354

34. कार्णशैरव .... म.स्मृ.1.41

35. ब्रह्मवृद्धि आप.ध.1.1.3. 9.1011

36. हारिणमेणेयं .... तत्रैव

37.आ.गृ.सू.1.10.23, 1.20

38. बैल्वपालाशौ .. गौ.ध.सू. 1.24.27

39. दण्डोऽव्रणः .... म.स्मृ.2.47

40.मौञ्जी ....म. स्मृ.2.42,व.ध.सू. 11.48

41. बौ.ध.सू. 2.7.13

42. कार्पासमुपवीतं .... म.स्मृ.2.44

43. वि.मि.सं.प्र.पृ.415

44. यज्ञोपवीतं .... पा.गृ.सू.2.2.13

45. मम व्रते .... पा.गृ. सू.2.2.18

46. दिवाशयनं मा कुरु .. पा.गृ.सू.2.3.2

47. मातरं वा .... म.स्मृ.2.50

48. समाहृत्य .... म.स्मृ.2.51

49. कृत्वोपमयनं .... सं.द.60

50. प्रथमं स्यान्महानाम्नी .... सं.म.पृ.63

51. महर्षि दयानन्दः .... वे.सं.प्र

52. समारब्धेष्व .... बो.गृ.सू.3.103

53.सब्रह्मचारिणश्च .... जै.गृ.सू.1.14

54. तपोऽशान .... तै.उ.शि.

55. वि.मि.सं.प्र.पृ.564

56. विद्यां समाप्य .... सं.र.62

57.गुरुणाऽनुमतः .... म.स्मृ.3.4

58. वेदं समाप्य .... आश्व.गृ.सू.

59. म.स्मृ.4.31; गो.गृ.सू.3.5.23, आप.ध.सू.1.5, 1.22,23;

60. क्लृप्त .... म.स्मृ.4.35; 61.वेदमानूच्या .... तै .उ. शि.12 अ

सन्दर्भग्रन्थसूची:-

1. संस्काराणां पर्यालोचनम् – डा. जयकृष्णमिश्रः, श्री जगन्नाथसंस्कृतविश्वविद्यालयः, पुरी, 2005।
2. वेदों मे समाजशास्त्र अर्थशास्त्र और शिक्षाशास्त्र – डा. कपिलद्विवेदी, विश्वभारती अनुसन्धान परिषद, ज्ञानपुरम्।
3. भारतीय संस्कृतिः – डा. प्रीति प्रभा गोयल्, विद्यानिधि प्रकाशनम्, दिल्ली।
4. प्राचीनभारत की शिक्षा पद्धति – डा. कृष्णकुमार, मयंक प्रकाशनम्, लखनऊ।
5. https://www.yourarticlelibrary.com/education/indian-education/top-9-educational-rituals-sanskaras-observed-during-ancient-india/63499

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

मूल्य आधारित शिक्षा

डॉ० गिरीश कुमार वत्स
प्राचार्य, ऐ० टी० एम० एस० कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन, अछेजा, हापुड़, उत्तर प्रदेश।

Article Info

Volume 5, Issue 2

Page Number : 91-96

Publication Issue :

March-April-2022

Article History

Received : 01 March 2022

Published : 17 March 2022

सारांश – आज भारत के युवा वर्ग को ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो उनमें सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों को अपने जीवन में अपनाने को प्रेरित करें तथा वे मानवता पर खरे सिद्ध हो सकें, निःसन्देह विद्यार्थियों में इस प्रकार के मूल्यों को स्थापित करने के लिये शिक्षकों को तैयार करना पड़ेगा यदि हमारे शिक्षक ऐसे मूल्यों से युक्त होंगे तभी वे सशक्त हो सकेंगे और अपने विद्यार्थियों में मूल्यों का प्रस्फुटन कर सकेंगे। जब हम शिक्षा की बात करते हैं तो सामान्य अर्थो में यह समझा जाता है कि इसमें हमें वस्तुगत ज्ञान प्राप्त होता है तथा जिसके बल पर कोई रोजगार प्राप्त किया जा सकता है। ऐसी शिक्षा से व्यक्ति समाज में आदरणीय बनता है। समाज और देश के लिए इस ज्ञान का महत्व भी है क्योंकि शिक्षित राष्ट्र ही अपने भविष्य को सँवारने में सक्षम हो सकता है। आज कोई भी राष्ट्र विज्ञान और तकनीक की महत्ता को अस्वीकार नहीं कर सकता, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इसका उपयोग है। वैज्ञानिक विधि का प्रयोग कृषि और पशुपालन के क्षेत्र में करके ही हमारे देश में हरित क्रांति और श्वेत क्रांति लाई जा सकी है। अतः वस्तुपरक शिक्षा हर क्षेत्र में उपयोगी है। शिक्षा व्यक्ति के मानसिक व बौद्धिक विकास का महत्त्वपूर्ण साधन होता है। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति को कुसंस्कारों व मानसिक गुलामी से बचाया जा सकता है। इसके द्वारा विद्यार्थियों में आत्मविश्वास, नई चेतना व जोश पैदा कर सामाजिक विकृतियों, अंधविश्वासों, गैर बराबरी की स्थितियों, क्रूरता व शोषण के विरुद्ध खड़ा किया जा सकता है। आज नई पीढ़ी जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में नित नई उपलब्धियां प्राप्त कर रही है। अनेक भौतिक उपलब्धियां प्राप्त कर अंतरिक्ष में मनुष्य भेजने की तैयारियां चल रही हैं। मनुष्य ने शिक्षा से असीमित संभावनाओं के द्वार खोल दिए हैं, लेकिन आज हम शिक्षा में ऐसी कमी अनुभव करते हैं, जिसका निदान आवश्यक है।

मुख्य शब्द : मूल्य आधारित शिक्षा, मूल्य शिक्षा का जीवन में महत्व व आवश्यकता, वर्तमान शिक्षा में मूल्यों का आभाव, मूल्य आधारित शिक्षा हेतु सुझाव।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

प्रस्तावना– जब हम शिक्षा की बात करते हैं तो सामान्य अर्थो में यह समझा जाता है कि इसमें हमें वस्तुगत ज्ञान प्राप्त होता है तथा जिसके बल पर कोई रोजगार प्राप्त किया जा सकता है । ऐसी शिक्षा से व्यक्ति समाज में आदरणीय बनता है । समाज और देश के लिए इस ज्ञान का महत्व भी है क्योंकि शिक्षित राष्ट्र ही अपने भविष्य को सँवारने में सक्षम हो सकता है । आज कोई भी राष्ट्र विज्ञान और तकनीक की महत्ता को अस्वीकार नहीं कर सकता, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इसका उपयोग है । वैज्ञानिक विधि का प्रयोग कृषि और पशुपालन के क्षेत्र में करके ही हमारे देश में हरित क्रांति और श्वेत क्रांति लाई जा सकी है ।अतः वस्तुपरक शिक्षा हर क्षेत्र में उपयोगी है ।परंतु जीवन में केवल पदार्थ ही महत्वपूर्ण नहीं हैं । पदार्थो का अध्ययन आवश्यक हैा राष्ट्र की भौतिक दशा सुधारने के लिए तो जीवन मूल्यों का उपयोग कर हम उन्नति की सही राह चुन सकते हैं । हम जानते हैं कि भारत में लोगों के बीच फैला भ्रष्टाचार किस तरह से विकास की धार को मोथरा किए हुए है । आज की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है – पढ़–लिखकर धन कमाना । चाहे धन कैसे भी आता हो, इसकी परवाह न की जाए । यही कारण है कि शिक्षित वर्ग भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने में सबसे आगे हैं । शिक्षा प्राप्ति की एक सुविचारित नीति होनी चाहिए । छात्रों की शुरू से ही यह जानकारी देनी चाहिए कि जीवन में आगे चलकर तुम्हें किन समस्याओं से जूझना होगा । छात्रों को पता होना चाहिए कि जीने के मार्ग अनेक हैं तथा उस मार्ग को ही चुनना श्रेयस्कर है जो व्यक्ति विशेष के स्वभाव के अनुकूल हो । नैतिक शिक्षा की बातों में सत्य, क्षमा, दया, ईमानदारी, अहिंसा आदि बताने से कुछ खास हासिल नहीं होता यदि हम इन ऊँची–ऊँची बातों को जीवन में उतारने का बालकों को अवसर न प्रदान करें । बालकों की सहज बुदधि में प्रयोगात्मक सचाइयाँ अधिक सहजता से प्रवेश करती हैं । कोरे उपदेश उन्हें प्रभावित कर सकते तो आज समाज में इतनी बेईमानी और इतना भ्रष्टाचार न फैला होता शिक्षा के साथ नैतिक मूल्यों को संबद्ध करने का अर्थ यह नहीं है कि बालकों के निरंतर भारी होते हुए बस्ते में एक और किताब का बोझ डाल दिया जाए । इससे उनके जीवन में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं आ सकता क्योंकि बच्चे समझते हैं कि यह भी एक विषय है जिसमें अच्छे अंक लाने होंगे ।

1. मूल्य आधारित शिक्षा– किसी भी सभ्य समाज के लिए शिक्षा प्राण हैं तथा जीवन मूल्य उसकी आत्मा, मूल्यों का सम्बन्ध जीवन के दृष्टिकोण से है यदि मूल्यों को जीवन कहा जाय तो अतिश्योक्ति नही होगी। व्यक्ति के जीवन में मूल्य का विकास सामाजिकरण की प्रक्रिया के साथ–2 होता है। व्यक्ति समाज के बिना जीवित नही रह सकता। **रेमन्ट ने कहा है कि** ''समाज विहीन व्यक्ति एक कोरी कल्पना है।'' व्यक्ति स्वभाव से ही सामाजिक प्राणी है वह समाज से अलग रहकर ऐसे जीवित नहीं रह सकती, जैसे मछली जल के बिना। अतः व्यक्ति और समाज को अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि इन दोंनों का अस्तित्व एक दूसरे में निहीत है। मूल्यों की अवधारणा से तात्पर्य सिद्धान्त, आदर्श तथा नैतिकता से है। सामाजिक सम्पर्क द्वारा नैतिक विकास होता है। हम कुछ मूल्यों को प्राथमिकता देते है कुछ को त्यागते हैं मानव व्यवहार केवल विचारों द्वारा ही नहीं अपितु भावों के द्वारा भी होता है। स्थायी भावों के आधार पर ही मूल्यों का चयन होता है। मूल्य का अपना महत्व इसके अन्दर छिपा होता है। मूल्य अभिवृतियां एवं आदर्श हमारे व्यवहार को निर्देशित करते हैं। शिक्षा व्यक्ति के मानसिक व बौद्धिक विकास का महत्त्वपूर्ण साधन होता है। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति को कुसंस्कारों व मानसिक गुलामी से बचाया जा सकता है। इसके द्वारा विद्यार्थियों में आत्मविश्वास, नई चेतना व जोश पैदा कर सामाजिक विकृतियों, अंधविश्वासों,

गैर बराबरी की स्थितियों, क्रूरता व शोषण के विरुद्ध खड़ा किया जा सकता है। आज नई पीढ़ी जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में नित नई उपलब्धियां प्राप्त कर रही है। अनेक भौतिक उपलब्धियां प्राप्त कर अंतरिक्ष में मनुष्य भेजने की तैयारियां चल रही हैं। मनुष्य ने शिक्षा से असीमित संभावनाओं के द्वार खोल दिए हैं, लेकिन आज हम शिक्षा में ऐसी कमी अनुभव करते हैं, जिसका निदान आवश्यक है।

2- ewY; f"k{kk dk thou esa egRo o vko";drk& ewY; og fl)kar gS tks fdlh lH; laLd`fr okys lekt dh vk/kkj uhao Mkyrs gSA gekjs thou dks vkuUne;] lq[knk;h cukusa esa ewY;ksas dk egRo vrqyuh; gSA orZeku esa ;g ,d Toyar ,oa fpUrk dk fo"k; cu x;k gS fd gekjs ewY;ksa dk gkzl fnu&izfrfnu gekjs dk;ksZ esa lkQ fn[kkbZ ns jgk gS lekt ewY;ghu fn[kkbZ iM+ jgk gSA ^^jk"Vªh; ikB~;p;kZ dh :ijs[kk ¼2000½ esa Hkh fo|ky;h f'k{kk d¢ lHkh Lrj¨a ij ewY;¨a d¢ fodkl dh ckr dgh x;h gSA^^ Á'u mBrk gS fd ewY;¨a d¢ fodkl gsrq ikB~;Øe dk d©u fuekZ.k djs\ dSls g¨\ mldk fØ;kUo;u d©u djs\ fu%lUnsg ;g lkjs dk;Z v/;kidksa }kjk gh fd;s tk ldrs gSa ijUrq bld¢ fy;s v/;kidksa esa Lo;a d¢ fy;s okafNr ewY;¨a dh LFkkiuk g¨uh vko';d gS RkHkh os vius fo|kÆFk;¨a esa bu ewY;¨a d¢ fodkl d¢ Áfr rRij g¨ ld¢axsA tc rd muds thou eas ewY;ksa dk dksbZ LFkku ugha gksxk] ewY;ksa ds izfr vuqHkwfr ugha g¨xh rc rd os ewY;¨a dh leqfpr f'k{kk fo|kÆFk;¨a d¨ ugha ns ld¢axs vkSj mUgsa dqlaxfr] Hkz"Vkpkj] y{; foghurk vkfn cqjkb;¨a ls ugha cpk ld¢axsA vkt Hkkjr d¢ ;qok oxZ d¨ ,slh f'k{kk dh vko';drk gS t¨ muesa lkekftd] uSfrd] lkaLÑfrd ,oa vk/;kfRed ewY;¨a d¨ vius thou esa viukus d¨ Ásfjr djas rFkk os ekuork ij [kjs fl) g¨ ld¢a] fu%lUnsg fo|kÆFk;¨a esa bl Ádkj d¢ ewY;¨a d¨ LFkkfir djus d¢ fy;s f'k{kd¨a d¨ rS;kj djuk iM+sxk ;fn gekjs f'k{kd ,sls ewY;¨a ls ;qDr g¨axs rHkh os l'kDr g¨ ld¢axs v©j vius fo|kÆFk;¨a esa ewY;¨a dk ÁLQqVu dj ld¢axsA

आज भारतीय समाज में लोगों द्वारा जिस प्रकार के व्यवहार का प्रकटीकरण किया जा रहा है उससे ऐसा आभास हो रहा है कि नैतिक मूल्य विलुप्त होते जा रहे हैं समाज मूल्यहीन दिखाई पड़ रहा है। यही कारण है कि आज भौतिक प्रकृति के बावजूद भी देश को अराजकता की स्थिति से गुजरना पड़ रहा है क्षेत्रवाद, भाषावाद, भ्रष्टाचार, सम्प्रदायवाद, आंतकवाद जैसे विवादों को बढावा देकर क्षुद्र स्वार्थों की पूर्ति हेतु राष्ट्रीयता के भाव को कुण्ठित किया जा रहा है। मूल्य आधारित शिक्षा किसी भी समाज एवं राष्ट्र को किसी भी प्रकार की बुराई, हिंसा, भ्रष्टाचार तथा उत्पीड़न के खिलाफ आधार प्रदान करती है ।प्राचीन काल के महर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र, सांन्दीपन एवं चाणक्य जैसे मूल्यों से युक्त अध्यापकों ने ही श्री राम, श्री कृष्ण एवं सम्राट चन्द्रगुप्त जैसे विद्यार्थियों को उत्पन्न किया अध्यापकों को अपने व्यवहार से जन सामान्य के जीवन में मूल्यों के सम्प्रेषण हेतु एक प्रेरक का कार्य करता है इस कारण से अध्यापकों का जीवन मूल्यों से युक्त होना अति आवश्यक हैएक गुणवान गुरू अपने शिष्य में अच्छे जीवन मूल्यों को विकसित कर लेता है और अवांछित बुराइयों को उसमें से निकाल देता है। अतः यह आवश्यक है कि

शिक्षा के माध्याम से छात्र–छात्राओं को मूल्यों की शिक्षा दी जाय और यह आवश्यक रूप से सिखाया जाय कि शिक्षा प्राप्त करके वही व्यक्ति समाज में स्थान पा सकता है जो मूल्यों के प्रति अपनी आस्था तथा विश्वास कायम करें। सन् 1950 में जब भारतीय संविधान का गणतंत्रीय रूप आया तो उसमें मूल्यों की चर्चा की गई। भारतीय गणराज्य को मूल्यों पर आधारित धर्मनिरपेक्ष स्थिति के साथ में भी प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास आवश्यक बताया गया। 1948–49 में डॉ0 राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन किया गया उसमें निम्न प्रकार अनुशंसा की गई–(1) सभी शिक्षण संस्थाओं में दो मिनट शांत अवस्था में रहने के बाद प्रार्थना सभाओं का आयोजन किया जाय। (2) स्नातक स्तर पर छात्र–छात्राओं को भारतीय साहित्य, धर्म व दर्शन का ज्ञान कराया जाय। उक्त सुझाव मूल्य शिक्षा से ही सम्बन्धित हैं–1959 में डॉ0 श्री प्रकाश की अध्यक्षता में एक समिति का गठन हुआ जिसकी संस्तुति धार्मिक व नैतिक शिक्षा पर ही रही। इन्होंने छात्र–छात्राओं में उचित आचरण के विकास पर बल दिया। इसके साथ ही शिक्षक के कार्यक्रम में परिवार को स्थान दिया गया, प्रार्थना से कक्षा कार्य का प्रारम्भ हो, धार्मिक मूल्यों का ज्ञान कराया जाय, पाठ्यक्रम में समाज सेवा को सम्मिलित किया जाय, स्वतन्त्र चिन्तन, वाद–विवाद तथा आलोचनात्मक व्याख्या के गुणों का विकास किया जाय तथा आयोजन के कार्यक्रमों से छात्राओं को अवगत कराया जाय। 1964–66 में डॉ0 डी0 एस0 कोठरी की अध्यक्षता में एक और कमीशन का गठन हुआ। इस कमीशन की अनुशंसा यह रही कि छात्रों में शिक्षा के द्वारा सामाजिक वातावरण की भावना का विकास, नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति निष्ठा, विशिष्ट साहित्य के अध्ययन की भावना का विकास, विभिन्न धर्मों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन जैसे गम्भीर अध्ययन विषय पाठ्यक्रम में सम्मिलित किये जाएँ। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में भी इस बात पर गहरी चिन्ता प्रकट की गई कि ''जीवन के लिये आवश्यक मूल्यों का हास हो रहा है और मूल्यों पर से लोगों का विश्वास उठता जा रहा है शिक्षा क्रम में ऐसे परिवर्तन की जरूरत है जिससे सामाजिक व नैतिक मूल्यों के विकास में शिक्षा सशक्त साधन बन सके।'' मूल्यों का विकास केवल बच्चों तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए बल्कि व्यस्को को भी मूल्य विकसित करने हेतु प्रेरित करना चाहिए। परिवार एवं स्कूल के अतिरिक्त मूल्यों के विकास के सन्दर्भ में हमें व्यक्तिगत प्रयास भी करने चाहिए जो कि वर्तमान समय की आवश्यकता है। इस प्रकार मूल्यों के विकास में एक रणनीति बनायी जाय। जिससे हमारे समाज को दिशा, दशा एवं आदर्शता प्रदान हो सकें। एन.सी.ई.आर.टी ने 1988 में प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम प्रस्तुत किया जिसे प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा का राष्ट्रीय पाठ्यक्रम कहा जाता है। पाठ्यक्रम को 1997 में राष्ट्रीय शिक्षा ने स्वीकृती दी तथा उक्त पाठ्यक्रम को विद्यालय स्तर का अनिवार्य अंग बनाने पर बल दिया तथा इसमें मूल्यों के विकास जैसे ईमानदारी, सत्यता, सहनशीलता आदि पर तथा शिक्षकों को अन्धविश्वासों से दूर रहने पर बल दिया गया है। इसी की सहायता से व्यक्ति तथा समाज का संतुलित विकास किया जा सकता है। यह आशा की जाती है कि ये क्रियाऐं व्यक्तियों में मूल्यों के विकास में सहायक होगी अतः कहा जा सकता है कि विद्यार्थियों में मूल्यों का विकास करने के लिए प्रशिक्षण संस्थाओं में अच्छी शिक्षण अधिगम परिस्थितियों का विकास किया जाय।

3. वर्तमान शिक्षा में मूल्यों का आभाव– इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि वर्तमान शिक्षा से हमने असंख्य भौतिक उपलब्धियां प्राप्त की हैं, लेकिन वर्तमान संदर्भ में शिक्षा मानवीय मूल्यों, परंपरा व आदर्शों की उपेक्षा कर एकांगी व संवेदनहीन होती जा रही है। संवेदनहीनता की स्थितियां पूरे परिवेश में देखी जा सकती हैं। मूल्यों व आदर्शों के अभाव में दिशाहीन विद्यार्थी हिंसक, क्रूर व अमानवीय वृत्तियों की

ओर अग्रसर हो रहे हैं। अपने महापुरुषों के संदेशों, अपनी परंपरा व आदर्शों से अनजान नई पीढ़ी बेलगाम हो रही है। आधुनिकता की चकाचौंध व प्रदर्शन की प्रवृत्ति ने उन्हें घोर अवसरवादी व अनैतिक बना दिया है। हिंसा, बलात्कार, चोरी, डकैती व आतंक की ओर व्यक्ति तभी बढ़ता है, जब उसे सही मार्गदर्शन, उचित शिक्षा व स्वस्थ वातावरण नहीं मिलता। तात्कालिक लाभ व भोगवादी प्रवृत्ति ने मनुष्य को संवेदनशून्य व हिंसक बना दिया है। ऐसे में विद्यार्थियों को नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों से परिचित करवाना आवश्यक हो जाता है। शिक्षा यदि विद्यार्थियों में प्रेम, दया, विश्वास, करुणा व त्याग की भावनाएं पैदा नहीं करती, तो ऐसी शिक्षा भविष्य में निरर्थक व अनुपयोगी सिद्ध होती है। शिक्षा के माध्यम से केवल भौतिक संपन्नता प्राप्त करना ही पर्याप्त नहीं होता, शिक्षा द्वारा हम एक अच्छे इनसान और बेहतर नागरिक भी बनने चाहिएं। इसके लिए अपनी परंपरा, आदर्शों व जीवन मूल्यों से जुड़ना आवश्यक हो जाता है। मानसिक विकास के बिना भौतिक विकास सार्थक नहीं हो सकता है। वर्तमान शिक्षण संस्थाओं में लिंग व जाति–भेद की स्थितियां तथा गैर बराबरी की घटनाएं अकसर देखी जाती हैं। पूंजीवादी सभ्यता के प्रभाव के कारण समाज में गैर बराबरी की स्थितियां व अन्य सामाजिक विकृतियां बढ़ रही हैं। संपन्न व अमीर वर्ग के विद्यार्थी अच्छे शिक्षण संस्थानों से शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं और गरीब व वंचित वर्ग का विद्यार्थी उच्च शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ हो जाता है। इन भेदभाव की स्थितियों के कारण वंचित वर्ग के विद्यार्थियों में अलगाव, संत्रास व आक्रोश की भावनाएं पनपती हैं, जो स्वस्थ समाज के निर्माण में बाधक होती हैं। व्यवस्था को संवेदनशील होना चाहिए, ताकि शोषित व उत्पीडित जनता को समान अवसर मिलें और एक गरीब विद्यार्थी भी उच्च शिक्षा प्राप्त कर मुख्यधारा में शामिल हो सके। जातीय व आर्थिक आधार पर शिक्षा का वर्गीकरण उचित नहीं है। समन्वय शिक्षा का महत्त्वपूर्ण लक्ष्य होता है। शिक्षा का व्यापारीकरण भी उचित नहीं है। आजकल ऐसे निजी शिक्षण संस्थान खुल रहे हैं, जिनका लक्ष्य केवल पैसा कमाना है, उन्हें विद्यार्थियों के भविष्य की चिंता नहीं होती। ऐसी संस्थाओं में स्तरीय व गुणवत्तायुक्त शिक्षा न मिलने पर विद्यार्थियों को रोजगार के लिए भटकना पड़ता है। शिक्षण संस्थानों की बागडोर शिक्षाविदों के हाथों में होनी चाहिए, तभी विद्यार्थी रोजगारोन्मुख शिक्षा प्राप्त कर समाज के लिए उपयोगी व बेहतर इनसान बन सकते हैं। विद्यार्थियों में मानवीय भावनाएं व संवेदनशीलता पैदा करने के लिए उन्हें भारतीय आदर्शों, मानवीय मूल्यों व संस्कारों से जोड़ना आवश्यक है।

4. मुल्य आधारित शिक्षा हेतु सुझाव व निष्कर्ष– वर्तमान शिक्षा पद्धति और मूल्यों में कोई समन्वय नहीं है। यह सर्वविदित है कि आज विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान करने के लिए भाषण, नोटस तथा बने बनाये उत्तरों को दोहराने का कौशल ही विद्यार्थी की परीक्षा का मापदण्ड है विद्यार्थी न तो अपने अस्तित्व को पहचान पाता है, न हीं पुस्तकीय ज्ञान उसकी सहायता करता है। ये गिरते हुए मूल्य हमारी शिक्षा के लिए चुनौती है। इस लिए विद्यार्थियों को अपनी रूचि, योग्यता, क्षमता, स्वःअध्ययन के लिए पूर्ण स्वतन्त्रा दी जाये। जिससे विद्यार्थी का समाजिक, मानसिक, बौद्विक, चारित्रिक तथा नैतिक विकास हो सके। शिक्षा में सुधार करके ही विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास होता है। श्रेष्ठ मूल्यों व नैतिक आदर्शों से जुड़कर भूख, शोषण व भय से मनुष्य को मुक्त करवा सकते हैं। खेलों व अन्य सांस्कृतिक गतिविधियों से जोड़कर विद्यार्थियों को सही दिशा दी जा सकती है। परंपरागत मूल्यों को आवश्यक संशोधन के साथ स्वीकार कर लेना चाहिए। परंपरा के साथ नवीन ज्ञान–विज्ञान का समावेश शिक्षा को अधिक प्रभावपूर्ण बना सकता है। शिक्षा को अधिक से अधिक रोजगारपरक बनाया जाए, तभी विद्यार्थी अपने भविष्य को सुरक्षित बनाकर बेहतर इनसान बन सकते हैं। शिक्षक हमारी शिक्षा व्यवस्था की रीढ़ होते हैं। योग्य समर्पित,

ईमानदार, सहृदय व निष्ठावान शिक्षक वर्तमान शिक्षा के स्वरूप में बदलाव ला सकते हैं। इस संदर्भ में शिक्षक का उत्तरदायित्व महत्त्वपूर्ण है, उसे पूर्ण करने के लिए उसे निरंतर अध्ययन, मनन व कार्यान्वयन की आवश्यकता होती है। वर्तमान संदर्भ में शिक्षा केवल भौतिक उपलब्धियां प्राप्त करने का साधन ही नहीं, बल्कि विद्यार्थियों के बौद्धिक व मानसिक विकास का भी सशक्त माध्यम होनी चाहिए। वह विद्यार्थियों में नई चेतना, नई उमंगों को जगाते हुए उन्हें मानवीय मूल्यों व आदर्शों से भी जोड़े। शिक्षा में भौतिकवादी दृष्टिकोण विद्यार्थी को अराजक वृत्तियों की ओर ले जाता है। समाज में फैली विकृतियों को मानवीय मूल्यों, आदर्शों व संवेदनशीलता से जोड़ना होगा। टीवी व सोशल मीडिया के माध्यम से फैल रही अपसंस्कृति पर अंकुश लगाना भी आवश्यक है। शिक्षा का लक्ष्य बेहतर इनसान तैयार करना होना चाहिए। संवेदनशील व उदार व्यक्ति वर्तमान परिदृश्य को बदलने में सक्षम होता है। शिक्षा के माध्यम से समाज में सामंजस्य, समन्वय, सद्भाव, सेवा, समर्पण व त्याग की भावनाएं विकसित होनी चाहिए। इसके लिए व्यवस्था, शिक्षकों की सक्रिय भागीदारी व सद्भावनाएं महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

सन्दर्भ

1. शर्मा, एस.एस, शर्मा, अन्जना, (2011):''शिक्षा के दार्शनिक एव समाजशास्त्रीय आधार,'' एच, पी, भार्गव बुक हाऊस 4/230 कचहरी घाट आगरा,पृ0 159–162
2. सिंह. आर. पी., (1997): ''ए स्टडी आफ वैल्यूज आफ अरबन एंड रूरल एडोलसेंट स्टूडेंट'', इडियन एजूकेशनअब्स्ट्रेक्स,, अंक–2, जनवरी 1997
3. शुक्ला, सी• एस•, (2009):''शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार,'' अनुभव पब्लिशिग हाउस इलाहाबाद पृ0–19
4. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा,सारांश (2000), नई दिल्ली, एन•सी•ई•आर•टी• पृ0–2
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986):''मानव संसाधन विकास मंन्नालय, भारत सरकार (शिक्षा विभाग), नई दिल्ली पृ0–19
6. सक्सेना, सरोज,(2000): ''शिक्षा के दार्शनिक एव समाज शास्त्रीय आधार'', साहित्य प्रकाशन आगरा पृ0–257
7. मैनी, डी0. (2005) : ''मानव मूल्य – परक शब्दावली का विश्वकोष,,'' खण्ड (पंचम), प्रकाशक प्रभात कुमार शर्मा द्वारा सरूप एण्ड सन्स, नई दिल्ली।
8. पाण्डेय आर. ,(2000): ''मूल्य शिक्षा के परिपेक्ष्य'', आर. लाल बुक डिपो मेरठ, पृ0–153
9. पेरी एवं सक्सेना, एन.आर. स्वरूप,(2005):''शिक्षा के सिद्धान्त'', आर. लाल. बुक डिपो मेरठ, पृ0–643

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

मध्यप्रदेश में मेक इन इंडिया से विपणन चुनौतियों को कम करते हुये आत्मनिर्भर व्यापार की बढ़ती संभावनाएँ

शिवालिका सोहगौरा, डॉ. एम. यू. सिद्दीकी

प्राध्यापक वाणिज्य महाविद्यालय, बैढ़न जिला सिंगरौली (म.प्र.)

Article Info

Volume 5, Issue 2

Page Number : 97-100

Publication Issue :

March-April-2022

Article History

Received : 01 March 2022

Published : 17 March 2022

सारांश :–

भारत की वर्तमान पारिस्थितियों में covid 19 के कारण अर्थव्यवस्था को Vocal for local के अन्तर्गत एवं मेक इन इंडिया के अन्तर्गत भारत के उद्योगों में उत्पादन वृद्धि करके विदेशी व्यापार की वस्तुओं को कम करके देश में उत्पादित वस्तुओं के महत्व को बढ़ाने एवं विदेशी व्यापार की निर्भरता को कम करने तथा साथ ही देश–प्रदेश की अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाने का सर्वोत्तम प्रयास है। मेक इन इंडिया के माध्यम से केवल देश को उत्पादन को तीव्र गति देना नहीं बल्कि उत्पादित वस्तुओं को एक बड़े बाजार एवं क्रेताओं को उपलब्ध कराना है जैसा कि देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी द्वारा 25 सितम्बर 2014 से शुरू किया गया और देश की अर्थव्यस्था एवं व्यापार को विश्व बाजार में स्थापित करने एवं एक बड़े रोजगार का सृजन करना विशेष लक्ष्य रहा है।

परिचय :–

मेक इन इंडिया भारत को एक आत्मनिर्भर बनाने की बहुत ही बड़ी पहल है जो 25 सितम्बर 2014 में पिछले सात वर्ष पहले लागू की गई। और आज विस्तृत दौर पर शुरूआत 2020 में हुई। मेक इन इंडिया को भारत के अर्थव्यवस्था में जिस प्रकार बदलाव बना है उस बदलाव में एक तरफ मैन्युफैक्चरिंग ग्रोथ को बढाना है एट द सेम टाइम उसका सीधा लाभ भारत देश के विपणन चुनौतियों को कम करके युवाओं को रोजगार के रूप में मिले ताकि गरीब से गरीब परिवार के आर्थिक स्थिति में बदलाव आये वो गरीबी से मिडिल क्लास की ओर बढ़े और उसकी क्रय शक्ति बढ़े तो विनिर्माण की संख्या बढ़ेगी ''मैन्युफैक्चरिंग'', ग्रोथ बढ़ेगा रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे और फिर एक बाजार बढ़ेगा यह ऐसा चक्र है और इस चक्र के बढ़ने से यह एक शक्तिशाली कदम होगा। सात वर्षों से ज्यादा समय पहले शुरू हुये मके इन इंडिया को भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचना में बहुत अधिक बदलाव लाने की एक मजबूत पहल के तौर पर देखा जाना चाहिए। इस पहल के दो पक्ष है पहला सकल घरेलू उत्पाद यानि जी डी पी में विनिर्माण की हिस्सदेारी बढ़ाने से होने वाले लाभ को जोड़ा है। अभी यह हिस्सेदारी 17 फिशदी के आस–पास है जिससे की 25 फिशदी ले जाने का लक्ष्य है वही दूसरा पक्ष विनिर्माण के बढ़ने से होने वाले फायदे से जुड़ा है मसलन, रोजगार के ज्यादा से ज्यादा मौके (औसतन विनिर्माण में रोजगार के एक मौके बनते हैं तो सेवा क्षेत्र में 2–3 मौके बनते हैं) आमदनी में बढोत्तरी, उपभोग व उपभोक्ताओं की संख्या में बढ़त विदेशी निवेश जुटाने में मदद (जिसका अनुकूल भारतीय रुपये पर देखने को मिलेगा) वैश्विक आपूर्ति व्यवस्था में बड़ी हिस्सेदारी, निर्यात व आयात आय में बढोत्तोरी आदि। मेक

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

इन इंडिया एक ऐसा पहल है जो निवेश को बढ़वा देने के साथ–साथ नवाचार को प्रोत्साहन देना, सर्वश्रेष्ठ संरचना का निर्माण करना और देश को डिजाइन, विनिर्माण और नौप्रवर्तन का हब केन्द्र बनाना है। एक मजबूत विनिर्माण क्षेत्र का विकास सरकार के प्रमुख प्राथमिकता बनी हुयी है। मेक इन इंडिया अपनी तरह की टवबंस वित सवबंस पहल की जिसने विश्व के समक्ष देश के विनिर्माण क्षेत्र को प्रस्तुत किया शुरू में इस पहल के तहत 25 क्षेत्रों को शामिल किया गया है। इस पूरी योजना का शाखा सहयोग पूर्ण दृष्टिकोण जैसी सोच के आधार पर तैयार किया गया इसके लिये वाणिज्य व उद्योग मंत्रालय के विभाग उद्योग संर्वधन और अन्तरिक व्यापार विभाव ने केन्द्रीय मंत्रियों भारत सरकार के सचिवों, राज्य सरकारों प्रमुख उद्योगपतियों और क्षेत्र विशेष के प्रमुख जानकारों के साथ मिलकर शुरूआती अवधारणा तैयार की। फिर दिसम्बर 2014 में सरकार और उद्योगपतियों की साझा कार्यशाला के जरिये तीन साल की कार्ययोजना तैयार की गई यहाँ पर और बात सामने आयी की जिस तरह सरकारी व निजी क्षेत्र की साझेदारी (App) बढ़े पैमाने पर बदलाव को लाकर अर्थव्यवस्था विपणन की चुनौतियों को अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर कम करके पर्याप्त मात्रा में रोजगार का सृजन किया जाय एवं देश की अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर एवं मजबूत किया जाय।

शोध प्रविधिः–

प्रस्तुत शोध पत्र विश्लेषणात्मक एवं वर्णात्मक प्रवृत्ति का है शोध पत्र मुख्यतः प्राथमिक एवं द्वितीय आकड़ों पर आधारित है। प्राथमिक तथ्य मुख्यतः आकड़ों के संग्रहित करने जबकि द्वितीयक तथ्य प्रकाशन, विभिन्न पत्र पत्रिकाओं एवं वाणिज्मिक पत्रिकाओं में छपे लेख प्राथमिक शोध कार्य आदि को आधार मानकर बनाया गया है।

अवलोकन :–

मध्यप्रदेश में मेक इन इंडिया के तहत वस्तुओं का उत्पादन करके एक प्रदेश की बड़र संख्या में बेरोजगारी को कम करने का प्रयास विकया गया तथा बाजार को विस्तृत बनाने एवं विदेशी निवेश के उदार नियम से निवेश जुटाने की बात करके ज्यादा से ज्यादा उदार बनाने की जरूरत है। आज के इस आर्थिक परिवेश में ज्यादा से ज्यादा क्षेत्रों व गतिविधियों में स्वतः अनुमोदन व्यवस्था के अन्तर्गत शत–प्रतिशत विदेशी निवेश की अनुमति दी गई। इसके साथ ही जिन क्षेत्रों में निवेश 100 प्रतिशत से नीचे है उनकी नियमित समीक्षा की जाती है और नियमों में बदलाव किया जाता है। म.प्र. राज्य सहकारी विपणल संत्र के अपने गोदाम है जहाँ वैज्ञाकि तकलीक से भण्डारण की सुविधा बनायी गयी है वैज्ञानिक ढ़ंग से भण्डारण करते हुए अपने गाहको को संतुष्ट करने के लिए प्रतिबद्ध है। विपणन में परिवहन की एकत बहुत ही बड़ी भूमिका होती है जिससे म.प्र. में सड़कों का दीर्घकालीन सुविधायुक्त निर्माण करके व्यापार को बढ़नें में महती भूमिका निभायी गयी है। इस सबका नतीजा है कि महामारी के बीच भी कारोबारी वर्ष 2020–21 के दौरान 8194 अरब डॉलर की विदेशी निवेश भारत में आया है। और बाजार के जोखिम को कम करके बाजार की बदलती स्थितियों को बैंकों ने भी अनुमान लगाकर विदेशी विनिमय दरों में परिवर्तन के लाभ को उठाया है। राज्यों में औद्योगिक और कारोबारी माहौल सुधारने के लिए व्यापक सुधार कार्यक्रम की शुरूआत हुई है। इसके तहत कारोबारी सुगमता के मामले में राज्यों और कन्द्रशासित प्रदेशो की रैकिंग की जाती है जिसकी बदौलत राज्यों के बीच अपने क्षेत्र में सुधार लाने के लिए प्रतिस्पर्धा देखने को मिलती है। चार वर्षों से यह बैकिंग जारी की जा रही है। नीतिगत और जमीनी स्तर पर राज्यों और केन्द्र के स्तर पर पहल का नतीजा है कि भारत जहाँ 2014 में विश्व बैंक की करोबारी सुगमता (Ease of doing Business) रैकिंग में 142वें स्थान पर था, 2020 में 63वें स्थान पर आ गया है इससे यह पाया गया कि गित वर्षो में विपणन की नीतियों में पर्याप्त मात्रा में सुधार होने से विश्व बैंक की रैकिंग में सुधार हुआ जो वाणिज्यिक क्षेत्र को अधिक मजबूती प्रदान करके आने वाले वर्षों में व्यापारिक गतिविधियों का

विश्व में एक अलग स्थान प्रदान करायगी। अब Make in India अपने दूसरे चरण में प्रवेश कर चुकी है और अब 27 क्षेत्र (देखें तालिका–1) इसके दायरे में हैं जिसमें से 15 विनिर्माण और 12 सेवाक्षेत्र से जुड़े हुए हैं।

तालिका क्रमांक डांम पद प्दकपं में शामिल क्षेत्र

क्र.	विनिर्माण (Manutacturing)	सेवा (Service)
1.	ऑटोमोटिव व आटो कंपोनेंट्स।	मैडिकल वैल्यू ट्रैवल।
2.	एयोस्पेस व रक्षा।	सुचना प्रौगिकी व सूचना प्रौद्योगिकी सक्षम सेवाएँ
3.	जैव प्रौद्योगिकी।	पर्यटन व लॉजिस्टिक सेवाएँ
4.	फार्मास्यूटिकल्स व मेडिकल डिवाइसेस।	अडियो विजुअल।
5.	कपडा व परिधान।	परिवहन और लाजिस्टिक सेवाएँ
6.	कैपिटल गुड्स (ब्ंचपजंस हववके)	लेखा और वित्त सेवा (Accounl and finance service)
7.	इलेक्ट्रानिक्स सिस्टम डिजाइन एड मैन्युफेक्चरिंग	संचार सेवाएँ
8.	रसायन व पेट्रोरसायन।	कानूनी सेवाएँ
9.	खाद्य प्रसंस्करण।	शिक्षा सेवाएँ
10.	चमड़ा और फुटवेयर।	वित्तीय सेवाएँ
11.	जहाजरानी	पर्यावरण सेवाएँ
12.	रत्न व आभूषण।	निर्माण और संबंधित इंजीनियरिंग सेवाएँ
13.	रेल (Railway)	
14.	निर्माण (formation)	
15.	नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा	

जैसा कि तालिका 1 से स्पष्ट हो जाता है कि विपणन में पयाप्त सुधार मेक इन इंडिया के कारण हुआ क्योंकि इसमें निर्माण क्षेत्र से लेकर 12 सेवा क्षेत्रों का शामिल होना अपने आप में व्यापारिक गतिविधियों और विपणन में एक बहुत बड़ा सुधार है। इसे सरकारी खरीद को भी प्राथमिकता दी गई जिसमें से 50 लाख रुपये या उससे कम राशि की खरीद के लिए और नोडल मंत्रालय का यह मत है कि खरीद से सम्बधित क्षेत्र में पर्याप्त घरेलू और बरेलू प्रतिस्पर्धा है। ऐसे मामलों में केवल घरेलू आपूर्तिकर्त्ता पात्र होंगें।

निष्कर्ष :–

मध्यप्रदेश में विपणन की चुनौतियों को कम करने से मेक इन इंडिया का व्यापक प्रभाव देखने को मिला है जैसा कि मध्यप्रदेश में राज्य विपणन संघ के द्वारा मुख्य रूप से कृषि विपणन का केन्द्र के रूप में विकसित किया गया साथ ही मेक इन इंडिया में शामिल क्षेत्र के द्वारा आत्मनिर्भरता की बात इस घरेलू बाजार माँग पूरी करने के साथ ही खत्म नहीं होती बल्कि यहाँ से शुरू होकर विश्व बाजार में पैठ बनाने की लगातार कोशिशों के साथ जुड़ जाती है। आइये एक नजर डालते है कि सात वर्षों में कुछ खास क्षेत्रों की किस तरह प्रगति हुई है और आगे किस तरह संभावनाएँ बन रही है। जैसे ऑटोमोबाइल के विनिर्माण क्षेत्र में 35 फीसदी हिस्सेदारी के साथ–साथ दो पहिया और तीन पहिया वाहनों के निर्माण में भारत दुनिया में सबसे बड़ा उत्पादक देश बन गया यात्रीवाहन के मामले में चौथे स्थान पर है। इलेक्ट्रानिक वाहन के लिए एक खास व्यवस्था ई–अमृत की शुरूआत की गई है। यहाँ पर इलेक्ट्रानिक वाहन को लेकर भ्रम दूर करने की कोशिश की गयी। फार्मास्यूटिकप्स एवं मेडिकल उद्योग का आकार 43 अरब डॉलर का है दवा उद्योग की विकास दर 7–8 फीसदी, मेडिकल डिवाइस उद्योग की विकास दर 15–16 फीसदी है। खाद्य प्रसंस्करण 2014–15 के दौरान सकल मूल्य संवर्धन (GVA) 134 लाख करोड़ रुपये का जो 2019–20 में 2.24 लाख करोड़ रुपये पहुच गया। रेल्वे में कचरे से बिजली बनाने का संयंत्र भुवनेश्वर में स्थापित किया गया 24 घण्टे के भीतर बगैर किसी प्रदूषण के पूरे कचरे का प्रसंस्करण हुआ। निवेश संवर्धन के लिये विशेष दल बनाया गया। Nationel sigal wihelow system बनाया विश्व बाजार में भारत की विपणन हिस्सेदारी एवं म.प्र. की हिस्सा बढ़ता नजर आ रहा है। देश का जो उन्होंने (PM) 17 जनवरी 2022 को World Economic Fooam में संबोधन के दौरान बताया है। ''हम मेक इन इंडिया' मेक फॉर द वर्ल्ड की भावना से आगे बढ़ रहें।''

संर्न्भ ग्रन्थ सूची :–

1. योजना पत्रिका, फरवरी, 2022
2. कुरूक्षेत्र पत्रिका फरवरी 2022
3. एस. एन. ला, भारतीय अर्थव्यवस्था

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

रीवा जिले में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की चुनौतियाँ एवं समाधान हेतु प्रयास का समीक्षात्मक अध्ययन

पूजा शुक्ला, डॉ. सतीश कुमार गर्ग
प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय विवेकानन्द महाविद्यालय, मैहर, जिला सतना (म.प्र.)

Article Info

Volume 5, Issue 2

Page Number : 101-108

Publication Issue :

March-April-2022

Article History

Received : 01 March 2022

Published : 17 March 2022

शोध सारांश :– शोध पत्र रीवा जिले में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की चुनौतियां एवं समाधान हेतु प्रयास का समीक्षात्मक अध्ययन से सम्बन्धित है, जिसके अन्तर्गत मध्य प्रदेश शासन द्वारा निम्न वर्ग के व्यक्तियों के सहयोग हेतु संचालित सार्वजनिक वितरण प्रणाली की चुनौतियों में शासन द्वारा संचालित इस प्रणाली के अन्तर्गत दिये जाने वाली खाद्य सामग्री गुणवत्ता युक्त न होने, इस प्रणाली को समेकित करते हुए नयी योजना न लागू करना, हितग्राहियों के विकास हेतु नये अधोसंरचना का निर्माण करना, राज्य के सभी ग्राम पंचायतों एवं आश्रित गाँवों में खाद्यान्न सुरक्षा के लिए पर्याप्त मात्रा में सुरक्षित गोदाम एवं उचित रख–रखाव की व्यवस्था करवाना। खुले बाजार से कम कीमतों पर सार्वजनिक वितरण प्रणाली से वस्तुएँ प्राप्त न होना, उपभोक्ताओं द्वारा इस प्रणाली के सम्बंध में की गयी शिकायतों पर समय पर उचित कार्यवाही न करना, उपभोक्ताओं को जितनी खाद्य सामग्री मिलनी है उससे कम मिलना, शासन द्वारा शासकीय उचित मूल्य की दूकानों का सभी ग्रामीण क्षेत्रों में न खोला जाना, निःस्वार्थ लोगों के हाँथों में इस प्रणाली प्रबंधकों को न सौंपा जाना, शासन द्वारा संचालित आगनबाड़ी एवं मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम, पोषाहार की गुणवत्ता पर ध्यान न देना, हितग्राहियों के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में ही शासकीय उचित मूल्य की दुकानों का न होना, सभी वितरण केन्द्रें पर बायोमिट्रिक मशीन का प्रयोग न होना, सभी वितरण केन्द्रों में पूरी तरह ऑनलाईन से एंड्राईड टेबलेट का उपयोग न करना तथा नोटिस बोर्ड में खाद्य सामग्री के मूल्यों का विवरण न होना इत्यादि प्रमुख चुनौतियों का विश्लेषण इसके अन्तर्गत किया गया है और साथ ही इनके समाधान के प्रयास को भी व्यापक स्तर पर समझाया गया है।

मुख्यशब्द :– सार्वजनिक वितरण प्रणाली, मध्य प्रदेश, चुनौतियाँ, समाधान, प्रयास, गुणवत्ता, हितग्राही आदि।

प्रस्तावना :–

रीवा जिले में एक नयी सार्वजनिक वितरण प्रणाली को जून 1992 में मध्य प्रदेश सरकार द्वारा गठित की गयी। इसके तहत राज्य के अत्यधिक पिछड़े जिलों के गावों व शहरों में 09 ब्लाक या खंड, जनजाति या आदिवासी बहुल क्षेत्र, सूखा वाले क्षेत्र, पहाड़ी क्षेत्र और शहरों की गरीब बस्तियों को चुना गया। इन क्षेत्रों

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

के राज्य सरकार जिलों एवं ग्रामीण व शहरों के लिए 50 रुपये क्विंटल न्यूनतम कीमत पर चावल व गेहूँ की आपूर्ति करती है। मध्य प्रदेश राज्य सरकार इन क्षेत्रों में कुछ अन्य वस्तुओं जैसे तेल, साबुन, चाय, नमक, दाल, चीनी, चना इत्यादि का भी वितरण राज्य सरकार के अन्तर्गत आती है।

शोध विधि :–

शोध अध्ययन हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के आंकड़ों का प्रयोग किया है। प्राथमिक आंकड़ों के प्रयोग हेतु अनुसूची का प्रयोग और द्वितीय आंकड़ों के लिए पत्र–पत्रिकाओं, शोध ग्रन्थों एवं शोध पत्रों इत्यादि का प्रयोग किया है। रीवा जिले में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से हितग्राहियों को दी जाने वाली खाद्य सामग्री की दशा को जानने के लिए साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से जानकारी एकत्र कर उनका विश्लेषण किया गया है।

पूर्व अध्ययन समीक्षा :–

पूर्व अध्ययन समीक्षा पूर्ववर्ती अध्ययन से तात्पर्य अनुसंधान की समस्या से सबन्धित उन
सभी प्रकार की पुस्तकों, ज्ञान कोशों, पत्र–पत्रिकाओं, शोध पत्रों तथा अभिलेखों आदि से है, जिनके अध्ययन से अनुसंधानकर्ता को अपनी समस्या के चयन, अध्ययन की रूपरेखा तैयार करने तथा कार्य को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है। इनमें से मुख्य रूप से सिन्हा, डॉ. वीसी. एवं सिन्हा, डॉ. पुष्पा (2009) व्यावसायिक पर्यावरण, त्रिवेदी, डॉ. आर.एन., शुक्ला, डॉ. डीपी. (1993–94) रिसर्च मैथ्डोलॉजी, अग्रवाल, डॉ. आरसी. कोठारी, एन. एस. (1993) व्यवसाय और सरकार, शुक्ला डॉ. अखिलेश (2018–19) रीवा दर्शन, सस्करण, मिश्रा, एस. एण्ड पुरी, वीके. (2007) भारतीय अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित कार्य किये है।

लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (टी.पी.डी.एस.):–

मध्य प्रदेश राज्य में लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली योजना 1 जून 1997 को प्रारम्भ की गयी। लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले प्रत्येक परिवार को प्रतिमाह विशेष रूप से सब्सिडी मिलने वाले कीमत पर निर्धारित खाद्यान्न प्राप्त करने का अधिकार है। वर्तमान समय में लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली एक त्रिस्तरीय प्रणाली योजना है जिसके अन्तर्गत लाभ प्राप्त करने वाले लाभार्थियों को तीन श्रेणी में रखा जाता है–

अन्योदय अन्न योजना वाले परिवार (ए.ए.वाई.):–

इस योजना के अन्तर्गत राज्य सरकार 1 अप्रैल 2002 से प्रत्येक लाभार्थियों को 35 किलोग्राम खाद्यान्न प्रति परिवार, चावल 3 रूपया प्रति किलो तथा गेहूँ 2 रूपये प्रति किलोग्राम देने का प्रावधान की गयी। गरीबी रेखा से नीचे वाले परिवार

बी.पी.एल. :–

इस योजना को राज्य सरकार द्वारा 1 अप्रैल 2002 से शुरू किया गया था। इस योजना के द्वारा गरीबी रेखा से नीचे स्तर वाले परिवार निर्गत कीमत गेंहू के सम्बंध में 415 प्रति किलोग्राम और चावल के सम्बंध में 5.65 प्रति किलोग्राम था। गरीबी रेखा से थोड़े ऊपर वाले परिवार

ए.पी.एल. :–

इस योजना के तहत राज्य ने उन परिवारों को शमिल किया है जो गरीबी रेखा से ऊपर जीवन यापन कर रहे हैं। उन परिवारों के लिए मूल्य आर्थिक लागत के बराबर होगा तथा खाद्यान्नों की आपूर्ति तभी होगी जब खाद्यान्न पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो। अतः योजना आयोग तथा अन्य लोगों के अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि ए.पी.एल. को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के द्वारा प्राप्त अधिकांश 30 प्रतिशत बाजार में वितरित होती है। मध्य प्रदेश शासन के निर्देशानुसार जनवरी 2010 में निर्गत अन्तोदय अन्न योजना और गरीबी रेखा से नीचे वाले परिवारों को 10 किलो चावल व गेहूँ जो क्रमशः 15.37 और 10.80 रूपये पर प्राप्त होगा।

खाद्य सब्सिडी –

सार्वजनिक वितरण प्रणाली का यह दायित्त्व कि छूट सहित खाद्यान्नों के माध्यम से गरीबों को न्यूनतम पोषण मुक्त मदद की सुव्यवस्था करना चाहिए और अनेक राज्यों में खाद्यान्नों के विषय में मूल्यों में स्थायित्व लाना खाद्य सुरक्षा नीति के प्रमुख ध्येय हैं। पिछले कुछ वर्षों में चावल और गेहूँ की आर्थिक लागत में काफी वृद्धि हुयी है, लेकिन इनके प्रदा कीमतों में कोई परिवर्तन अभी तक हुआ है, एन.एफ.एस. ए. के क्रियान्वयन के फलस्वरूप ए.पी. एल. और बी.पी.एल. धारकों हेतु केन्द्रीय निर्गम कीमतों में अत्यधिक कमी आयी है। इनके फलस्वरूप खाद्यान्नों पर छूट में काफी वृद्धि हुई है। खाद्य सब्सिडी की स्थिति का विवरण सारणी क्रमांक 1 में दर्शाया गया है, जो इस प्रकार है–

सारणी क्रमांक 1

खाद्य सब्सिडी (करोड़ रुपये में)

क्र.	वर्ष	खाद्य सब्सिडी
1.	2005-06	23071
2.	2012-13	84554
3.	2013-14	89740
4.	2014-15	107823
5.	2015-16	120635

स्रोतः– भारतीय अर्थव्यवस्था सर्वेक्षण एवं विश्लेषण, वर्ष 2019

सारणी क्रमांक 1 को देखने से स्पष्ट होता है कि यह खाद्य सब्सिडी से सम्बन्धित है, जिसमें वर्ष 2005–06 में 23071 करोड़ रुपये की खाद्य सब्सिडी सार्वजनिक वितरण प्रणाली को प्रदान की गयी थी, इसी प्रकार वर्ष 2012–13 में 84554 करोड़ रुपये, वर्ष 2013–14 में 89740 करोड़ रुपये, वर्ष 2014–15 में 107823 करोड़ रुपये तथा वर्ष 2015–16 में 120635 करोड़ रुपये की खाद्य सब्सिडी सार्वजनिक वितरण प्रणाली को सरकार द्वारा प्रदान की गयी थी, जिसके कारण सभी राज्यों को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के संचालित करने में काफी सहयोग मिला, जिनमें से मध्य प्रदेश राज्य के रीवा जिला ने इस प्रणाली के सहयोग का पूर्णतः लाभ उठाया, इस सब्सिडी के कारण मध्य प्रदेश सरकार ने गरीबों तक खाद्यान्न पहुँचाने में काफी सफलता हासिल की है जिससे रीवा जिला के बी.पी.एल. धारकों एवं अन्य निम्न वर्ग के व्यक्तियों को काफी आत्मबल मिला, क्योंकि ऐसे परिवार के लोगों को न्यूनतम मूल्य पर खाद्य पदार्थ प्राप्त हो जाते हैं, जिससे निम्न वर्ग के परिवार के लोगों को जीवन यापन में अत्यधिक मदद मिल रही है और राज्य के आर्थिक विकास की गति को प्रोत्साहन भी इससे अत्यधिक मिल रहा है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली तथा वाधवा कमेटी –

सर्वोच्च न्यायालय ने सम्पूर्ण राष्ट्र में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के कार्यप्रणाली के सन्दर्भ में सर्वोच्च न्यायालय के रिटायर्ड न्यायाधीश डी.पी. बाधवा की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया, इस समिति ने अपनी रिपोर्ट अप्रैल 2010 में प्रस्तुत की, जिसमें समिति ने सार्वजनिक वितरण प्रणाली की खामियों को अधिक उजागर किया, जिससे प्रत्येक राज्य समिति द्वारा बतलायी गयी खामियों में सुधार कर इस प्रणाली को और अधिक सम्बल प्रदान कर सके। इस प्रणाली में सुधार के बाद प्रत्येक राज्य को खाद्यान्नों के वितरण में काफी सहयोग मिला है, जिससे आम जन मानस को खाद्य पदार्थों का केवल उचित मूल्य ही अदा करना पड़ रहा है और मध्यस्थों का समापन हुआ है, जबकि इस प्रणाली से आम जन मानस का सीधा सम्बन्ध स्थापित किया जा सका है। इसमें संशोधन के बाद हितग्राहियों को काफी लाभ हो रहा है और उन्हें खाद्य पदार्थों की प्राप्ति हेतु इधर–उधर भटकना नहीं पड़ रहा है। मध्य प्रदेश राज्य में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के सकुशल संचालन की व्यवस्था हेतु केन्द्र शासन द्वारा प्रदेश को खाद्य पदार्थों तथा राज्य योजना के अन्तर्गत डबल फोर्टिफाईड नमक व आयोडीन नमक के वितरण को प्राथमिकता प्रदान की गयी है। साथ ही संचालनालय के माध्यम से खाद्य पदार्थों का जिलानुसार उचित मूल्य दूकानों के द्वारा वितरण करना, राज्य में खाद्य पदार्थों, डबल फोर्टीफाईड नमक और आयोडीन नमक को प्रदेश के सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लिए प्रदान किये जाने वाले केन्द्रों पर निरन्तर और अग्रिम खाद्य पदार्थों की उपलब्धता को निश्चित करना और मध्य प्रदेश में द्वार प्रदाय योजना के अन्तर्गत

चिन्हित प्रदाय केन्द्रों से खाद्य पदार्थों, डबल फोर्टीफाईड नमक और आयोडीन नमक उचित मूल्य दूकान तक प्रदेश शासन की अधिकृत। चिन्हित एजेंसियों के रूप में पहुँचाने का कार्य भी सुनिश्चित किया जाता है। इस प्रकार मध्य प्रदेश शासन द्वारा जिलावार खाद्यान्नों के आवंटन हेतु प्रमुख एजेंसियों का सहयोग लिया जा रहा है, इस कार्य हेतु राज्य में सत्र 2019–20 में प्रमुख खाद्य पदार्थों गेहूँ व चावल के आवंटन को सारणी क्रमांक है 2 के माध्यम से स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है जो इस प्रकार है– सार्वजनिक वितरण प्रणाली में शक्कर को वितरण की व्यवस्था – भारत सरकार द्वारा जून 2013 से राज्यों में संचालित शक्कर लेव्ही नीति को खत्म करने के पश्चात् नई नीति के रूप में प्रदेश के सभी अन्त्योदय तथा प्राथमिकता प्राप्त राशन कार्ड धारकों को स्वतंत्र निविदा प्रणाली से शक्कर को खरीद कर प्रति किलो ग्राम अतिशीघ्र राज्य शासन के निर्देशानुसार चीनी वितरण की कार्यवाही को अमल में लाया गया। रीवा जिले में खाद्यान्न, चीनी एवं नमक के वितरण की दरों को सारणी क्रमांक 2 के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है–

सारणी क्रमांक 2

मध्य प्रदेश में खाद्यान्न, चीनी एवं नमक के वितरण की दरे

क्र	वस्तु	दर (रु. प्रति किलोग्राम)	प्रति किलोग्राम वस्तु खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013 अनुसार खाद्यान्न प्रदाय दर राज्य शासन द्वारा रियायती दर
1	गेहू	1	1
2	चावल	1	1
3	नमक (आयोडीन युक्त)	1	1
4	नमक ;क्थ्द्ध	1	1
5	दाल	–	–
6	शक्कर	चीनी राज्य पर निर्भर	

स्रोत – मध्य प्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण, वर्ष 2019–20

उपर्युक्त सारणी क्रमांक 2 को देखने से स्पष्ट होता है कि इसमें मध्य प्रदेश में खाद्यान्न, चीनी एवं नमक के वितरण को प्रदर्शित किया गया है, जिसमें गेहूँ का मूल्य 1 रुपया प्रति किलोग्राम,

चावल भी 1 रुपया प्रति किलोग्राम, नमक (आयोडीनयुक्त) भी 1 रुपया प्रति किलोग्राम, नमक (क्वै) भी 1 रुपया प्रति किलोग्राम और शक्कर का मूल्य निर्धारित न करके राज्यों पर स्वतंत्र छोड़ दिया गया था।

मध्य प्रदेश शासन द्वारा सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत राज्य के कृषिकों के खाद्य सामग्री क्रय कर उनके खाते में धनराशि का सीधे भुगतान करने का प्रावधान किया गया, जिसके लिए वर्ष 2014–15 से वर्ष 2020–21 के मध्य प्रत्येक वर्षों में क्रय किये सामग्रियों का विवरण सारणी क्रमांक 3 के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है–

सार्वजनिक वितरण प्रणाली की चुनौतियाँः–

मध्य प्रदेश शासन द्वारा सार्वजनिक वितरण प्रणाली का सफल संचालन किया जा रहा है। इस प्रणाली के अन्तर्गत लक्षित सार्वजनिक प्रणाली को जोड़ा गया है और साथ ही द्वार प्रदाय योजना को भी इसमें जोड़ा गया है। इस प्रणाली के माध्यम से निम्न वर्ग के लोगों को गेहूँ, चावल, आयोडीन युक्त नमक, नमक (क्वैद्ध दाल, मिट्टी का तेल, चीनी, चना और अन्य सामग्रियों को हितग्राहियों को प्रदान किया जा रहा है। ताकि निम्न वर्ग के लोगों को भी शासन द्वारा सम्बल प्रदान कर उच्च वर्ग के समतुल्य बनाया जा सके लेकिन शासन द्वारा उपरोक्त सामग्रियों के वितरण के बावजूद भी इस प्रणाली का सही संचालन नहीं हो पा रहा है, जिसका प्रमुख कारण इस प्रणाली में आने वाली अनेक विसंगतियाँ हैं, जो मध्य प्रदेश शासन के सामने चुनौती बनकर खड़ी है। इस प्रणाली के सफल संचालन में आने वाली विभिन्न कठिनाइयों के बाद भी शासन निरन्तर प्रयत्नशील है कि हितग्राहियों को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से उपरोक्त सामग्री का सही समय पर उपलब्धता सुनिश्चित हो सकें। ताकि पिछले 1 वर्षों से जूझ रहे वैश्विक महामारी कोविड–19 के दौरान भी हितग्राहियों को किसी प्रकार की असुविधा का सामना न करना पड़े नहीं तो देश के विकास की गति बाधित होगी। इस प्रकार रीवा रीवा जिले के सामने सार्वजनिक वितरण प्रणाली के सफल संचालन में आने वाली कुछ प्रमुख चुनौतियाँ इस प्रकार हैं–

1. मध्य प्रदेश शासन द्वारा संचालित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत दिये जाने वाले खाद्य सामग्री गुणवत्ता युक्त होने के कारण यहाँ के लोगों में यह प्रणाली असन्तोष का कारण बनी हुई है।
2. मध्य प्रदेश शासन को सार्वजनिक वितरण प्रणाली को समेकित करते हुए नये–नये योजनाएँ लागू न करने से लोगों के बीच चुनौती का कारण बना हुआ है।
3. हितग्राहियों के विकास हेतु नये अधोसंरचना का निर्माण करना भी चुनौती का कारण है।
4. राज्य के सभी ग्राम पंचायतों एवं आश्रित ग्रामों के खाद्यान्न सुरक्षा हेतु पर्याप्त मात्रा में सुरक्षित गोदामों एवं उचित रख–रखाव की व्यवस्था करवाना भी राज्य के सामने चुनौती का कारण है।

5. खुले बाजार से कम कीमतों पर सार्वजनिक वितरण प्रणाली से वस्तुएँ प्राप्त न होना भी राज्य के सामने चुनौती का प्रमुख कारण है।
6. राज्य के उपभोक्ताओं द्वारा इस प्रणाली के सम्बंध में की गयी शिकायतों पर समय पर उचित कार्यवाही न करना भी चुनौती का कारण बना हुआ है।
7. इस योजना के अन्तर्गत उपभोक्ताओं को जितनी खाद्य सामग्री मिलनी है उसस` कम मिलना राज्य के सामने चुनौती का प्रमुख कारण।
8. राज्य शासन द्वारा शासकीय उचित मूल्य की दूकानों का सभी ग्रामीण क्षेत्रों में न खोला जाना भी चुनौती का विषय बना हुआ है।
9. इस योजना की सबसे बड़ी चुनौती राज्य के सामने इस बात की है कि निःस्वार्थ लोगों के हाथों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली प्रबन्ध को सौंपा नहीं गया है।
10. शासन द्वारा संचालित आगनवाड़ी एवं मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम पोषण आहार की गुणवत्ता पर ध्यान न देना भी

मध्य प्रदेश राज्य में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के समाधान हेतु प्रयास :–

मध्य प्रदेश राज्य में संचालित सार्वजनिक वितरण प्रणाली की उपरोक्त चुनौतियों के होते हुए भी शासन द्वारा इसे दूर करने के सतत प्रयास किये जा रहे हैं और इन प्रयासों को दृष्टिगत रखते हुए इनके समाधान के सम्बन्ध में निम्न सुझाव दिये जा सकते हैं –

1- सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत दिये जाने वाले खाद्य सामग्री जैसे – गेहूँ, चावल, खाद्य तेल, चीनी, चना एवं दाल इत्यादि भी प्रदान किये जाने की व्यवस्था शासन द्वारा की जा रही है।

2- शासन द्वारा संचालित आगनबाड़ी केन्द्रों एवं मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम पोषाहार की गुणवत्ता का विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

3- सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से पौष्टिक खाद्यान्न सामग्री उपलब्ध करवाया जाना भी सुनिश्चित किया जा रहा है।

4- सरकार द्वारा गरीब वर्ग के लोगों हेतु नवीन–नवीन योजनाएँ लागू करायी जा रही है।

5- सरकार द्वारा राज्य की गरीबी दूर करने के सतत प्रयास किये जा रहे हैं।

शोध निष्कर्ष :–

मध्य प्रदेश शासन द्वारा सार्वजनिक वितरण प्रणाली की उपरोक्त चुनौतियों के बावजूद भी उनमें समाधान के कुछ आवश्यक प्रयास शोधार्थी द्वारा बतलाए गये है, जिसे शासन द्वारा अपनाये जाने की अत्यन्त आवश्यकता है, जिससे मध्य प्रदेश शासन की सार्वजनिक वितरण प्रणाली व्यवस्था में सुधार आयेगा और हितग्राहियों का इस योजना के प्रति विश्वास बढेगा। राज्य द्वारा संचालित सार्वजनिक वितरण प्रणाली में अनेक विसंगतियों के होने के बाद भी राज्य के गरीब वर्ग के लोगों हेतु वरदान साबित हुआ है, क्योंकि आज भी राज्य की 70 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास कर रही है, जिनके आय का प्रमुख स्रोत कृषि कार्य ही है, जो आज भी मानसून पर आधारित है, इसलिए आज भारतीय कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता है। इस वितरण प्रणाली से ग्रामीण अंचलों में निवासरत गरीब तबके के लोगों को प्रत्येक माह के लिए खाद्य सामग्री उचित मूल्य पर सहजता से उपलब्ध हो जा रही है, जिससे इस वर्ग के लोगों को काफी सम्बल मिल रहा है और वे समाज में अपनी स्वयं की पहचान बनाने में सक्षम हो रहे हैं।

शोध सन्दर्भ :

1. सिन्हा, डॉ. वी.सी. एवं सिन्हा, डॉ. पुष्पा, व्यावसायिक पर्यावरण, संस्करण–2009, एस.बी.पी.डी. पब्लिशिंग हाऊस/20–बी, निकट तुलसी सिनेमा आगरा, मथुरा बाईपास रोड, आगरा–282002.
2. त्रिवेदी, डॉ. आर. एन., शुक्ला, डॉ. डी.पी., रिसर्च मैथ्डोलॉजी, संस्करण–1993–94, 83, त्रिपालीया बाजार, जयपुर–2, राजस्थान
3. अग्रवाल, डॉ. आर. सी. कोठारी, एन. एस., व्यवसाय और सरकार, संस्करण–1993, मलिक एण्ड कम्पनी (प्रकाशन), चौड़ा रास्ता, जयपुर–302003
4. शुक्ला, डॉ. अखिलेश, रीवा दर्शन, सस्कंरण 2018–19, गायत्री पब्लिकेशन्स, पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रिब्यूटर्स, रीवा (म.प्र.)
5. मिश्रा, एस. एण्ड पुरी, वी. के., भारतीय अर्थव्यवस्था, 19 वां संस्करण–2007, हिमालया पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., कलकत्ता.

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

सम्प्रत्यय अधिगम के तार्किक नियमों की जटिलता पर धनात्मक–ऋणात्मक संवर्ग अवधान के प्रभाव का प्रायोगिक अध्ययन

डॉ. अशोक कुमार
मनोवैज्ञानिक, डी.ई.आई.सी. गुना म.प्र.

Article Info

Volume 5, Issue 2

Page Number : 109-119

Publication Issue :

March-April-2022

Article History

Received : 01 March 2022

Published : 17 March 2022

सारांष :–

वर्तमान समाज जिसमें हम रहते हैं उसकी सीमायें बहुत व्यापक तथा उसका स्वरूप काफी जटिल है। सामाजिक परिदृष्य में मनुष्य अपने व्यवहार एवं चिन्तन की प्रक्रिया सम्प्रत्यय अधिगम के आधार पर ही करता है। सम्प्रत्यय सभी संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं की मौलिक इकाई है, सम्प्रत्यय अधिगम के अभाव में मानव द्वारा की जाने वाली चिन्तन प्रक्रिया, समस्या समाधान, निर्णय प्रक्रिया, स्मृति संचय आदि संभव नहीं है। मनोविज्ञान में सम्प्रत्यय अधिगम से संबंधित अध्ययनों का इतिहास अति प्राचीन है किन्तु इसके विषय में प्रायोगिक अध्ययनों और सही तथ्यों का अभाव है, सम्प्रत्यय अधिगम की प्रक्रिया मुख्य रूप से चार तार्किक नियमों संयोजक, वियोजक, प्रतिबंधक और अन्योन्य प्रतिबंधक की सहायता से होता है। इन नियमों में कुछ नियमों को सरल तथा कुछ नियमों को कठिन माना जाता है। और आज भी इनकी जटिलता पर विभिन्न मनोवैज्ञानिकों में मतभेद हैं। संबंधित अध्ययन में सम्प्रत्यय अधिगम के तार्किक नियमों की जटिलता को समझने का प्रयास किया गया है। परिणामों से स्पष्ट होता है कि जब तार्किक नियमों को धनात्मक–ऋणात्मक संवर्ग अवधान के आधार पर अधिगम किया जाता है तो संयोजक नियम और प्रतिबंधक नियम की जटिलता पूर्ण रूप से समान है। जो कि वियोजक और अन्योन्य

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

प्रतिबंधक की तुलना में सरल है अर्थात इसकी जटिलता सबसे कम है, अन्य दो नियमों की जटिलता का अवलोकन करें तो वियोजक नियम जटिल है और अन्योन्य प्रतिबंधक सबसे जटिल है। इन नियमों की जटिलता का आंकलन सम्प्रत्यय अधिगम में लगने वाले अभ्यास – संख्या के आधार पर किया है।

मुख्य षब्द :–

संज्ञानात्मक प्रक्रिया, तार्किक नियम, अभ्यास–संख्या, उद्दीपक, धनात्मक–ऋणात्मक संवर्ग अवधान।

प्रस्तावना :–

सम्प्रत्यय समस्त संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं का एक प्रमुख पक्ष है सम्प्रत्यय एक ऐसे प्रतीक को कहा जाता है जिससे वस्तुओं की सामान्य विषेषताओं के समुच्चय का पता चलता है, मनोविज्ञान में सम्प्रत्यय अधिगम को एक प्रक्रिया के रूप में लिया गया है, जो विभिन्न वस्तुओं परिस्थितियों तथा घटनाओं के बीच समानताओं का प्रतिनिधित्व करती है।

सम्प्रत्यय को भिन्न–भिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अपने–अपने ढंग से परिभाषित किया है, कुछ प्रमुख परिभाषाएं हैं जो सम्प्रत्यय को वैज्ञानिक अर्थ में परिभाषित करती हैं। हुल्स, इगेथ एवं डीज (1980) के अनुसार कुछ नियमों द्वारा गुणों का आपस में मिलना ही सम्प्रत्यय कहलाता है इसी क्रम में सम्प्रत्यय को परिभाषित करते हुये बैरोन (2005) कहते है कि ''सम्प्रत्यय उन वस्तुओं, घटनाओं, अनुभूतियों या विचारों जो एक से अधिक अर्थ में एक दूसरे से समान होते हैं के लिये एक तरह की मानसिक श्रेणी होती है।'' अतः स्पष्ट है कि सम्प्रत्यय कोई एक नाम एक अवधारणा या एक मानसिक श्रेणी है जो हमारे परिवेष या हमारे संसार के सबंध में चिन्तन करने का आधार बनती है।

सम्प्रत्यय अधिगम मानव जीवन की एक महत्वपूर्ण विषेषता है, इसके द्वारा ही मानव अपने वातावरण को एक व्यापक एवं संगठित रूप देता है। सम्प्रत्यय अधिगम प्रक्रिया में वस्तुओं और घटनाओं को कुछ स्पष्ट उद्दीपक विषेषताओं के आधार पर विभिन्न वर्गों में विभक्त किया जाता है ऐसे बहुत से सम्प्रत्यय हैं जिन्हे हम अपने दैनिक जीवन में सामान्य नामों से जानते हैं

जैसे घर, स्कूल, रंग, पषु, पक्षी, मनुष्य आदि। हन्ट (1962) सम्प्रत्यय अधिगम को नामों के उपयोग का अधिगम मानते हैं।

प्रयोगात्मक रूप से जब सम्प्रत्यय अधिगम को समझने का प्रयास किया जाता है तो उसके लिये प्रयोज्य के सामने उद्दीपक सामग्री प्रस्तुत की जाती है, यह उद्दीपक सामग्री विभिन्न गुणों और विषेषताओं के आधार पर स्पष्ट रूप से निर्धारित होती है। उद्दीपक सामग्री की उन विषेषताओं को जिनके आधार पर सम्प्रत्यय अधिगम करना है। प्रासांगिक विषेषताएं या प्रासांगिक विमायें अथवा धनात्मक गुण कहते हैं और सम्प्रत्यय अधिगम करते समय जिन विषेषताओं की उपेक्षा की जाती है उनको अप्रसांगिक विषेषताएं, अप्रासांगिक विमायें अथवा ऋणात्मक गुण कहा जाता है।

जब प्रयोज्य सम्प्रत्यय अधिगम करता है तो उद्दीपक सामग्री को दो वर्गों में बांटता है एक वर्ग प्रासांगिक विषेषताओं या धनात्मक गुणों वाला होता है तथा दूसरा वर्ग अप्रासांगिक विषेषताओं या ऋणात्मक गुण वाला होता है। प्रस्तुत अध्ययन में सवंर्ग अवधान की बात की गई है जो उपरोक्त वर्गों से ही संबंधित है अर्थात प्रासांगिक विषेषताओं या धनात्मक गुण वाले वर्ग को धनात्मक–संवर्ग और अप्रासांगिक विषेषताओं या ऋणात्मक गुणों वाले वर्ग को ऋणात्मक–सवंर्ग कहा है। जब प्रयोज्य उद्दीपक सामग्री से संप्रत्यय अधिगम करता है तो प्रयोगकर्ता द्वारा स्पष्ट रूप से निर्देष दिये जाते हैं कि आपको किस विषेष संवर्ग पर अवधान केन्द्रित करते हुये सम्प्रत्यय अधिगम करना है इस प्रकार संवर्ग अवधान के तीन प्रकार हो सकते हैं।

1. **धनात्मक–सवंर्ग अवधानः–** धनात्मक–संवर्ग अवधान से तात्पर्य संप्रत्यय अधिगम करते समय जब प्रयोज्य केवल प्रासांगिक विषेषताओं या धनात्मक संवर्ग में आने वाले उद्दीपकों पर अवधान केन्द्रित करता है।

2. **ऋणात्मक–सवंर्ग अवधानः–** ऋणात्मक–सवंर्ग अवधान में प्रयोज्य अप्रासांगिक विषेषताओं या ऋणात्मक–सवंर्ग पर अवधान केन्द्रित करके सम्प्रत्यय अधिगम करता है।

3. **धनात्मक –ऋणात्मक सवंर्ग अवधानः–** जब प्रयोज्य उद्दीपक सामग्री की प्रासांगिक व अप्रासांगिक दोंनो विषेषताओं को समझते हुये सामाग्री का वर्गीकरण धनात्मक–सवंर्ग और ऋणात्मक–सवंर्ग पर एक साथ अवधान केन्द्रित करते हुये सम्प्रत्यय अधिगम करता है तो उसे धनात्मक –ऋणात्मक सवंर्ग अवधान कहते हैं।

अध्ययन में यह समझने का प्रयास किया गया है कि केवल धनात्मक–ऋणात्मक सवंर्ग अवधान के आधार पर विभिन्न तार्किक नियमों का अधिगम करता है तो उनकी जटिलता किस क्रम में स्पष्ट होती है। संप्रत्यय अधिगम के मुख्य चार तार्किक नियम हैं जिनका संक्षिप्त वर्णन निम्नानुसार है–

1. **संयोजक तार्किक नियमः–** यह नियम बताता है कि किसी उद्दीपक समूह में पाये जाने वाली विभिन्न विषेषताओं में से दो या दो से अधिक विषेषताओं को जोड़कर संप्रत्यय अधिगम किया जा सकता है।

2. **वियोजक तार्किक नियमः–** यह नियम बताता है कि उद्दीपकों की कई विषेषताओं या गुणों के बावजूद भी कोई एक विषेषता ऐसी होती है जिसके आधार पर संप्रत्यय अधिगम किया जा सकता है।

3. **प्रतिबंधक तार्किक नियमः–** यह संप्रत्यय अधिगम का ऐसा नियम है जो अगर–तब की षर्त या प्रतिबंधता पर आधारित होता है। अतः इस नियम के अनुसार संप्रत्यय अधिगम तब होता है जब उसमें आने वाली षर्त पूरी हो।

4. **अन्योन्य प्रतिबंधक तार्किक नियमः–** यह नियम दोहरी षर्त पर आधारित होता है अगर और सिर्फ अगर इसके आधार पर संप्रत्यय अधिगम होता है।

सबंधित क्षेत्र मे हुये षोध परिणामों के आधार पर स्पष्ट है कि सभी तार्किक नियम अपनी जटिलता क्रम के क्रमषः संयोजक, वियोजक, प्रतिबंधक व अन्योन्य प्रतिबंध में हैं किन्तु जब इन तार्किक नियमों को प्रासांगिक और अप्रसांगिक विषेषताओ पर अवधान केन्द्रित करते हुये अर्थात केवल धनात्मक–ऋणात्मक संवर्ग अवधान के आधार पर संप्रत्यय अधिगम किया जाता है तो अलग ही परिणाम प्राप्त होते हैं।

सबंधित साहित्य :–

संप्रत्यय अधिगम का अध्ययन मनोविज्ञान से पहले दर्षन षास्त्र मे प्रांरभ हुआ किन्तु जैसे ही मनोविज्ञान दर्षन षास्त्र से अलग विषय के रूप में आया तो संप्रत्यय अधिगम का प्रायोगिक अध्ययन की षुरूआत हुई। हल (1920) ने सर्वप्रथम युग्म–सहचर्य विधि का उपयोग कर इस क्षेत्र में अध्ययनों की नींव डाली इनके अध्ययन में सामग्री के रूप में चीनी भाषा से लिये गये

अक्षरों को उनकी विषेषताओं सहित निरर्थक पदों के साथ सहचर्य कर युग्म रूप में प्रयोज्य के समक्ष प्रस्तुत किया। गोल्डस्टाइन (1930) ने अपने अध्ययनों में विभिन्न प्रकार की वस्तुओं को उद्दीपक सामग्री के रूप में प्रस्तुत किया तथा प्रयोज्यों को निर्देष दिये कि आपको समानता के आधार पर वस्तुओं का वर्गीकरण करना है। परिणाम में ज्ञात हुआ कि सामान्य बुद्धि के प्रयोज्यों ने अमूर्त संबंधो के आधार पर तथा निम्न बुद्धि के प्रयोज्यों ने मूर्त संबंधो के आधार पर उद्दीपकों का वर्गीकरण किया। निष्कर्ष के रूप में यह स्पष्ट हुआ कि बौद्धिक स्तर संप्रत्यय अधिगम को निर्धारित करने में सहायक होता है। स्मोक (1933) ने धनात्मक तथा ऋणात्मक उदाहरणों के आधार पर अपने प्रयोग किये किन्तु इनके प्रायोगिक प्रर्दषन द्वारा मनोवैज्ञानिक पूर्ण सहमत नहीं थे क्योंकि इससे यह स्पष्ट नहीं हो पा रहा था कि प्रयोज्य प्रत्येक उदाहरण द्वारा क्या प्राप्त करेगा और उनको यह सुझाव प्राप्त हुये कि ऐसा प्रायोगिक अभिकल्प तैयार किया जाये जिनमें प्रयोज्यों को पहले से यह पता हो कि कौन सा धनात्मक उदाहरण है और कौन सा ऋणात्मक उदाहरण है। हाइडब्रीडर (1948) ने स्वाभाविक उद्दीपक सामग्री का उपयोग कर संप्रत्यय अधिगम प्रक्रिया का अध्ययन किया, प्रयोग की विषिष्टता यह थी कि प्रयोज्यों को सही या गलत पूर्वानुमानों पर प्रतिपूर्ति दी गई। हॉवलैण्ड एवं वाइस (1953) के अध्ययन के परिणामों से ज्ञात हुआ कि यदि प्रयोज्यों को धनात्मक एवं ऋणात्मक उदाहरणों द्वारा एक समान ढंग की सूचनाएं सीखने को दी जायें तो प्रयोज्य धनात्मक उदाहरणों वाली सूचनाओं को 100 प्रतिषत् सीख लेता है तथा ऋणात्मक उदाहरणों वाली सूचनाओं को मात्र 17 प्रतिषत् ही सीख पाता है। ब्रुनर, गुडनाउ एवं अस्टीन (1956) इन मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गये अध्ययनों का संप्रत्यय अधिगम में महत्वपूर्ण योगदान है। इन्होंने अपने प्रयोग में कृत्रिम सामग्री का उपयोग किया, प्रयोग सामग्री विभिन्न विमाओं, 03 रूप, 03 रंग, 03 सीमा रेखाओं तथा 03 संख्या के आधार पर कुल 81 कार्डों का प्रयोग किया इनके परिणामों में सर्वप्रथम संयोजक व वियोजक नियम में अंतर किया और बताया कि वियोजक नियम का अधिगम करना कठिन है। फ्राईवर्ग्म एवं टुलविंग (1961) ने सैद्धांतिक रूप से यह अनुमान लगाया कि धनात्मक उदाहरणों के द्वारा प्रयोज्य षायद इसलिये अधिक सीख लेते हैं क्योंकि सामान्य जीवन में ऋणात्मक उदाहरण कम होते हैं। रेसल (1962) ने संप्रत्यय अधिगम के कई विकल्पों का वर्णन किया जिनमें बताया कि सम्प्रत्यय निमार्ण के समय प्रयोज्य सभी संभावित परिकल्पनाओं की

जाँच एक साथ करता है, प्रत्येक प्रयास में वह गलत परिकल्पनाओं का परित्याग करते हुये समस्या के अन्तिम समाधान पर पहुँचता है।

हेगुड एवं ब्रुनर (1965) इन्होंने अपने अध्ययन के आधार पर तार्किक नियमों को वर्गीकृत करने का प्रयास किया और बताया कि सम्प्रत्यय अधिगम के चार मौलिक नियम होते हैं। संयोजक (Conjunction), वियोजक (Disjunction), प्रतिबंधक (Conditional) और अन्योन्य प्रतिबंधक (Biconditional)।

बॉर्न एवं जेनिंग्स (1963) के अनुसार संप्रत्यय अधिगम प्रक्रिया में उदाहरणों की संख्या जितनी अधिक होगी अधिगम उतना ही कठिन होगा क्योंकि अधिक उदाहरणों को स्मृति में संग्रहित करना आसान नहीं होगा और इनको सीखने में अभ्यास–संख्या और समय दोंनो अधिक लगेंगे।

किर्लोस्कर एवं परमेष्वर (1967) ने 16 से 20 वर्ष के 120 स्नातक कक्षाओं के छात्रों द्वारा सम्प्रत्यय निर्माण में अप्रासांगिक उद्दीपकों के प्रभाव का अध्ययन किया। प्रायोगिक सामग्री के रूप में 24 कार्डों पर ज्यामितीय आकृतियां बनाई, परिणाम से ज्ञात हुआ कि जैसे–जैसे अप्रासांगिक कारकों की मात्रा में वृद्धि होती गई सम्प्रत्यय अधिगम कठिन होता गया। हंट एवं हावलेण्ड (1960) ने भी अपने अध्ययनों में इसी प्रकार के परिणाम प्राप्त किये हैं।

कोनेट एवं ट्रावासो (1964) का मत है कि प्रयोज्य में सम्प्रत्ययों के धनात्मक लक्ष्णों पर ध्यान केंद्रित करने की प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है। ये प्रासांगिक विमा होती है। जबकि निषेधात्मक कम ध्यान केंद्रित करते हैं। उपरोक्त षोध प्रक्रिया और परिणामो के आधार पर ही प्रस्तुत अध्ययन कार्य किया गया है।

प्रक्रिया विन्यास :–

अध्ययन में हाई स्कूल कक्षाओं (9 वीं एवं 10 वीं) में अध्ययनरत छात्रों जिनकी आयु 15 से 16 वर्ष है को शामिल किया गया। यादृच्छिक रूप से 120 छात्रों का चयन किया गया। इन प्रयोज्यों को सम्प्रत्यय अधिगम के चार तार्किक नियमों के आधार पर सम्प्रत्यय अधिगम के प्रक्रिया का अवलोकन किया। प्रयोज्यों के चयन एवं तार्किक नियमों के चयन दोंनो में यादृच्छिक विधि का पालन किया गया। अतः 120 प्रयोज्यों में से 30–30 प्रयोज्यों के चार समूहो को क्रमषः संयोजक, वियोजक, प्रतिबंधक और अन्योन्य प्रतिवंधक नियम के अनुसार सम्प्रत्यय अधिगम कराया गया।

निर्देषो के माध्यम से प्रयोज्यो को यह स्पष्ट कर दिया गया कि तार्किक नियमो का अधिगम धनात्मक –ऋणात्मक संवर्ग अवधान के आधार पर करना है, और अधिगम प्रक्रिया में किये गये निष्पादन को अंकित किया गया।

प्रदत्त संग्रह की सामग्री :–

उद्दीपक सामग्री के रूप में 16 कार्डों का उपयोग किया गया है। जो चार विमाओं– संख्या (Nomber), आकार (Size), रंग (Colour) और आकृति (Shape) के आधार पर एक दूसरे से अलग हैं। इन विमाओं के दो मूल्य हैं, जो इस प्रकार हैं। संख्या– एक व दो, आकार– छोटा व बड़ा, रंग– लाल व हरा और आकृति– वृत व वर्ग।

सारणी क्र. 01:– उद्दीपक कार्डों की सूची

कार्ड सं.	कार्ड का नाम
1.	एक छोटा लाल वृत्त
2.	दो छोटे लाल वृत्त
3.	एक बड़ा लाल वृत्त
4.	दो बड़े लाल वृत्त
5.	एक छोटा लाल वर्ग
6.	दो छोटे लाल वर्ग
7.	एक बड़ा लाल वर्ग
8.	दो बड़े लाल वर्ग
9.	एक छोटा हरा वृत्त
10.	दो छोटे हरे वृत्त
11.	एक छोटा हरा वृत्त
12.	दो बड़े हरे वृत्त
13.	एक छोटा हरा वर्ग
14.	दो छोटे हरे वर्ग
15.	एक बड़ा हरा वर्ग
16.	दो बड़े हरे वर्ग

उपरोक्त उद्दीपक सामग्री के आधार पर प्रयोज्यों को सम्प्रत्यय अधिगम कराने से पूर्व दो प्रकार के निर्देष दिये गये। जिनका पालन करते हुये प्रयोज्यों ने सम्प्रत्यय अधिगम किया।

सामान्य निर्देष :– ''आपका चयन एक सामान्य प्रयोग के लिए किया गया है, जिसमें आपको कुछ कार्डों को दो भागों में वर्गीकृत करना है। ये 16 कार्ड हैं इन कार्डों पर लाल और हरे रंग के वृत और वर्ग बने हुये हैं जो आकार में छोटे व बड़े हैं और इनकी संख्या भी एक या दो है। इन कार्डों को आपको केवल लाल रंग और वृत इन विषेषताओं के आधार पर वर्गीकृत करना है। सभी कार्ड आपके सामने एक साथ प्रस्तुत करूंगा आपको एक–एक कार्ड का चयन करते हुये दो समूह बनाने हैं। आपके द्वारा चयन किये गये कार्ड के पश्चात् मैं आपको सूचित करता जाऊँगा कि आपके द्वारा चयन किया गया कार्ड सही है अथवा गलत।''

विषिष्ठ निर्देष :– ''इन कार्डों के आधार पर मैं आपको एक नियम सिखाना चाहता हूँ। जब उस नियम के आधार पर इन कार्डों को दो समूह में वर्गीकृत करोगे तो दोनो समूहो की विषेषताए अलग अलग होगीं। आपको अपना ध्यान वर्गीकृत किये गये दोंनो समूहों (धनात्मक–ऋणात्मक संवर्ग अवधान) पर केंद्रित करते हुये कार्डों को वर्गीकृत करना है।''

प्रदत्त संग्रहण :– प्रयोग में सभी 16 उद्दीपक कार्डों को प्रयोज्यों के समक्ष प्रस्तुत किया गया और प्रयोज्य की प्रत्येक प्रयास के पश्चात् प्रतिपुष्टि दी गई कि प्रयोज्य ने सही कार्ड का चयन किया है या गलत का। और प्रत्येक प्रयास को नोट करते गये। जब 16 कार्डों पर प्रक्रिया पूर्ण हो गई और सम्प्रत्यय अधिगम नहीं हुआ तो पुनः 16 कार्डों को यादृच्छिक रूप से प्रयोज्यों के सामने प्रस्तुत किया गया। यह प्रक्रिया प्रयोज्य द्वारा सम्प्रत्यय अधिगम करने तक कई बार दोहराई गई। प्रयोज्य की प्रतिक्रिया को अभ्यास–संख्या के रूप में प्राप्त किया। जिसके आधार पर तार्किक नियमों की जटिलता का अध्ययन किया गया। संपूर्ण प्रयोग के पश्चात् प्राप्त प्रदत्तों को निम्नलिखित सारणी में प्रस्तुत किया गया है–

सारणी क्र. 02:– धनात्मक –ऋणात्मक (±) संवर्ग अवधान के द्वारा विभिन्न तार्किक नियमों के अधिगम में लगने वाली अभ्यास संख्या

प्रयोज्य संख्या	संयोजक	वियोजक	प्रतिबंधक	अन्योन्य प्रतिबंधक
01	32	96	96	96
02	48	192	80	32
03	48	80	112	256
04	32	176	80	48
05	48	64	32	48
06	64	80	64	96
07	96	96	80	32
08	48	64	112	32
09	48	48	48	112
10	64	112	64	80
11	80	64	160	112
12	80	64	48	80
13	80	64	80	48
14	80	48	64	112
15	48	128	64	64
16	80	64	96	96
17	48	48	128	112
18	112	64	96	144
19	96	80	80	80
20	144	96	144	96
21	112	96	112	80
22	112	64	64	144
23	144	64	144	128
24	160	160	80	80
25	144	96	32	96
26	64	112	80	80
27	80	128	48	160
28	80	128	48	48
29	96	64	80	160
30	128	80	80	96
	2496	2720	2496	2848

सम्प्रत्यय अधिगम के चारों तार्किक नियमों की अधिगम प्रक्रिया का अवलोकन प्रयोज्य के चार समूहो में किया अतः कुल 120 प्रयोज्यों पर प्रयोग किया गया।

प्रदत्त विष्लेषण :– विभिन्न तार्किक नियमों के आधार पर सम्प्रत्यय अधिगम करने पर प्रयोज्यों द्वारा लगी अभ्यास–संख्या के योग और औसत के विष्लेषण से स्पष्ट होता है कि किस

तार्किक नियम के अधिगम में अभ्यास संख्या अधिक लगी तथा किस में कम। जो निम्नलिखित सारणी में स्पष्ट प्रदर्षित हैः–

सारणी क्र. 03ः– विभिन्न तार्किक नियमों के अनुसार पर सम्प्रत्यय अधिगम में लगी अभ्यास संख्या का योग और औसत

क्र.	तार्किक नियम	योग	औसत
1	संयोजक	2496	83.20
2	वियोजक	2720	90.66
3	प्रतिबंधक	2496	83.20
4	अन्योन्य प्रतिबंधक	2848	94.93

ग्राफ क्र. 01ः– तार्किक नियमों के अधिगम में लगे अभ्यास संख्या के औसत की तुलना

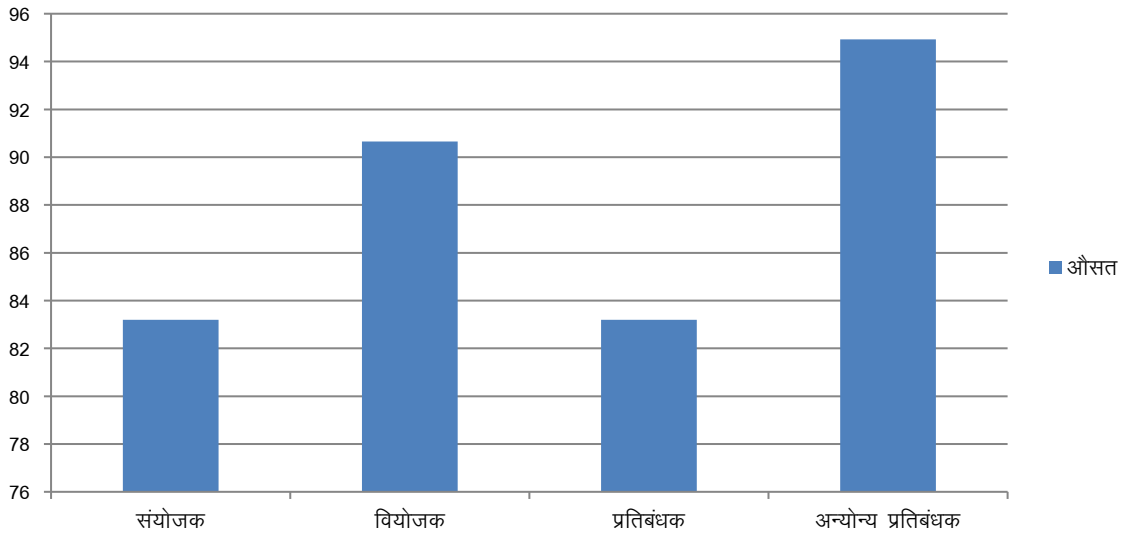

परिणाम :– प्रस्तुत अध्ययन मे प्राप्त हुये प्रदत्त के विष्लेषण के उपरांत परिणामों से स्पष्ट है कि संयोजक तार्किक नियम एवं प्रतिबंधक तार्किक नियम की जटिलता पूर्ण रूप से समान है, जो कि अन्य दो तार्किक नियमों की तुलना में सरल हैं। जटिलता के इसी क्रम में स्पष्ट होता है कि इन दोंनो नियमों से वियोजक तार्किक नियम जटिल है और अन्योन्य प्रतिबंधक सबसे जटिल तार्किक नियम है। अतः तार्किक नियमों की जटिलता का क्रम इस प्रकार ज्ञात होता है– संयोजक एवं प्रतिबंधक पूर्ण रूप से समान जटिलता वाले हैं। इनसे जटिल वियोजक तार्किक नियम एवं अन्योन्य प्रतिबंधक सबसे जटिल तार्किक नियम है।

निष्कर्ष :– सम्प्रत्यय अधिगम से जुड़े पूर्व अध्ययनों के परिणाम बताते हैं कि सम्प्रत्यय अधिगम के तार्किक नियमों की जटिलता का स्वरूप क्रमषः संयोजक, वियोजक, प्रतिबंधक एवं अन्योन्य प्रतिबंधक है। किन्तु प्रस्तुत अध्ययन के परिणामों से स्पष्ट होता है कि संयोजक एवं प्रतिबंधक नियमों की जटिलता एक समान है इसके पश्चात् वियोजक तथा अन्योन्य प्रतिबंधक सबसे जटिल तार्किक नियम है। अध्ययन के परिणामों की उपयोगिता के सबंध में ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है कि यदि स्कूलो में अध्ययनरत छात्रों को तार्किक नियमों का अधिगम कराया जाये तो संयोजक एवं प्रतिबंधक को वियोजक और अन्योन्य प्रतिबंधक की तुलना में सरलता से अधिगम कराया जा सकता है।

संदर्भ सूची :–

1. अजीमुर्रहमान एवं जावेद अषरफ (1994), मनोविज्ञान का संक्षिप्त इतिहास, दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास।
2. श्रीवास्तव, बीना, आनंद वर्षा व आनंद वानी (2003), संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास।
3. त्रिपाठी, जयगोपाल (2009), मनोविज्ञान एवं षिक्षा में शोध पद्धितियां, आगराः एच.पी. भार्गव बुक हाऊस।
4. सिंह, अरूण कुमार (2013), मनोविज्ञान, समाजषास्त्र तथा षिक्षा में शोध विधियाँ, दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास।
5. सिंह, अरूण कुमार (2015), उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान, दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास।

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

समावेशात्मकशिक्षासमस्यायै संवैधानिकं प्रावधानम्

जयपालः
शोधच्छात्रः, श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः, नवदेहली

Article Info

Volume 5, Issue 2

Page Number : 120-122

Publication Issue :

March-April-2022

Article History

Received : 01 March 2022

Published : 17 March 2022

शोधसारांशः

समावेशात्मिका शिक्षाः कक्षायां विद्यालये च छात्राणां विविधतायाः स्वीकृतेः एका मनोवृत्तिरस्ति। यस्यां विविधाक्षमाः बालकाः सामान्यशिक्षाप्रणाल्यामेकस्यां कक्षायां सम्मिल्ल्याध्ययनं कुर्वन्ति। अस्यां शिक्षायां प्रतिभासम्पन्नैः सह सामान्याः बाधिताश्च बालकाः एकस्यां कक्षायां पूर्णकालिकीं वा अंशकालिकीं शिक्षामाप्नुवन्ति। अस्यां शिक्षायां याः समस्याः वर्तन्ते, तासां समाधानं संवैधानिकप्रावधानेन भवितुं शक्यते।

सामाजिकस्य न्यायस्य समानतायाश्च सर्वाधिकं महत्त्वपूर्णं साधनं शिक्षेति सर्वैः स्वीक्रियते। शिक्ष् विद्योपादाने इत्यस्माद्धातोः 'गुरोश्च हलः' इति पाणिनिसूत्रेण अ प्रत्ययः कृते सति अजाद्यतष्टाप् इत्यनेन टाप् प्रत्ययः कृते सति प्रातिपदिकत्वात् शिक्षेति शब्दः निष्पद्यते। यस्यार्थो भवति शिक्ष्यते विद्योपादीयते अनयेति शिक्षाया यया विद्यायाः उपादानं ग्रहणं च जायते सा शिक्षेति नाम्नाऽभिधीयते। विद्या इत्यस्य शब्दस्य कृते भगवता पाणिनिना पञ्चधातूणां पाठः कृतः। तद्यथा विद् ज्ञाने, विद् सत्तायाम्, विद्लृ लाभे, विद् विचारणे, विद् चेतनाख्यानमोक्षेषु च। उक्तानां धातूणामाधारेण कथयितुं शक्यते यत् यया ज्ञानं, सत्तावबोधः, लाभः, कर्त्तव्याकर्त्तव्ययोः विवेकः आत्मज्ञानं च जायते सा शिक्षेति कथयितुं शक्यते। वस्तुतस्तु यया मानवः इहलोके ससुखेन जीवनं यापयति एवञ्च अन्ते सत्यपुरं प्रति याति सा यथार्था शिक्षा भवति। प्राच्यमनीषायां विद्यायै ऋषिभिः मन्त्रद्रष्टाभिश्च यन्मूललक्ष्यमुद्घोषितं तत्तु 'सा विद्या या विमुक्तये' वा अविद्यया मृत्युर्तीत्वा विद्ययामृतमश्नुतेप्यादयश्च वर्तन्ते। पराऽपरेति नाम्नास्यां मनीषायामेषां द्विधा विभक्ताऽस्ति। यया विद्यया वेद-वेदाङ्ग-शस्त्र-लोकाऽभिधीयते। तत्रैव बोधादयश्च जायन्ते सा अपरेति नाम्नाऽभिधीयते। ब्रह्मविष्यकमात्मज्ञानं यया प्राप्यते सा परेति नाम्नाऽभिधीयते।

प्रस्तावना :–

आंग्लमनीषायामस्याः कृते Education इति शब्दविशेषः प्रयुज्यते। तस्य शब्दस्य उत्पत्तिः लैटिनभाषायाः शब्दत्रयेण तत्र Education, Educare एवञ्च Educere जायते। E तथा च Duco इत्युभाभ्यां शब्दाभ्यां माध्यमेन Education इति शब्दस्य निष्पत्तिर्भवति। E इत्यस्य अर्थो भवति Out of अर्थात् बहिरानयनमेवञ्च Duco इत्यस्य अर्थो भवति To lead forth or to extract out आन्तरिकी शक्तिरिति। अर्थात् मानवेषु विद्यमानानामन्तर्निहितशक्तीनां बाह्यप्रकाशनं यया जायते सा शिक्षेति नाम्नाऽभिधीयते।

संकुचितार्थे एषा शिक्षालयीये वातावरणे वा परिवेशे दीयमाना औपचारिकी शिक्षा भवति तत्रैव व्यापकार्थे जन्मना आरभ्य मृत्युपर्यन्तं या अस्मान् शिक्षयति सा अनौपचारिकी शिक्षा भवति। वस्तुतस्तु प्राच्यमनीषायामस्याः बहूनि निर्वचनानि शिक्षाविज्ञैः प्रदत्तानि सन्ति। यथा आचार्येण सायणेन ऋग्वेदभाष्यभूमिकायां निगदितं यत्- वर्णस्वराद्युच्चारणप्रकारत्रयोपदिष्यते सा शिक्षोच्यते।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

विषयेऽस्मिन् जगद्गुरुशंकराचार्येण निगदितं यत् - शिक्षाऽऽत्मानुभूतिरस्ति। विवेकानन्दस्य मते मानवन्तर्निहितपूर्णतायाः अभिव्यक्तिरेव शिक्षोच्यते। तथा च विषयेऽस्मिन् डॉ- सर्वपल्लीराधाकृष्णन् महोदयस्य विचारोऽस्ति यत् - मानवसमाजयोः निर्माणमेवञ्च उभयोः समुचितः विकासः यया जायते सा शिक्षेति नाम्नाऽभिधीयते।

शिक्षायै पाश्चात्यमनीषायां यानि निर्वचनानि प्राप्यन्ते तेषु मुख्यानि निम्नलिखितानि सन्ति। यथा - अरस्तुमते स्वस्थ्ये शरीरे स्वस्थ्यस्य मनः निर्माणमेव शिक्षोच्यते। प्लेटो मते शरीरात्मनोः पूर्णतां प्रति प्रेरणाप्रदानमेव शिक्षा भवति, तथैव सुकरातमते मानवस्य मनसि अमूर्तत्वेन विद्यमानानां युक्तायुक्तसार्वभौमिकविचाराणं बाह्यप्रकाशनं यया जायते सा शिक्षोच्यते।

अर्वाचीनेऽस्मिन् काले सर्वेभ्यः भारतीयेभ्यः मूलाधिकारत्वेन शिक्षाधिकारः 2009 तमे वर्षे संविधानेन प्राप्तोऽस्ति। स्वतन्त्रतायाः सप्ततिवर्षानन्तरमपि 2011 इत्यस्य जनगणनानुसारेण अष्टाविंशतिप्रतिशताः (28%) जनाः अस्माकं देशे निरक्षराः वर्तन्ते। तेषु निरक्षरेषु 3-20 लक्षपरिमिताः जनाः विभिन्नेभ्यः बाधितप्रारूपेभ्यः बाधिताः सन्ति। अस्मद्देशीयाः सर्वे जनाः शिक्षायाः समानावसरैः लाभान्विताः भवेयुः एतदर्थं केन्द्रीय-रज्यकीय-असर्वकारीयसंस्थाभिश्च देशस्य सर्वेषु भागेषु शिक्षायाः प्रचार-प्रसारेण सह तस्याः सम्यग् व्यवस्थापनमपि क्रियते। तत्रैव येन केनापि कारणेन दिव्याङ्गाः, असमर्थाः, बाधिताः, अक्षमाश्च जना अपि भारतीयाः नागरिकाः भवन्ति। तेऽपि शिक्षाधिकारैः लाभान्वितो भूत्वा शिक्षायाः समानावसराः प्राप्नुयुः। इत्यस्य कृते प्राच्यैः पाश्चात्यैश्च सामान्यविशेष्टयोरुभयोः पक्षः शिक्षायाः स्वीकृत्य अल्पबाधितेभ्यः बालकेभ्यः शिक्षायाः एकं वैकल्पिकं स्वरूपं संरचितम्। तद्रूपमेव अर्वाचीनेऽस्मिन् काले शिक्षा समाजे समावेशात्मकशिक्षेति नाम्नाऽभिधीयते। समावेशात्मकशिक्षायां सामान्यैः सह शारीरिक-मानसिक-सामाजिक-सांवेगिक-शैक्षिकरूपैश्च बाधितेभ्यः बालकेभ्यः शिक्षाऽऽयोज्यते। अर्थादस्यां शिक्षायां प्रतिभासम्पन्नाः सामान्याः बाधिताश्च सर्वे बालकाः परस्परं सम्मिल्य एकस्यां कक्षायां वा विद्यालये सम्यक्समायोजनेन शिक्षामाप्नुवन्ति। समायोजनमिदं शैक्षिकं सामाजिकं सांवेगिकं मानसिकं शारीरिकं वा भवितुमर्हन्ति। वस्तुतस्तु प्रचलितायां शिक्षायां मुख्यधारायां सामान्यैस्सह तादृशाः बाधिता अपि शिक्षामाप्नुवन्ति। अस्यां तेभ्यः बाधितेभ्यः सामान्ये स्वतन्त्रे च वातावरणे विशिष्टोपकरणैः विभिन्नाधिगमव्यूहैः शिक्षायाः व्यवस्थापनं क्रियते। एषा सामान्यैः सह बाधितानामपि एकस्मिन्नेव वातावरणं शिक्षां प्रति संकेतयति। विषयेऽस्मिन् स्टीफनब्लैकहर्ट इत्युभाभ्यामाचार्याभ्यां निगदितं यत् शिक्षायाः मुख्यधारायाः अर्थोऽस्ति यत् बाधितानां बालकानां सामान्यकक्षायां शिक्षायाः व्यवस्थापनम्। अस्य सामानावसरस्य आधारः दार्शनिकं चिन्तनमस्ति। येन वैयक्तिकयोजनाभिः सामाजिकं मानकीकरणेन सह अधिगमः संवर्धते।

एषा सामावेशात्मिकाशिक्षा बाधितानां बालकानां च कृते विद्यालये विभिन्नानां शैक्षिक-सामाजिक-सांवेगिक-व्यावसायिकानां शिक्षाकार्यक्रमाणां माध्यमेन सर्वाङ्गीणविकासं करोति। तथा च सामान्याः विशिष्टावयबालकाः परस्परं निकषामनुभूय सहयोगभावनां संवर्धयन्ति एवञ्च समानावसरमाप्नुवन्ति। वस्तुतस्तु सर्वे बालकाः प्रायशः स्वाभाविकरूपेण अधिगमार्थमभिप्रेरिताः भवन्ति। अनुभवेन, अनुकरणेन, चर्चया, सप्रश्नेन, श्रवणेन, चिन्तनेन, मननेन, क्रीडया, क्रियाकलापैश्च परस्परं बालकाः परिवेशस्य विषये सूचनामाप्नुवन्ति। एतदर्थं सर्वेभ्यः सामान्येभ्यस्सह बाधितेभ्यः बालकेभ्यः अधिगमार्थमवसरप्रदानमावश्यकं भवति।

अस्याः समावेशात्मकशिक्षायाः सम्यगर्थावबोधनाय अस्याः याः चतस्रः प्रक्रियायाः तत्र मानकीकरणम्, संस्थारहितशिक्षा, शिक्षायाः मुख्यधारा, समावेशश्च ज्ञानं महत्त्वपूर्णं भवति। एषा न विशिष्टा, न च एकीकृता, अपितु उभयो समन्वितं भवति।

26 जनवरी 1950 तमे वर्षे अस्माकं देशे संविधानस्य प्रावधानमारब्धम्। यस्मिन् संविधाने समानता-स्वतन्त्रता-सहभागिता-सामाजिकन्यायार्थकाः अनेके अनुच्छेदाः अधिनियमाश्च विनिर्मित अभवत्। एषु अनुच्छेदेषु अधिनियमेषु केचन् अनुच्छेदाः अधिनियमः तादृशानां बालकानां कृते वर्तन्ते ये केनाऽपि कारणेन वंचिताः बाधिताः वा दिव्याङ्गाः सन्ति। तद्यथा -

अनुच्छेदे 14 तमे - संविधानस्य 14 तमे निगदितास्सन्ति यत् नियमोपनियमे भारतीयाः सामान्याः बाधिताश्च सर्वे समानाः भवन्ति एवञ्च सर्वेभ्यः समानं संरक्षणमस्मिन् वर्तन्ते।

अनुच्छेदः 15-16 तमे इत्यस्यानुसारेण धर्म-मूल-वंश-लिङ्ग-जाति-जन्मस्थानाधारेण च वा उक्तेषु एकाधारेण संविधानं भेदभावं निषेधयति। 16 तमे अनुच्छेदः सार्वजनिकं वृत्तौ सामानावसरस्य प्रदानेन सह धर्म-वर्ण-जाति-लिङ्ग-वंश-जन्मस्थानाधारेण च केनापि सह भेदभावमवरोधयति।

41 तमे अनुच्छेदे प्रावधानमस्ति यत् राज्यः स्वार्थिकक्षमताधारेण तेभ्यः शिक्षाप्राप्त्यर्थमर्थसहयोगस्य प्रबन्धनं करिष्यति।

46 तमे अनुच्छेदे दुर्बलानां विशिष्टानामनुसूचितजाति-जनजातीनां हिताय समृद्धये च सामाजिकन्यायेभ्यः शोषणेभ्यः संरक्षणस्य प्रबन्धनं राज्येन करिष्यते। शारीरिकरूपेण बाधितेभ्यः जनेभ्यः सामानावसराय सामाजिकसहभागितायै नागरिकाधिकारस्य संरक्षणाय च 1995 तमे वर्षे भारतसर्वकारस्य विधि (कानून) मन्त्रलयेन एकः अधिनियमः प्रस्तावितः। यस्य क्रियान्वयनं जनवरीमासस्य एक दिनाङ्के 1996 तमे वर्षे अभवत्। अस्य

अधिनियमस्य भागद्वयमस्ति। तत्र प्रथमे भागे वा धारासंख्या एका इत्यस्यां समावेशात्मकशिक्षायै कानिचन संवैधानिकानि प्रावधानानि निरूपितानि सन्ति। तद्यथा 'अ' मध्ये प्रावधानम् -

उपयुक्ताधिकारिणः केन्द्रीयाः स्थानीयाश्च निम्नलिखितायाः कार्ययोजनाश्च निर्माणं करिष्यन्ति। तद्यथा-

1- अष्टादशवर्षं यावत् शारीरिकरूपेण बाधितेभ्यः बालकेभ्यः बालिकाभ्यश्च कृते सम्यग्वातावरणे निःशुल्कशिक्षायाः एवञ्च शिक्षासंस्थाने प्रवेशं सुनिश्चितं करिष्यन्ति।
2- सामान्यविद्यालयेषु सामान्यबाधितयोः इत्युभयोः समन्वयनाय यत्नं अधिकारिणश्च करिष्यन्ति।
3- सर्वकारीय-असर्वकारीय इत्युभावपि क्षेत्रे समावेशात्मकशिक्षासंस्थानस्य संगठने बलं प्रदास्यन्ति। येन तेषां समेषां बाधितानां विद्यालये प्रवेशः सुनिश्चितो भवेत्।
4- शारीरिकरूपेण बाधितेभ्यः बालकेभ्यः व्यवसायिकशिक्षणाय संविधानानां विशिष्टिशिक्षासंस्थानामपि अधिकारिणः विधास्यन्ति।

'ब' इत्यस्यामुपयुक्तावुभावपि अधिकारिणः विज्ञापनेन निम्नलिखितानां कार्यक्रमाणां योजनां निर्माष्यन्ति।

1- शारीरिकरूपेण ये अक्षमाः वा बाधिताः बालकाः, ये कक्षा पञ्च यावत् यस्यां कस्यामपि संस्थायां शिक्षां प्राप्तवन्तः एवञ्च केनापि कारणेन पूर्णकालिकीं शिक्षां त्यक्तवन्तः। तादृशेभ्यः बालकेभ्यः अंशकालिकी शिक्षायाः व्यवस्थापनं विधास्यन्ति।
2- षोडशवर्षीयेभ्यः वा तदधिकेभ्यः बालकेभ्यः व्यावहारिकीशिक्षायाः एवञ्च साक्षरतासम्पादनार्थं शिष्टिंशकालिकशिक्षायाः व्यवस्थापनं विधास्यन्ति।
3- अविकसितेषु क्षेत्रेषु यथोपलब्धमानवसंसाधनस्य प्रयोगं कृत्वा उपयुक्ताभिः विन्यासकार्यक्रमाणां संयोजनं नियमानुगुणं ते विधास्यन्ति।
4- तेभ्यः वंचितेभ्यः बाधितेभ्यश्च युक्तविद्यालयेन वा मुक्तविश्वविद्यालयेन शिक्षाप्रदानम्।
5- विद्युतोपकरणैः वा अन्यमाध्यमेन कक्षायां विचारविमर्शयोः सम्पादनम्।
6- सर्वेभ्यः असमर्थेभ्यः शिक्षायै आवश्यकोपकरणानां वितरणम्।

एतानतिरिच्य मानवाधिकारः बालाधिकारः पुनर्वासपरिषदश्च तेषामधिकारसंरक्षणेन सह शिक्षायाः प्रबन्धनं करिष्यन्ति।

संविधानानुसारेण दिव्याङ्गानां बाधितनामक्षमनामसमर्थानाञ्चाधिकारः सामान्यनागरिक इवास्ति। गत्यात्मकेन संविधानेनापि अस्माकं देशे तादृशानां दशा समीचीना नास्ति। अस्य मूलमस्माकं समाजस्य रूढ़ता-कुरीति-कुप्रथा-अविश्वासदयश्च वर्तन्ते। यैः समाजेऽस्मिन् जन्मप्राप्त्वादपि एतादृशाः बालकाः समाजात् पृथक्भूताः भवन्ति। एभ्यः समानोत्तरदायित्वस्य निर्वहणेन अस्माकं राष्ट्रस्य सर्वाङ्गीणविकासः भवितुमर्हति।

वस्तुतस्तु समावेशात्मकशिक्षया न केवलं तेषां लोकतान्त्रिकसहभागितायाः संरक्षणं जयते अपितु अनया सामाजिकजीवनयापनाय तेषु विश्वाससंवर्धनमपि कर्तुं शक्यते।

सन्दर्भग्रन्थसूचि-

1. सामान्वयक- वर्मा, प्रसाद डेंकेश्वर, साव हेमन्तकुमार, विविधता, पुस्तक का नाम-''समावेशी शिक्षा और जेण्डर'', प्रकाशक- राज्यशैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्, छत्तीसगढ़, रायपुर, वर्ष- 2018, संस्करण प्रथम।
2. झांर्मणडा वाचस्पतिनाथः, पोद्दार पब्लिकेशन, तारानगर कालोनी, धित्तूपुर, बी.एच.यू. वाराणसी- 221005, वर्षे- 2015, संस्करण-1
3. गुप्ता, डॉ. एस.पी. गुप्ता. डॉ. अलका, उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, 11, युनिवर्सिटी रोड़, इलाहबाद-2 वर्ष-2014, नवीन संस्करण
4. झा 'मणि' डॉ. वाचस्पतिनाथः, चैबे अनुजकुमारः, शिक्षामंजुषा द्वितीयवर्षः, पोद्दार पब्लिककेशन, तारानगर कलोनी, छित्तूपुर, बी. एच्. यू. वाराणसी, 221005, वर्ष- 2019, संस्करण प्रथम।
5. पाण्डेय डॉ. रामशकल, मिश्र डॉ. करुणाशंकर, भारतीय शिक्षा की सम सामयिक समस्याएँ, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष- 2007-08, संस्करण तृतीय।

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में विभिन्न जाति वर्ग की बालिकाओं की शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन

प्रो0 रीता सिंह
शोध निर्देशक, शिक्षक–शिक्षा विभाग,
तिलकधारी स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
जौनपुर,उत्तर प्रदेश।

राजकुमार सिंह
शोधकर्त्ता, (शिक्षाशास्त्र)
वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय,
जौनपुर, उत्तर प्रदेश।

Article Info
Volume 5, Issue 2

Page Number : 123-130

Publication Issue :
March-April-2022

Article History
Received : 01 March 2022
Published : 17 March 2022

सारांश– शोध पत्र कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में विभिन्न जाति वर्ग की बालिकाओं की शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन करना है। अध्ययनकर्ता द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग कर अध्ययन कार्य में किया है। अध्ययन हेतु गोरखपुर मण्डल के अन्तर्गत कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालयों में अध्ययनरत् बालिकाओं को जनसंख्या के रूप में लिया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श का चयन साधारण यादृच्छिक न्यादर्शन विधि द्वारा किया गया है न्यादर्श के रूप में गोरखपुर जनपद के कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालयों का चयन करते हुए उसमें अध्ययनरत् 450 बालिकाओं (150 पिछड़ी जाति, 150 अनुसूचित जाति/जनजाति तथा 150 अल्पसंख्यक वर्ग) का चयन किया गया है। शैक्षिक समस्या को मापने के लिए डॉ0 बीना शाह एवं डा0 एस0के0 लखेरा द्वारा निर्मित ''एजुकेशनल प्राब्लम्स कोश्चनायर फॉर स्टूडेन्ट्स'' का प्रयोग किया गया है। इस उपकरण का निर्माण शैक्षिक समस्याओं से सम्बन्धित किया गया है। इस प्रश्नावली में कुल 164 कथनों को रखा गया है। प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्ष प्राप्ति हेतु मध्यमान, मानक विचलन, मानक त्रुटि एवं क्रान्तिक अनुपात को आधार बनाया गया है। आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या उपरान्त निष्कर्ष में पाया गया कि–

1. क.गा.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं में शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ सबसे अधिक, पिछड़ी जाति की औसत तथा अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं में निम्न समस्याएँ है।
2. क.गा.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं में समायोजन की समस्या सबसे अधिक, पिछड़ी जाति की औसत तथा सबसे कम समायोजन की समस्या अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं में है।
3. विद्यालय में परीक्षा सम्बन्धी समस्याएँ अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं में पिछड़ी जाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की अपेक्षा अधिक है अर्थात् तीनों में अन्तर है।

मुख्य शब्द– कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय, पिछड़ी,

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

अनुसूचित जाति/जनजाति तथा अल्पसंख्यक वर्ग, छात्राएँ, शिक्षक एवं शिक्षण समस्या, समायोजन तथा परीक्षा सम्बन्धी समस्या, अन्तर।

प्रस्तावना– हमारे देश में महिलाओं के पिछड़ेपन का सबसे बड़ा कारण शिक्षा का अभाव ही है। आज भी शिक्षा देने में लड़के और लड़कियों के बीच भेदभाव किए जाता हैं। एक तरफ लड़कों को आर्थिक निर्भरता प्राप्त करने के लिए शिक्षित किया जाता है, तो दूसरी तरफ लड़कियों को बस कामचलाऊ शिक्षा देने की बात सोची जाती है। यहां बात उन बीस प्रतिशत लोगों की नही की जा रही है, जो अपने बेटे और बेटी की शिक्षा पर समान दृष्टिकोण रखते हैं और दोनो को समान सुविधाएं प्रदान करते हैं, बल्कि यहां बात उन अस्सी प्रतिशत लोगों की हो रही है, जो अभी भी अपनी बेटी को कामचाऊ शिक्षा तक सीमित रखते हैं।

महिला शिक्षा के मामले में अभी भी हमारे देश की स्थिति दयनीय है. प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर तो फिर भी सुधार और सुधार की संभावनाएं थोड़ा संतोष देती है, लेकिन उच्च शिक्षा की स्थिति आज भी बेचैन कर देने वाली है. आज भी कॉलेज और विश्विद्यालयों में लड़कियों की संख्या काफी कम है और जो हैं, उसमें भी अधिकांश कुछ बड़े शहरों तक सीमित है, ग्रामीण क्षेत्र की स्थिति बदतर है।

ग्रामीण और अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में लड़कियों को कॉलेज तक पहुंचाना मुश्किल होता है। इसके दो कारण है– पहला कारण तो परिवार की वह सोच है, जिसके कारण यह समझा जाता है कि लड़कियों को ज्यादा पढ़ाकर क्या करना है। उसे तो शादी करके किसी दूसरे के घर जाना है। लड़कियों को केवल उतना पढ़ा दो, जितना पारिवारिक जिम्मेदारियों के निर्वहन के लिए आवश्यक है। इस सोच के कारण लड़कियों को स्कूल स्तर की शिक्षा तो दिलाई जाती है, लेकिन उच्च शिक्षा दिलाने में रूचि नही दिखाई जाती है।

उच्च शिक्षा तक लड़कियों की पहुंच कम होने का दूसरा कारण सरकार की उपेक्षापूर्ण नीतियां है। इसके लिए सरकार भी उतनी ही जिम्मेदार है, जितना कि समाज की मानसिकता। सरकार ने भी उच्च शिक्षा के क्षेत्र में लड़कियों के लिए द्वार बंद करने में कम भूमिका नही निभाई है। ग्रामीण क्षेत्रों में कॉलेज की संख्या काफी कम है। कालेज या तो जिला मुख्यालय में बनाए जाते हैं, या फिर उसके आस–पास के किसी क्षेत्र में। गांवों से कालेज जाने वाली लड़कियों की भौगोलिक दूरी इतनी होती है कि उसके घर वाले उन्हें कालेज तक जाने की अनुमति देने में कतराते हैं. एक तो कालेज की कमी और दूसरी बात कॉलेज तक जाने के लिए परिवहन साधनो का अभाव, ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न करती है कि लड़कियों के लिए उच्च शिक्षा, कॉलेज का माहौल मिलना दूभर हो जाता है।

वर्तमान स्थिति को बदलना है, तो सरकार की नीतियों और लोगों की मानसिकता में परिवर्तन लाना होगा. सबसे बड़ी जिम्मेदारी सरकार की है. सरकार या तो कॉलेजों की संख्या बढ़ाए, ग्रामीण क्षेत्रों में कॉलेज खुलवाए या फिर कॉलेज तक पहुंचने के लिए परिवहन के साधनो की व्यवस्था करे. अगर केवल शहरों को उच्च शिक्षा का केंद्र बनाया जाता रहा, तो ग्रामीण क्षेत्र की लड़कियों के लिए इसकी प्राप्ति का मार्ग बहुत कठिन हो जाएगा। वहां की लड़कियों को एक साथ दो तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। पहली समस्या सामाजिक मानसिकता के साथ संघर्ष करना, तो दूसरी समस्या कॉलेज की उपलब्धता का कम होना है, जिसके लिए उन्हें बीस–पच्चीस किलोमीटर दूर जाना पड़ता है. इसलिए जरूरी है कि महिला सशक्तीकरण की बात करने वाली सरकार महिलाओं की शिक्षा के प्रति गंभीर हो, उन्हें संसाधन उपलब्ध कराए ताकि सही मायने में सशक्तीकरण हो सके, क्योंकि शिक्षा के बिना सशक्तीकरण तो संभव ही नही है।

समस्या कथन– कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में विभिन्न जाति वर्ग की बालिकाओं की शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन

उद्देश्य–

1. कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की समायोजन सम्बन्धित समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की परीक्षज्ञा सम्बन्धी समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ– अध्ययन में निम्नलिखित परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया है–

1. कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की समायोजन सम्बन्धित समस्याओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की परीक्षज्ञा सम्बन्धी समस्याओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध–विधि– अध्ययनकर्ता द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग कर अध्ययन कार्य में किया है।

जनसंख्या/समग्र– अध्ययन हेतु गोरखपुर मण्डल के अन्तर्गत कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालयों में अध्ययनरत् बालिकाओं को जनसंख्या के रूप में लिया गया है।

न्यादर्श– प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श का चयन साधारण यादृच्छिक न्यादर्शन विधि द्वारा किया गया है न्यादर्श के रूप में गोरखपुर जनपद के कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालयों का चयन करते हुए उसमें अध्ययनरत् 450 बालिकाओं (150 पिछड़ी जाति, 150 अनुसूचित जाति/जनजाति तथा 150 अल्पसंख्यक वर्ग) का चयन किया गया है।

उपकरण– शैक्षिक समस्या को मापने के लिए डॉ0 बीना शाह एवं डा0 एस0के0 लखेरा द्वारा निर्मित ''एजुकेशनल प्राब्लम्स कोश्चनायर फॉर स्टूडेन्ट्स'' का प्रयोग किया गया है। इस उपकरण का निर्माण शैक्षिक समस्याओं से सम्बन्धित किया गया है। इस प्रश्नावली में कुल 164 कथनों को रखा गया है।

प्रयुक्त सांख्यिकी विधियॉं : प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्ष प्राप्ति हेतु मध्यमान, मानक विचलन, मानक त्रुटि एवं क्रान्तिक अनुपात को आधार बनाया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या–

1. कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन –

तालिका – 1

क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याओं के मध्य टी–मान

जाति वर्ग	N	M	S.D.	(M_1~M_2)	σ_D	t-value
पिछड़ी जाति	150	36.53	5.57	4.19	0.94	4.46*
अनुसूचित जाति/जनजाति	150	40.72	10.08			
पिछड़ी जाति	150	36.53	5.57	6.600	1.44	4.58*
अल्पसंख्यक वर्ग	150	29.93	16.79			
अनुसूचित जाति/जनजाति	150	40.72	10.08	10.79	1.6	6.74*
अल्पसंख्यक वर्ग	150	29.93	16.79			

*.05 = सार्थक

क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् पिछड़ी जाति एवं अनुसूचित जाति/ जनजाति की बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याओं का मध्यमान क्रमशः 36.53 एवं 40.72 तथा मानक विचलन क्रमशः 5.57 एवं 10.08 है प्राप्त टी–मान 4.46 जो .05 (5 प्रतिशत) पर सूचक है। अतः अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ पिछड़ी जाति की बालिकाओं की अपेक्षा अधिक है।

क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् पिछड़ी जाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याओं का मध्यमान क्रमशः 36.53 एवं 29.93 तथा मानक विचलन क्रमशः 5. 57 एवं 16.79 है प्राप्त टी–मान 4.58 जो .05 (5 प्रतिशत) पर सूचक है। अतः पिछड़ी जाति की बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की अपेक्षा अधिक है।

क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याओं का मध्यमान क्रमशः 40.72 एवं 29.93 तथा मानक विचलन क्रमशः 10.08 एवं 16.79 है प्राप्त टी–मान 5.74 जो .05 (5 प्रतिशत) पर सूचक है। अतः अनुसूचित जाति/ जनजाति की बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की अपेक्षा अधिक है।

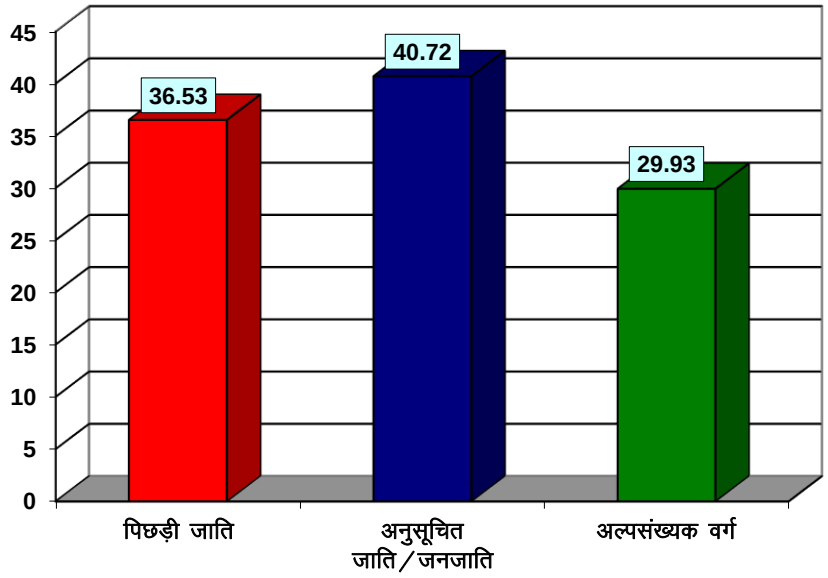

आरेखीय चित्रण–1

क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् बालिकाओं की शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याओं का मध्यमान

2. कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की समायोजन सम्बन्धी समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन–

तालिका – 2

क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् बालिकाओं की समायोजन की समस्या के मध्य टी–मान

जाति वर्ग	N	M	S.D.	$(M_1 \sim M_2)$	σ_D	t-value
पिछड़ी जाति	150	23.97	4.38	5.92	0.72	8.22*
अनुसूचित जाति/जनजाति	150	29.89	7.70			
पिछड़ी जाति	150	23.97	4.38	6.620	1.05	6.30*
अल्पसंख्यक वर्ग	150	17.35	12.06			
अनुसूचित जाति/जनजाति	150	29.89	7.70	12.54	1.17	10.72*
अल्पसंख्यक वर्ग	150	17.35	12.06			

*.05 = सार्थक

क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की समायोजन की समस्या का मध्यमान क्रमशः 23.97, 29.89 एवं 17.35 तथा मानक विचलन क्रमशः 4.38, 7.70 एवं 12.06 है तीन के मध्य प्राप्त टी–मान क्रमशः 8.22, 6.30 एवं 10.72 है जो .05 (5 प्रतिशत) पर सूचक है। अतः अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की समायोजन की समस्या पिछड़ी जाति एवं अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं की अपेक्षा निम्न है।

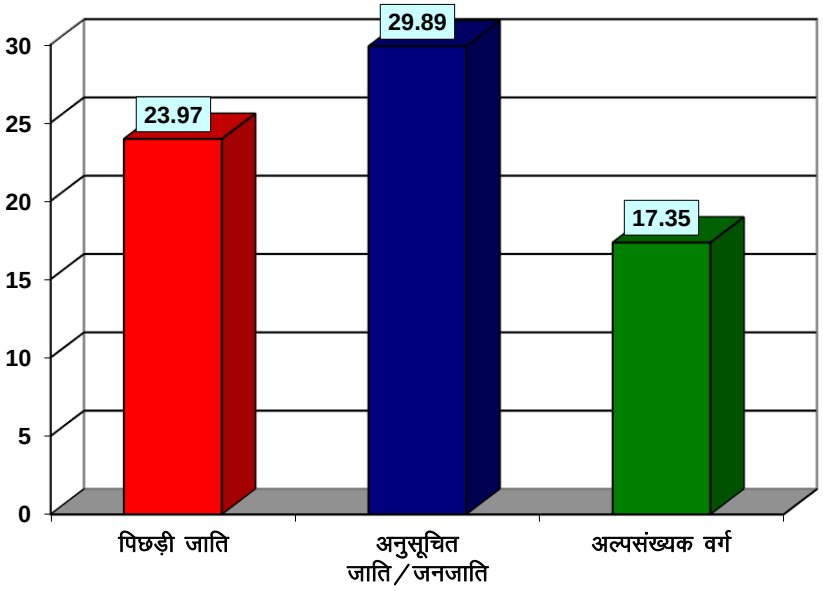

आरेखीय चित्रण–2

***क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् बालिकाओं की समायोजन की समस्या* का मध्यमान**

3. कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों में पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की परीक्षा सम्बन्धी समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन–

तालिका – 3

क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् बालिकाओं की परीक्षा सम्बन्धी समस्या के मध्य टी–मान

जाति वर्ग	N	M	S.D.	$(M_1 \sim M_2)$	σ_D	t-value
पिछड़ी जाति	150	3.54	1.55	0.5	0.19	2.63*
अनुसूचित जाति/जनजाति	150	4.04	1.66			
पिछड़ी जाति	150	3.54	1.55	0.580	0.21	2.76*
अल्पसंख्यक वर्ग	150	2.96	2.09			
अनुसूचित जाति/जनजाति	150	4.04	1.66	1.08	0.22	4.91*
अल्पसंख्यक वर्ग	150	2.96	2.09			

*.05 = सार्थक

क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की परीक्षा सम्बन्धी समस्या का मध्यमान क्रमशः 3.54, 4.04 एवं 3.54 तथा मानक विचलन क्रमशः 1.55, 1.66 एवं 2.09 है। तीनों जाति वर्ग की बालिकाओं का परीक्षा सम्बन्धी समस्या के मध्य प्राप्त टी–मान क्रमशः 2.63, 2.76 एवं 4.91 है जो .05 (5 प्रतिशत) पर सूचक है। अतः तीनों जाति वर्ग की बालिकाओं की परीक्षा सम्बन्धी समस्या में अन्तर है अर्थात् अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं में अन्य दो जाति वर्गों की बालिकाओं की अपेक्षा परीक्षा सम्बन्धी समस्या अधिक है।

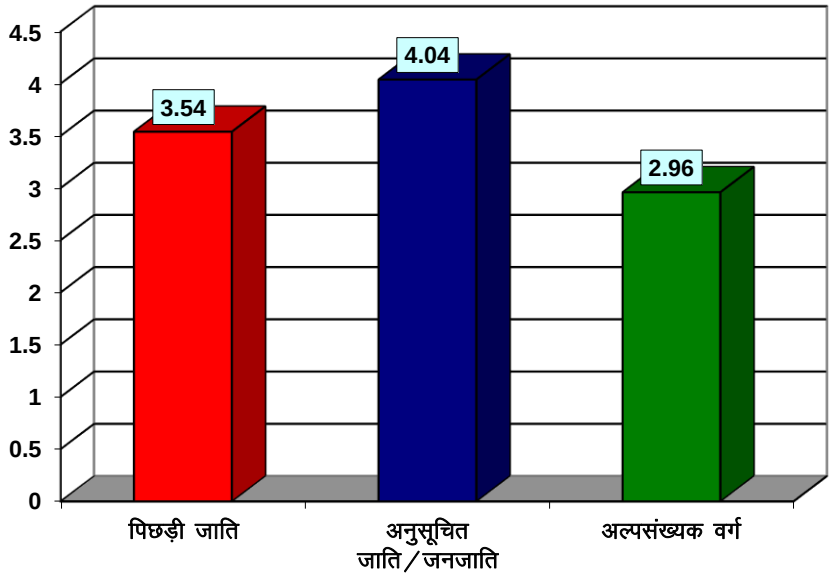

आरेखीय चित्रण–3

***क.गाँ.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् बालिकाओं की परीक्षा सम्बन्धी समस्या* का मध्यमान**

निष्कर्ष– अध्ययनोपरान्त निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–

1. क.गा.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं में शिक्षक एवं शिक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ सबसे अधिक, पिछड़ी जाति की औसत तथा अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं में निम्न समस्याएँ है।
2. क.गा.बा.अ.वि. में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं में समायोजन की समस्या सबसे अधिक, पिछड़ी जाति की औसत तथा सबसे कम समायोजन की समस्या अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं में है।
3. विद्यालय में परीक्षा सम्बन्धी समस्याएँ अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं में पिछड़ी जाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं की अपेक्षा अधिक है अर्थात् तीनों में अन्तर है।

सन्दर्भ सूची

1.गुप्ता, एस.पी. एवं अलका गुप्ता (2009): भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्यायें, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 710–711.

2.गुप्ता, प्राची (2018). अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शिक्षा में सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांसड एजुकेशनल रिसर्च, वॉल्यूम–3, इश्शू–2, पृ0 367–368

3.गुप्ता, राधा एवं उपाध्याय, हिमानी (2016). अनाथ एवं सनाथ विद्यार्थियों की मनोसामाजिक समस्याओं का अधिगम व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिस्पिलनरी रिसर्च एण्ड डेवेलपमेण्ट, वॉल्यूम–3, इश्शू–12, पृ0 215–217

4.जोशी, ललित मोहन (2014). स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शैक्षिक सुधार – समालोचनात्मक अध्ययन, पेरीफेक्स– इण्डियन जर्नल ऑफ रिसर्च, वॉ0 3, इश्शू–2, पृ0 87–89

5.देवी रश्मि एवं मिश्रा, राजन (2015). बालिका शिक्षा की स्थिति एवं विकास में ऑगनबाडी एवं समुदाय की सहभागिता का अध्ययन, एशियन ग्लोबल जर्नल (ए मल्टीनेशनल मल्टीडिस्पिलनरी रिसर्च जर्नल), वॉ0 2, इश्शू–4, पृ0 22–24
6.यादव, नरेन्द्र कुमार सिंह (2000). अनुसूचित जाति के सन्दर्भ में प्राथमिक स्तर पर बालिका शिक्षा की स्थिति : एक अध्ययन, शोध प्रबन्ध (शिक्षाशास्त्र), बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी।
7.यादव, अच्युत कुमार (2013) ने गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार के बच्चों की शिक्षा हेतु किए जा रहे सरकारी प्रयासों का समीक्षात्मक अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

शोधशौर्यम्

Publisher

Technoscience Academy
(The International open Access Publisher)
Website : www.technoscienceacademy.com

Email: editor@shisrrj.com